

**TEXT FLY WITHIN
THE BOOK ONLY**

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182032

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81.092/K18M Accession No. G.H. 376

Author कारुणिक उमरावसिंह ।

Title महाकवि अकबर और उनका काव्य

This book should be returned on or before the date
last marked below. 19

महाकवि अकबर
और
उनका उर्दू काव्य

लेखक
उमरावसिंह कारुणिक बी० ए०
सम्पादक
चौधरी शिवनाथसिंह शाण्डिल्य

भारती एसोसिएशन प्रकाशन
गाज़ियाबाद (उ० प्र०)

प्रकाशक :

श्रीमती रीता चौधरी

भारती एसोसिएशन पब्लिकेशन्स, गाज़ियाबाद, (उ० प्र०)

छठा परिवर्द्धित संस्करण १९५६

मूल्य साढ़े तीन रुपये

Rechecked 1965

मुख्य वितरक :

राजकमल पब्लिकेशन्स,
८, फेज़ बाज़ार, दिल्ली ।

मुद्रक :

श्री गोपीनाथ सेठ,
नवीन प्रेस, दिल्ली ।

दो शब्द

प्रयाग निवासी स्वर्गीय सैयद अकबर हुसैन 'अकबर' उर्दू कविता की जान थे। आप गम्भीर-से-गम्भीर बात को भी बहुत ही थोड़े शब्दों में बड़ी खूबसूरती के साथ कह देते थे। आपके शेरों के विषय में भी हिन्दी महाकवि बिहारी के दोहों के समान यह कहा जा सकता है :—

‘देखन में छोटे लगें घाव करें गम्भीर’

उर्दू के प्रसिद्ध विद्वान् महाकवि हाली कह गये थे—“शायरी मर चुकी ज़िन्दा न अब होगी यारो”, किन्तु अकबर ने हाली साहब के इस कथन को असत्य प्रमाणित कर दिया था। उर्दू-शायरी में एक नया ही जीवन फूँक दिया था। गुले-बुलबुल तथा जुलफ़े इरक़ की बीसवीं सदी की ‘अपटूडेट’ (Up-to-date) पोशाक पहना दी थी।

उर्दू साहित्य में युगान्तर उपस्थित करने वाले इस महाकवि से हिन्दी पाठकों का परिचय कराने के लिए ही यह पुस्तक लिखी गई है। अकबर की कविताओं का संग्रह उर्दू में ‘कुल्लियाते-अकबर इलाहाबादी’ के नाम से चार भागों में प्रकाशित हुआ है। इस पुस्तक में चारों भागों में से चुनकर भिन्न-भिन्न विषयों से सम्बन्ध रखने वाले शेर दिये गए हैं। इन शेरों को देखने से पाठकों को अकबर का पूरा महत्त्व मालूम हो जावेगा। उनका प्रत्येक शेर एक नई अदा लिये हुए है। इसलिए लेखक को इस संग्रह के लिये शेर चुनने में बड़ी कठिनाता हुई है। क्योंकि प्रत्येक शेर को देखकर—

दिले-शौदा मचलता था कि हम तो ये ही लेवेंगे।

अकबर का कहने का ढंग बहुत साफ था। उनके कलाम में ऐसे

शब्द बहुत कम आये हैं, जिनको हिन्दी पाठक न समझ सकें। इसके अतिरिक्त इस संग्रह में ऐसे शेर जान-बूझ कर नहीं लिये हैं जिनमें विशेष कठिन शब्दों का प्रयोग हुआ है। फिर भी पाठकों की सुगमता के लिए प्रत्येक शब्द के नीचे कठिन शब्दों का अर्थ दे दिया गया है।

यदि पाठकों ने इस पुस्तक को अपनाया तो शीघ्र ही हिन्दी प्रेमियों की सेवा में अकबर का सचित्र तथा विस्तृत जीवन-चरित्र उपस्थित करने का विचार है।

लेखक हिन्दी के प्रसिद्ध प्रेमी चौधरी शिवनाथसिंह जी शाण्डिल्य का बहुत ही कृतज्ञ है, जिनकी उदारता के कारण इस पुस्तक को हिन्दी पाठकों के सम्मुख उपस्थित करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

मेरठ
१-१-२२

उमरावसिंह कारुणिक
सम्पादक—‘ललिता’

विषय सूची

क्रम सं०	विषय			पृष्ठ
१.	उर्दू-कविता	...	...	१
२.	जीवन चरित्र	...	...	१३

काव्य

१.	धर्म तत्त्वज्ञान तथा उपदेश	...	...	६१
२.	प्रेम	...	...	८६
३.	हास्य	...	...	१०६
४.	सामयिक घटनाएँ	...	...	१३३
५.	पश्चिमी सभ्यता	...	...	१४४
६.	समाज सुधार तथा आधुनिक शिक्षा	...	...	१५१
७.	राजनीति तथा हिन्दू मुस्लिम एकता	...	...	१५७
८.	विभिन्न	...	...	१६५
९.	गान्धीनामा	...	...	१७६
१०.	परिशिष्ट	...	...	१८१

उर्दू कविता

प्रत्येक देश की कविता उस देश के भूगोल तथा इतिहास का चित्र तथा वहाँ के रस्मों-रिवाज तथा निवासियों के स्वभाव का प्रतिबिम्ब होती है। अतएव किसी भाषा की कविता को भली भाँति समझने के लिए उस देश का इतिहास तथा वहाँ के रिवाजों को जानना अत्यन्त आवश्यक है। महाकवि गालिब का एक शेर है—

क्या रहूँ गुरबत में खुश, जब हो हवादिस का ये हाल ।

नामा लाता है वतन से नामाबर अक्सर खुला ॥

शेर साफ़ है, किन्तु अर्थ समझने के लिए यह जानना आवश्यक है कि फ़ारस में यह दस्तूर है कि बुरी खबर का खत खुला भेजा जाता है।

यद्यपि उर्दू ब्रज-भाषा से निकली है तथा भारतवर्ष की ही गोद में पली है, किन्तु फिर भी उर्दू के कवियों ने फ़ारस तथा तुर्कस्तान के कवियों का अनुकरण किया है। उपरोक्त देशों के विचारों तथा उपमाओं ने उर्दू कविता में इतना जोर पकड़ा है कि उनसे समता रखने वाली भारतीय उपमाओं को बिल्कुल भुला दिया गया है। हाँ, 'सौदा' तथा 'इन्शा' ने कहीं-कहीं भारतीय उपमाओं का प्रयोग अवश्य किया है। यद्यपि भारतवर्ष में बुलबुल नहीं होती है, किन्तु उर्दू कवि के कान में बुलबुल ही का राग गूँजता है। कोयल की कू-कू तथा पपीहे की पी-पी उसे मस्त नहीं कर सकती। उर्दू कविता में बहुत-सी बातें ऐसी हैं जो खास फ़ारस तथा तुर्कस्तान से सम्बन्ध रखती हैं। इसके अतिरिक्त बहुत से विचारों में इन देशों में प्रचलित कथाओं के संकेत भी आ गये हैं। उदाहरणतः, शमशाद, नरगिस, सम्बुल, बनफ़शा तथा सरू की उपमाएं; लैला, शीरी तथा शमश्र का सौन्दर्य; मजन्नूँ, फरहाद, बुलबुल

तथा परवाने का प्रेम; मानी तथा बहज़ाद की चित्रकारी तथा हस्तम की बहादुरी । अस्तु, उर्दू कविता का पूर्ण रूप से रसस्वादन करने के लिए इस प्रकार की बातों का जानना अत्यावश्यक है । इन सब बातों की व्याख्या यहाँ नहीं की जा सकती । ऐसा करने से एक छोटी-सी पुस्तक अलग ही तैयार हो जाय ! अतएव इस लेख में हम हिन्दी पाठकों की सुविधा के लिए उर्दू कविता में प्रयुक्त कतिपय विशेष शब्दों ही पर कुछ प्रकाश डालने का प्रयत्न करेंगे ।

शराब

प्रायः प्रत्येक फ़ारसी के कवि ने शराब की बड़ी प्रशंसा की है । उर्दू कविता भी शराब की प्रशंसा में फ़ारसी से पीछे नहीं है ।^१ किन्तु इससे यह न समझना चाहिए कि ये सब कवि शराबी थे या शराब को बहुत अच्छा समझते थे । इसमें बहुत से कवि बड़े सदाचारी तथा ईश्वर-भक्त हुए हैं । उदाहरणतः फ़ारसी के प्रसिद्ध कवि 'हाफ़िज़', जिनकी कविता आदि से अन्त तक शराब की प्रशंसा से भरी पड़ी है, बड़े महात्मा थे । सुलतान टीपू के पुस्तकालय के सूचीपत्र के सम्पादक चार्ल्स स्टुअर्ट ने लिखा है—“हाफ़िज़ परहेज़गारी में मशहूर है । उसका सारा समय ईश्वर-पूजन में जाता था । ईश्वर-भक्त इसके काव्य को बड़े प्रेम से पढ़ते हैं । इसके काव्य को क़ुरान के अतिरिक्त शेष सब पुस्तकों से ऊँचा स्थान दिया जाता है !

१. मस्ती वो बेख़दी में आसूदगी बहुत थी ।

पाया न चैन हमने तरके-शराब करके ॥

—मीर

लुत्फे-मय क्या कहुँ तुझसे ज़ाहिद ।

हाय कम्बख़्त तूने पी ही नहीं ॥

—दाग़

बात यह है कि फ़ारसी, अरबी तथा उर्दू के कवियों ने शराब की प्रेम से उपमा दी है। शराब पीने पर आदमी के होश-हवास ठीक नहीं रहते। प्रेम में भी ऐसा ही होता है। प्रत्येक समय प्रेम-पात्र का चित्र आँखों के सम्मुख रहता है। उसके अतिरिक्त और किसी बात का ध्यान ही नहीं आता। कोई उपदेशक या मित्र कितना ही क्यों न समझाय, कुछ समझ ही में नहीं आता। उपदेशक के उत्तर में प्रेमान्मत्त यह ही कहता है—

इतना तो बता दे मुझे ए नासहे-मुशफ़ि़क़ ।

देखा है कि उस माहे-लक़ा को नहीं देखा ॥

प्रेम तथा शराब के प्रभाव में इतनी अधिक समता होने के कारण शराब प्रेम का ऐसा उपमान हो गया है कि जहाँ कही शराब की प्रशंसा है वहाँ शराब से प्रेम का मतलब है। केवल इतना ही नहीं वरन् शराब-सम्बन्धी अन्य पदार्थ भी प्रेम ही के द्योतक हैं। उदाहरणतः, साक़ी (शराब पिलाने वाला) से माशूक का मतलब होता है। महाकवि ग़ालिब ने एक स्थान पर साफ़ तौर से लिखा है—

हरचन्द हो मुशाहदये-हक़ की गुफ़्तगू ।

बनती नहीं है बाद़ओ-साग़िर कहे बग़ैर ॥

अर्थात् चाहे ईश्वर-दर्शन ही का विषय क्यों न हो, किन्तु फिर भी कविता में इस विषय पर लिखने के लिए शराब और प्याले का वर्णन करना ही पड़ता है।

आकाश

उर्दू कवियों का विचार है कि आकाश सदैव धूमता रहता है। यह किसी मनुष्य को सुखी नहीं देख सकता है। हमारे सारे दुःखों का कारण आकाश ही है। इस कारण प्रत्येक उर्दू कवि ने आसमान को दो चार जली कटी अवश्य सुनाई है—

ये दो दिल को यकजा बिठाता नहीं ।

किसी का वस्ल इसको भाता नहीं ॥

महाकवि जौक़ मार्ग न मिल सकने के कारण ही आकाश की सीमा से बाहर निकल जाने की इच्छा पूर्ण न कर सके थे ।

अहाते से फ़लक के हम तो कब के ।

निकल जाते मगर रास्ता न पाया ॥

महशर या अन्तिम न्याय का दिन

मुसलमानों का विश्वास है कि एक दिन ऐसा आने वाला है कि संसार का अन्त हो जायगा । उस दिन सूर्य पूर्व के स्थान में पश्चिम से निकलेगा । संसार के आरम्भ से जितने मनुष्य मरे हैं सब ईश्वर के सम्मुख उपस्थित होंगे । फ़रिश्ते (देवदूत) सब मनुष्यों के अच्छे-बुरे कामों की सूची ईश्वर के सामने रखेंगे । ईश्वर सब मनुष्यों का न्याय करेगा । जिसके काम अच्छे होंगे उनको बहिश्त (स्वर्ग) भेजेगा, जहाँ पर शराब की नदियों तथा अप्सराएँ उनको मिलेंगी । जिन मनुष्यों के कर्म अच्छे न होंगे उनको दोज़ख (नर्क) में डाला जायगा, जहाँ बड़ी तेज़ आग जलती है । इस दिन को मुसलमान लोग रोज़े-कयामत या रोज़े-महशर, अर्थात् अन्तिम न्याय का दिन कहते हैं । मुसलमानों का विश्वास है कि ईश्वर बड़ा दयालु है । वह बहुत से पापियों को क्षमा भी कर देगा । इसके अतिरिक्त उन लोगों के विचारानुसार जो मनुष्य तोबा (पश्चात्ताप) कर लेते हैं उनके अपराध भी क्षमा हो जाते हैं । उर्दू कविता में इन विचारों का बहुत उल्लेख है । प्रायः कवियों ने रोज़े-कयामत की दुहाई दी है—

क़रीब है यार रोज़े-महशर छिपेगा कुशतों का खून क्योंकर ।

जो चुप रहेगी ज़बाने-ख़न्जर लहू पुकरेगा आस्ती का ॥

—दाग़

हे ये जुल्म चन्द रोज़ा है एक दिन इन्तक़ाम का भी ।
अमीर हम्माम गर्म करलें ग़रीब का भोंपड़ा जलाकर ॥

—अमीर

उर्दू कवियों को यह आशा रहती है कि महशर के दिन तो अवश्य ही उनका और उनके माशूक का इन्साफ़ हो जायगा । यही सोच कर अपने मन को समझाते रहते हैं । महाकवि ग़ालिब को सन्देह हो गया था कि स्यात् ऐसा न हो । देखिये कैसा खेद प्रकट किया है—

वाये गर मेरा तेरा इन्साफ़ महशर में न हो ।

अब तलक तो ये तबक्के हैं कि वां हो जायगा ॥

शम्स लखनवी का भी इस विषय का एक बहुत अच्छा शेर है जिसकी शाखी तथा सादगी की प्रशंसा नहीं हो सकती—

बरोजे-हश्र शहीदों को है बड़ा दावा ।

मज़ा तो है जो न साबित हो जुर्म क़ातिल पर ॥

बहुत से कवियों ने ईश्वर की दयालुता तथा क्षमा पर भरोसा करके परलोक-चिन्ता को पास नहीं फटकने दिया है—

वो करीम क्या नहीं है वो रहीम क्या नहीं है ।

कभी 'दाश' भूलकर भी न गुमे-निजात करना ॥

महाकवि आतिश तो क्षमा की आशा न रखने वालों को काफ़िर ही बतला गये हैं—

बख़्शे जायँगे गुनहगारे-मोहब्बत अय ज़ाहिद ।

रहमते-अब्लाह से है काफ़िर है जो मायूस है ॥

इश्क़

इश्क़ अर्थात् प्रेम दो प्रकार का होता है—मजाजी और हकीकी । इश्क़े-मजाजी का अर्थ है सांसारिक वस्तुओं या माशूक से प्रेम । इश्क़े-हकीकी ईश्वर-प्रेम को कहते हैं । इश्क़े-हकीकी को इश्क़े-कामिल

भी कहा गया है। सांसारिक माशूक को माशूके-मजाजी कहते हैं तथा उश्वर को माशूके-हकीकी। बहुत से उर्दू कवियों का यह भी विचार है कि इश्के-मजाजी, इश्के-हकीकी की सीढ़ी है।

बुत

बुत का अर्थ है प्रतिमा। अकबर ने निम्नलिखित पद्य में बुत शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में किया है—

काबे से जो बुत निकले तो क्या,
काबा ही गया जब दिल से निकल।
अकसोस कि बुत भी हमसे छुटे,
कब्जे से खुदा का घर भी गया ॥

किन्तु उर्दू काव्य में यह शब्द तथा इसका पर्यायवाची अरबी शब्द 'सनम' अधिकतर माशूक के लिए आता है। माशूक के निवास-स्थान को 'बुतखाना' या 'दैर' कहते हैं। आशिक 'सनम परस्त' या बुत परस्त कहा जाता है। राज-कवि दाग के निम्नलिखित पद देखिये—

कुछ और भी तुझे अय दाग बात आती है।
वही बुतों की शिकायत वही गिला दिल का ॥
जब 'दाग' को ढूँढा किसी बुतखाने में पाया।
घर में कभी उस मरदे-खुदा को नहीं पाया ॥

काफ़िर

कुरान के अनुसार वे लोग काफ़िर हैं जो ईश्वर के अतिरिक्त किसी दूसरे की प्रार्थना इस आशा से करते हैं कि उससे वह प्राप्त हो जो केवल ईश्वर के अधिकार में है। किन्तु उर्दू-कवियों ने इस शब्द का प्रयोग अधिकतर अपने माशूक के लिये किया है—

मोहब्बत में नहीं है फर्क जीने और मरने का।
उसी को देखकर जीते हैं जिस काफ़िर पै दम निकले ॥

किसी-किसी स्थान पर कवियों ने आपको भी 'इश्क का काफ़िर' कहा है—

काफ़िरे-इश्कम मुसलमानी मरा दरकार नेस्त ।

हर रगे-मन तार गश्ता हाज़ते-जुन्नार नेस्त ॥

अर्थात् मैं तो प्रेम का काफ़िर हूँ । मुझे मुसलमान होने की आवश्यकता नहीं है । तेरी तो नस-नस में तार गया हुआ है, मुझे जनेऊ पहनने की आवश्यकता नहीं है ।

वाइज़ या नासह

वाइज़ या नासह का अर्थ है धर्मोपदेशक, किन्तु उर्दू कविता में यह शब्द उन मनुष्यों के लिए आता है जो जाहिरी ढोंग ही को धर्म समझते हैं तथा जाहिरी ढोंग को न मानने वाले ईश्वर-भक्तों को पथ-भ्रष्ट समझकर उनको उपदेश देते हैं । प्रायः प्रत्येक उर्दू-कवि ने वाइज़ या नासह की खुशकी उड़ाई है—

कहाँ मयख़ाने का दरवाज़ा 'ग़ालिब' और कहाँ वाइज़ ।

पर इतना जानते हैं कल वो जाता था कि हम निकले ॥

—ग़ालिब

शेख़ तथा ज़ाहिद

शेख़ बजुर्ग को कहते हैं । ज़ाहिद का वास्तविक अर्थ है परहेज़गार; किन्तु उर्दू-कवियों ने अधिकतर पाखण्डी मनुष्यों के लिए इन शब्दों का प्रयोग किया है । इसी कारण उर्दू कविता में स्थान-स्थान पर शेख़ तथा ज़ाहिद की हंसी उड़ाई गई है—

हुआ है चार सिजदों पर ये दावा, ज़ाहिदो, तुमको ।

ख़ुदा ने क्या तुम्हारे हाथ जन्नत बेच डाली है ॥

किसी की तो ज़ाहिद की होती मोहब्बत ।

बुतों की न होती, ख़ुदा की तो होती ॥

ये शेख़जी जो सुसल्ला बिछाये बैठे हैं ।
 बुतों की याद में आसन जमाये बैठे हैं ॥
 किसी पर मर मिटे होंगे, मये गुलगूँ भी पी होगी ।
 जवानी में जनाने शेख़ ने क्या कुछ न की होगी ॥
 शेख़ इस रेशे-मुक़त्ता पै ये झूठी बातें ।
 शर्म भी तुझको कुछ, मरदे-ख़ुदा नहीं आती ॥
 अकबर ने 'शेख़' शब्द का दोनों अर्थों में प्रयोग किया है ।

सूफ़ी

सूफ़ी शब्द स्यात् अरबी शब्द 'सूफ़' से निकला है । 'सूफ़' के अर्थ ऊन और पश्मीने के हैं । ईरान में साधु बहुधा ऊनी वस्त्र पहना करते हैं । यह भी सम्भव है कि यह शब्द फ़ारसी शब्द 'सूफ़' (साफ़ तथा दुष्प्राप्य) या यूनानी शब्द 'सूफ़िया' (बुद्धिमत्ता) से निकला हो । सूफ़ियों का मत (तसव्वुफ़) वेदान्त से बहुत-कुछ मिलता है । सूफ़ियों का कहना है कि सब आत्माएं ईश्वर से निकली हैं और अन्त में उसी की ओर फिर लौट जायेंगी । जो कुछ उसने बनाया है सब में उसी की आत्मा है और वही उसमें है । ईश्वर-प्रेम के अतिरिक्त सब बातें व्यर्थ हैं । संसारिक जीवन माशूक़ (ईश्वर) की जुदाई का जमाना है । कट्टर मुसलमान सूफ़ियों को रिन्द-मज़हबी बातों का न मानने वाला कहते हैं । किन्तु फ़ारसी तथा उर्दू के प्रायः सभी कवियों ने सूफ़ियों का अनुकरण करने ही में अपना गौरव समझा है और अपने लिए निर्भीक अर्थ में रिन्द शब्द का प्रयोग किया है ।

बिरहमन

बिरहमन शब्द का उर्दू कवियों ने बहुत प्रयोग किया है । उर्दू कविता में यह सौन्दर्योपासक या सूफ़ी के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है ।

शीरीं और फ़रहाद

शीरी अपने समय की ईरान की बहुत ही रूपवती महिला थी। फ़रहाद एक चीनी चित्रकार था। दोनों एक-दूसरे पर मोहित थे। ईरान का बादशाह ख़ुसरू भी शीरी पर मोहित हो गया और जिस प्रकार बना उसको महल में ले आया। किन्तु शीरीं सदैव फ़रहाद की याद में रोती रहती थी। एक दिन ख़ुसरू ने शीरीं से कहा, “यदि फ़रहाद को तुम्हसे सच्चा प्रेम है तो मुझे उसकी परीक्षा करा दे।” शीरी ने कहा, “किस प्रकार?” बादशाह ने कहा, “फ़रहाद से कह कि पहाड़ से महल तक एक नहर निकाल दे।” शीरीं ने कहा, “यदि उसने ऐसा कर दिया तो क्या पुरस्कार?” बादशाह ने उत्तर दिया, “मैं तुम्हें ही पुरस्कार रूप में उसे दे दूँगा।” शीरी के कहने से फ़रहाद ने नहर खोद दी। अब तो बादशाह बहुत घबराया। उसने फ़रहाद के पास कहला भेजा कि शीरी मर गई। यह सुनते ही फ़रहाद ने आत्म-हत्या कर ली। जब शीरीं को इस बात का पता चला तो उसने भी आत्म-हत्या कर ली।

कैस (मजनूँ) और लैला

कैस, जो मजनूँ के नाम से प्रसिद्ध है, अरब के नज्द नामक प्रांत का रहने वाला था। यह लैला नामक एक अरब रमणी के प्रेम में इतना उन्मत्त था कि तन-बदन की भी कुछ सुध न रखता था। उर्दू के अधिकांश कवियों ने फ़रहाद और मजनूँ की बराबरी की है या इनसे भी बढ़कर होने का दावा किया है :—

कैसो-फ़रहाद के किस्से तो सुना करते हो लेकिन।

दाद दो इसकी हमने तुम्हें चाहा कैसा ॥

यूसुफ़ और जुलैखा

यूसुफ़ मुसलमानों के एक पैगम्बर थे। आप किनान देश के रहने वाले थे। कहा जाता है कि संसार का तीन-चौथाई सौन्दर्य आपके हिस्से

में आया था । आपके भाइयों ने ईर्ष्या के कारण आपको एक मिस्त्र के सौदागर के हाथ बेच दिया था । उस सौदागर ने मिस्त्र पहुँच कर आपको वहाँ के राजा के हाथ बेच दिया । उसकी स्त्री आपके सौन्दर्य पर आसक्त हो गई । उसने आपको वशीभूत करने का बहुत-कुछ प्रयत्न किया किंतु आप उसकी बातों में क्यों आने वाले थे । चिड़ कर उसने आपको बन्दी-गृह में डलवा दिया और अनेक कष्ट दिये । अंत में राजा को सच-सच हाल मालूम हो गया । उसने आपको अपना युवराज बना लिया । कुछ दिनों बाद आप मिस्त्र के राजा हो गए । आपके विरह में रोते-रोते आपके पिता याकूब की आँखों की ज्योति जाती रही थी । यह समाचार सुनकर उनकी आँखों में फिर से ज्योति आ गई । उर्दू कवियों ने अपनी कविता में मिस्त्र के बन्दीगृह, हज़रते-याकूब की आँखों की ज्योति तथा यूसुफ के सौन्दर्य का बहुत वर्णन किया है और अपने माशूक को यूसुफ के नाम से पुकारा है —

तुम वो यूसुफ हो कि अच्छा भी तमाशाई हो ।

दीदये-हज़रते—याकूब की बीनाई हो ॥

खिज़्र

हज़रते-खिज़्र मुसलमानों के एक पैगम्बर थे । मुसलमानों का विश्वास है कि आप अब तक जीवित हैं और भूले-भटकों को रास्ता बताते हैं महाकवि दाग का शेर है —

हम एक रस्ता गली का उसकी दिखाके दिल को हुवे पशेमां ।

ये हज़रते-खिज़्र को जता दो किसी की तुम रहबरी न करना ॥

मन्सूर

मन्सूर ईरान देश का एक सूफ़ी था । उसको “अहं ब्रह्म” का ज्ञान हो गया था, और वह ‘अनल हक’ अर्थात् ‘मैं खुदा हूँ’ या खुदा से मिल गया हूँ’ कहा करता था । उस समय के मौलवी इस तत्त्व

को कहाँ समझ सकते थे। उस पर नास्तिकता का अभियोग लगाया गया और उस को फाँसी दे दी।

शैतान

जब खुदा ने आदम को पैदा किया तो फ़रिश्तों को हुक्म दिया कि इसको सिजदा करो। शैतान के अतिरिक्त सब फ़रिश्तों ने सिजदा किया। शैतान बोला, 'तूने मुझे आग से पैदा किया है। आदम को मिट्टी से बनाया है। मैं आदम को सिजदा क्यों करूँ?' खुदा को शैतान का यह गर्व बुरा मालूम दिया। उसने शैतान को बहिश्त से निकल जाने की आज्ञा दी। शैतान ने अपनी पूजा का पुरस्कार मांगा। ईश्वर ने कहा, 'मांग क्या मांगता है?' शैतान ने जवाब दिया, 'मुझे कयामत के दिन तक का जीवन मिल जाय।' खुदा ने यह बात स्वीकार कर ली। अब शैतान खुशी से उछला और बोला, 'अब मैं तेरे बन्दों को बहकाया करूँगा।' खुदा ने कहा, 'जो मेरे भक्त हैं कदापि तेरे बहकाये में नहीं आयेंगे।'

आदम और हव्वा

मुसलमानों के अनुसार आदम वह सबसे पहला मनुष्य है जिसको खुदा ने बिना मां-बाप के पैदा किया था। हव्वा उसकी स्त्री का नाम था। दुनिया में आने से पहले ये दोनों बहिश्त में रहते थे। ईश्वर ने इनको गेहूँ के पेड़ का फल खाने के लिए मना कर दिया था। शैतान ने अवसर पाकर हव्वा को गेहूँ के वृक्ष का फल स्वयं खाने तथा अपने पति को खिलाने के लिए बहकाया। हव्वा उसके बहकाये में आ गई। इस पर खुदा ने क्रुद्ध होकर उन्हें बहिश्त से निकाल दिया। महाकवि गालिब ने निम्नलिखित शेर में इसी घटना की ओर इशारा किया है —

निकलना खुद से आदम का सुनते आये थे लेकिन ।
बहुत बे आबरू होकर तेरे कूँचे से हम निकले ॥

ईसा या मसीह

ईसाई धर्म के संचालक ईसा को मुसलमान भी एक पैगम्बर मानते हैं । ईसा के विषय में यह प्रसिद्ध है कि वह प्रत्येक प्रकार के रोगी को अच्छा कर देते थे, यहाँ तक कि मुर्दों को भी जिला देते थे । माशूक की कृपा दृष्टि से आशिक का सारा रोग दूर हो जाता है । इस कारण उर्दू-कवियों ने अपने माशूक को ईसा या मसीह के नाम से पुकारा है ।

वादा है मेरे मसीहा से यहाँ आने का ।

एक दम और न आये जो अजल आई हो ॥



महाकवि अकबर

हैं और भी दुनिया में सखुनवर बहुत अच्छे ।
कहते हैं कि ग़ालिब का है अन्दाजे-बयां और ॥

—ग़ालिब ।

यों तो उर्दू में ग़ालिब आदि अनेक एक-से-एक बढ़कर कवि हुए हैं, किन्तु प्रयाग-निवासी स्वर्गीय अकबर भी अपने ढंग के अद्वितीय तथा अनुपम कवि थे । आपने उर्दू-कविता को गुलुबुलबुल तथा जुल्फों के फन्दे से निकालकर समय के अनुसार उसमें एक प्रकार का नया जीवन डाल दिया था । अकबर केवल कवि ही नहीं थे वरन् बड़े तत्त्ववेत्ता तथा धार्मिक पुरुष भी थे । आपके प्रत्येक शेर से सजीवता के साथ साथ सुधार तथा धार्मिक विचार टपकते हैं । जिस रङ्ग में आपने कविता की है, उस रङ्ग में उर्दू तो क्या अन्य किसी भी देशीय भाषा के किसी कवि ने नहीं की । आपने एक नई ही शैली की कविता की और स्यात् उस शैली को अपने ही साथ ले भी गये ।

तेरे बाद 'अकबर' कहाँ ऐसी नज़में ।

वो दिल ही न होंगे कि ये आह निकले ॥

जो काम अच्छे-अच्छे वक्ताओं की लम्बी-चौड़ी वक्तृताएँ नहीं कर सकतीं, वह काम आपका शेर कर सकता है । सच तो यह है कि आपने गागर में सागर बन्द कर दिया है । आपको अपने समय का उर्दू का सबसे बड़ा कवि कहना अत्युक्ति न होगी ।

आपका जन्म सन् १८४६ ई० में प्रयाग से दस-बारह कोस की दूरी पर बारा नामक क़स्बे में हुआ था । आप सय्यद रिज़वी वंश मे से थे ।

आपके पिता सत्यद तफ़्ज्जुल हुसैन बड़े ही धार्मिक पुरुष थे। आप पर भी अपने पिता के धार्मिक जीवन का बड़ा प्रभाव पड़ा था।

आपकी आरम्भिक शिक्षा बहुत ही साधारण हुई थी। आपके पिता का विचार था कि दो बातों की शिक्षा ही आवश्यक है, एक तो व्याकरण की तथा दूसरे गणित-शास्त्र की। इस कारण आरम्भ में आपको साधारण गणित सिखाया गया था, तथा कुछ अरबी, फ़ारसी की पुस्तकें और व्याकरण पढ़ाया गया था। उस समय किसी को ध्यान भी नहीं हो सकता था कि यह लड़का एक दिन उर्दू का महाकवि हो जायगा। किन्तु कविता पुस्तकों के अध्ययन से नहीं आती। अंग्रेजी की कहावत ठीक ही है—

Poets are born not made.

अर्थात् कवि उत्पन्न होते हैं, बनाये नहीं जाते।

चौदह वर्ष की अवस्था में आपको अंग्रेजी का भी शौक हुआ। घर पर ही आपने अंग्रेजी की अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। यह वह समय था जब अरबी, फ़ारसी जाननेवाले राह चलते मिलते थे, किन्तु अंग्रेजी जानने वाला कठिनता से कहीं दिखाई पड़ता था। सन् १८६७ ई० में आपने वकालत की परीक्षा पास करली। उन दिनों वकालत की परीक्षा में बैठने के लिए एन्ट्रेंस आदि किसी अन्य परीक्षा पास करने की क़ैद नहीं थी। परीक्षा पास करने के दो वर्ष बाद आप नायब तहसीलदार हो गये। इसके एक वर्ष पश्चात् ही आप हाईकोर्ट के मिस्त्र पढ़ने वाले नियत कर दिये गए। सन् १८८१ ई० में आपको मुन्सफ़ी का पद मिल गया। आप अपने कार्य को बड़ी योग्यता तथा ईमानदारी से करते थे। इस कारण आपकी ख्याति सरकार तक पहुँच गई थी। आप सन् १८८८ ई० में सदर उल् सदूर हो गये। इसके पश्चात् शीघ्र ही सन् १८९२ ई० में आप अदालत खफ़ीफ़ा के जज नियत कर दिये गए। सन् १८९४ ई० में आपने डिस्ट्रिक्ट सेशन जज का भी काम किया। सन् १८९८ ई० में सरकार ने आपको 'खान बहादुर' की पदवी देकर अपनी गुण-ग्राहकता

का परिचय दिया। किन्तु सरकार से सम्मान पाने से आपको कुछ प्रसन्नता नहीं होती थी। एक स्थान पर आपने लिखा है—

नेशनल वक्रात के गुम होने का है 'अकबर' को शम।

आफिशल इज्जत का उसको कुछ मज्जा मिलता नहीं ॥

आप हाईकोर्ट के जज भी होने वाले थे। किन्तु सन् १९०२ ई० में आप 'रिटायर' हो गये और पेन्शन लेली। आपका कहना था—

जज बनाकर अच्छे अच्छों का लुभा लेते हैं दिल।

हैं निहायत खुशनुमा दो 'जीम' उनके हाथ में ॥

किन्तु आप पहले ही से सचेत थे और इस जाल में नहीं फंसे। पेन्शन लेने के बाद आप प्रयाग में अपनी 'इशरत मञ्जिल'^१ नामक कोठी में रहने लगे। परन्तु सुख-पूर्वक जीवन व्यतीत करना आपके भाग्य में नहीं बदा था। आपको मोतियाबिन्द का रोग हो गया।

सात वर्ष तक आप इस रोग से पीड़ित रहे। सन् १९०९ ई० में आपने कलकत्ता जाकर 'नशतर' लगवाया जिसके कारण आपकी आंखों में फिर ज्योति आ गई। किन्तु कालचक्र ने फिर भी चैन न लेने दिया। कोई दस ही महीने बाद २४ अक्टूबर, सन् १९१० ई० को आपकी धर्म-पत्नी का स्वर्गवास हो गया। थोड़े ही दिनों बाद आपका जवान बेटा हाशिम, जिसे आप बड़ा प्यार करते थे, काल का ग्रास होगया।

आगोश से सिधारा मुझ से ये कहने वाला।

अब्बा सुनाइये तो क्या आपने कहा है ॥

अशआरे हसरत-आगीं कहने की ताब किसको।

अब हर नज़र है नौहा हर सांस मरसिया है ॥

१. आपने अपने बड़े लड़के सय्यद इशरत हुसैन बी० ए० (कैण्टव) के नाम पर अपनी कोठी का नाम 'इशरत मञ्जिल' रखा था।

आपने इन सब आपदाओं को अत्यन्त धैर्य-पूर्वक सहा और मृत्यु-पर्यन्त ईश्वराधना तथा कविता देवी की उपासना में लगे रहे । ६ सितम्बर सन् १९२१ ई० को ७५ वर्ष की अवस्था में उर्दू-साहित्य का यह सूर्य सदैव के लिए अस्त होगया ।

हक़ मश़क़रत करे अज़ब आज़ाद मर्द था ।

कविता

आरम्भ में अकबर प्राचीन शैली के अनुसार 'ग़ज़ल' ही लिखा करते थे । प्रयाग के एक उर्दू-कवि 'वहीद' आपके काव्य गुरु थे । सबसे पहले २१ वर्ष की अवस्था में आपने मुशायरे में ग़ज़ल पढ़कर अपनी कवित्व-शक्ति का परिचय दिया । पाठकों के विनोदाथं हम उस ग़ज़ल के पाँच चार शेर नीचे देते हैं—

समझे वही उसको जो हो दीवाना किसी का ।
 अकबर ये ग़ज़ल मेरी है अफ़साना किसी का ॥
 गर शेख़ो-बिरहमन सुनें अफ़साना किसी का ।
 माविद न रहे काबा वो बुतख़ाना किसी का ॥
 अल्लाह ने दी है जो तुम्हें चाँद सी सूरत ।
 रोशन भी करो जाके सियहख़ाना किसी का ॥
 अशक़ आँखों में आजयें एवज़ नौद के साहब ।
 ऐसा भी किसी शब सुनो अफ़साना किसी का ॥
 हम जान से बेज़ार रहा करते हैं 'अकबर' ।
 जब से दिले बेताब है दीवाना किसी का ॥

आठ दस वर्ष तक आप इसी रंग में कविता करते रहे । किन्तु आप की प्रतिभा ग़ज़ल की चारदीवारी में बंद रह सकती थी । महाकवि ग़ालिब के कथनानुसार :—

बक्रद्र शौक्र नहीं जर्फे-तंगनाये-गज़ल ।

कुछ और चाहिए वसअत मेरे बयां के लिए ॥

अर्थात् जो कुछ मुझको लिखना है वह गज़ल में नहीं लिख सकता ।
अतएव अब कोई और शैली ग्रहण करनी चाहिए ।

सन् १८७६ ई० में लखनऊ से 'अवध पंच' नामक पत्र प्रकाशित होना आरम्भ हुआ । इस पत्र में उस समय के प्रायः सभी विख्यात लेखक समाज, दर्शन, राजनीति आदि गूढ़ विषयों पर हास्य-रस-पूर्ण लेख लिखा करते थे । आपने भी अपना रंग बदला और 'अवध-पंच' के लिए गद्यात्मक तथा पद्यात्मक लेख लिखने लगे । आपने अपनी एक नई शैली निकाली और उसमें प्रशंसनीय सफलता भी प्राप्त की । यद्यपि आपकी पुरानी शैली की गज़लें भी खूब हैं, किन्तु फिर भी आपका पुरानी शैली का काव्य आपके नई शैली के काव्य के सामने बिलकुल फीका है ।

अकबर ने प्रेम, धर्म, समाज-सुधार, राजनीति आदि सब ही विषयों पर कविता की है, स्यात् ही कोई ऐसी राजनीतिक या सामाजिक समस्या हो जिस पर आपने अपनी चित्ताकर्षक तथा अनुपम युक्तियों द्वारा यथोचित प्रकाश न डाला हो ।

१—हास्य तथा जिन्दा दिली

अकबर बड़े ही जिन्दा दिल मनुष्य थे । रोटों को हँसा देना और मुझिये हुए दिलों को खिला देना इनके बायें हाथ का काम था । आप इस बात के मानने वाले थे—

जिन्दगी जिन्दा दिली का नाम है ।

मुरदा दिल खाक जिया करते हैं ॥

एक बार आप अपने लड़के इशरत अली से, जो सीतापुर में डिप्टी कलक्टर थे, मिलने गये थे । अकबर सादा कपड़े पहना करते थे । इस कारण डिप्टी साहब के मित्र आपको कोई साधारण मनुष्य समझकर

आपकी ओर से उदासीन से रहे। उन मित्रों में एक अकबर को पहचानने वाले भी थे। उन्होंने चुपके से अपने साथियों को संकेत किया कि आप डिप्टी साहब के पिता हैं। यह बात मालूम होने पर तो डिप्टी साहब के मित्र आपके साथ बड़े आदर-सत्कार के साथ बातें करने लगे। अकबर सब बातें ताड़ गये थे, किन्तु चुप रहे और कुछ न बोले। थोड़ी देर बाद बातों-बातों में आपने कहा—“मियाँ! और भी कुछ मालूम है? सुना है यूरूप में अल्लाह मियाँ आये हैं।” सब लोग अकबर की ओर आवाक् दृष्टि से देखने लगे। आपने फिर कहा—“हाँ! मुझे बहुत ही विश्वसनीय सूत्र से पता चला है। और एक बात और मजे की हुई। यूरूप में किसी ने अल्लाह मियाँ की बात तक न पूछी। इतने में किसी आदमी ने बतलाया कि अल्लाह मियाँ खुदावन्द यूसू मसीह के पिता हैं। यह बात मालूम होने पर अल्लाह मियाँ की बड़ी आवभगत हुई।”

अकबर ने उपरोक्त बातें बड़े गम्भीर भाव से इस प्रकार कहीं मानो किसी विश्वसनीय समाचार-पत्र का समाचार-कालम पढ़ रहे हों। किन्तु डिप्टी साहब के मित्र समझ गये कि संकेत हमारी ही ओर है और लज्जा के कारण सब की नीची निगाहें हो गई।

एक और घटना सुनिए। प्रयाग की प्रदर्शनी में भारतवर्ष में पहले-पहल वायुयान आये थे। जिस समय आकाश में वायुयान उड़ने का शब्द हुआ तो अकबर अपने मित्र श्रीयुत ख्वाजा हसन निजामी को साथ लेकर छत पर गये और वायुयान को उड़ता देखकर बोले—“तुम समझे भी अंग्रेज लोग क्या कहते हैं?” ख्वाजा साहब ने जवाब दिया कि वे कुछ नहीं समझे। आपने कहा—“अंग्रेज लोग कहते हैं, ‘अब हम उड़ते हैं।’ भाई हम कब मना करते हैं। खुशी से उड़ो।”

इस प्रकार अकबर का सारा जीवन लतीफों से भरा पड़ा है। यदि सब लतीफों का वर्णन किया जाय तो एक बड़ी पुस्तक अलग तैयार हो जाय। अकबर की कविता की लोकप्रियता का रहस्य ही यह है कि आपकी कविता के शब्द-शब्द से रस निकलता है।

सन् १९२० की बात है। देश में असहयोग आन्दोलन जोरों पर था। भारत-सरकार इस आन्दोलन को दबाने के लिए तरह-तरह की युक्तियों से काम ले रही थी। हजारों भारतीयों को जेलखाने में डाल दिया गया था। 'अमन सभाओं' के नाम से सरकार-परस्तों की सभाएँ कायम की गई थीं, जिनका उद्देश्य इस आन्दोलन के विरुद्ध काम करना था। संयुक्त प्रान्त में मिस्टर जे० ई० गौज, आई० सी० एस०, नामक सज्जन पब्लिसिटी आफिसर थे।

असहयोग आन्दोलन के विरुद्ध प्रचार करना इस महकमे का खास काम था। मिस्टर गौज महाकवि अकबर और उनकी भावपूर्ण कविताओं से अच्छी तरह परिचित थे। देशों के उत्थान और पतन में कवियों का बहुत बड़ा भाग रहा है। इस बात को भी वे अच्छी तरह जानते थे। अतः मिस्टर गौज ने सोचा कि कवि अकबर से कुछ ऐसी कविताएँ लिखाई जायँ, जिनसे असहयोग आन्दोलन के विरुद्ध प्रचार करने में सहायता मिल सके।

अकबर राजनीति पर जो कुछ लिखते उसे प्रकाशित न कराते थे, बल्कि बहुत छिपाकर रखते थे। मिस्टर गौज को मालूम न था कि हजरत अकबर दिल से असहयोग के समर्थक बन चुके हैं।

कवि अकबर को सरकार से पेन्शन भी मिलती थी, इसलिए मिस्टर गौज को पूरी आशा थी कि वे (अकबर) उनकी बात न टाल सकेंगे। अतः उन्होंने अपना एक मुख्य कर्मचारी हजरत अकबर के पास भेजा। इन दिनों बुढ़ापे की कमजोरी के कारण अकबर का स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता था। जिस वक्त सरकारी कर्मचारी उनके पास पहुँचा वह चारपाई पर लेटे हुए थे। मिस्टर गौज की फरमायश का हाल सुनकर उन्होंने उस कर्मचारी की ओर आश्चर्य से देखा और कहा—

कहाँ के गौज कहाँ के गांधी।

आ गई अब तो मौत की आँधी ॥

महाकवि अकबर का यह शेर सुनकर पास बैठे हुए लोग हँसने लगे,

और वह सज्जन वहाँ से भेँपकर चले गए। इस घटना का उसी दिन काफी चरचा हो गया और मिस्टर गोज को बहुत लज्जित होना पड़ा।

एक और लतीफा सुनिये। महाकवि अकबर के साहबजादे मौलवी इशरत हुसेन साहब (रिटायर्ड कलक्टर) फरमाते थे कि एक बार प्रयाग में कृषि प्रदर्शनी हुई थी। खान बहादुर मिस्टर मोहम्मद हादी डिप्टी कमिश्नर उक्त प्रदर्शनी के मुख्य प्रबन्धकों में से थे। वे वालिद साहब के वाक्किफकार थे। जब एक दिन शाम को मैं नुमायश देखने जाने लगा और वालिद से इजाजत चाही तो कुछ सोचकर वे मुस्कराये और कहा—“अच्छा, वहाँ तुम्हें हादी साहब मिलेंगे, मैंने एक शेर कहा है उन्हें सुना देना।”

हादिये दीं तो नुमायश में कोई था ही नहीं,

हादिये-दुनियाँ थे वह हल जोतना सिखला गये।

जब मैंने हादी साहब को यह शेर सुनाया तो वे बहुत हँसे और इसे पढ़कर बहुत देर तक लुत्फ लेते रहे।

अकबर वास्तव में आशुकवि थे। मौके-मौके पर हस्व हाल शेर कहने और चमत्कार पूर्ण उत्तर देने में उन्होंने कमाल हासिल किया था। उर्दू भाषा के घुरन्धर लेखक और हजरत अकबर के घनिष्ठ मित्र ख्वाजा हसन निजामी साहब कहते थे कि एक बार हजरत अकबर मेरे मकान पर बैठे हुए थे। मेरी बच्ची हूरबानू आलुश्रों से खेल रही थी। हजरत अकबर ने पूछा, “हूर, यह आलू कौन लाया था?” हूरबानू ने जवाब दिया—“मेरे खालू लाये थे।” हजरत अकबर ने कहा—

लाये हैं खरीद कर बाजार से आलू अच्छे,

इसमें शक नहीं है कि हैं हूर के खालू अच्छे।

ख्वाजा साहब ने हजरत अकबर की हाजिर जवाबी का एक और मजेदार किस्सा सुनाया था। ख्वाजा साहब एक मशहूर पीर थे। उनके मुरीदों में सेठ-साहूकार, अमीर-गरीब, स्त्री-पुरुष सभी तरह के लोग थे।

एक दिन कुछ वेश्यायें उनकी जियारत के लिए आई हुई थीं। इत्तिफाक से हज़रत अकबर भी उस समय ख्वाजा साहब के पास बैठे थे। जब वे वेश्यायें चली गई, तो हज़रत अकबर ने व्यंग करते हुए फरमाया—
“ख्वाजा साहब ! मेरा तो अब तक यही ख्याल था कि जनाब के पास सिर्फ ‘जिन’ ही आते हैं, लेकिन आज मालूम हुआ कि हूरें भी हाज़िरी देती हैं।”

सन् १६११ की प्रयाग की नुमायश में कलकत्ते की प्रसिद्ध नर्तकी गौहरजान को भी बुलाया गया था। उन दिनों बोलते फिल्म और रेडियो नहीं थे, लेकिन गौहरजान की शोहरत सारे हिन्दुस्तान में फैली हुई थी। जब हज़रत अकबर के एक दोस्त ने उनसे गौहरजान की नृत्य-कला और गायन-विद्या की तारीफ की, तो हज़रत अकबर ने फरमाया—

खुश नसीब आज यहाँ कौन है गौहर के सिवा,
सब कुछ अल्लाह ने दे रखा है शौहर के सिवा।

जरा शौहर (पति) शब्द पर गौर कीजिए। कितना हास्य, व्यंग और चमत्कार भरा हुआ है ?

लार्ड कर्जन ने अपनी एक स्पीच में हिन्दुस्तानियों को भूठा बतलाया था। अकबर उस समय लखनऊ में थे। जब उन्होंने यह स्पीच सुनी, तो बोले—भाई क्या बात है। तुम भी लार्ड करज़न से जाकर कह दो—

झूठे हैं हम तो आप हैं झूठों के बादशाह।

महाकवि अकबर ने अपनी कविता में उर्दू लफ्जों के साथ अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग इस खूबसूरती से किया है कि कविता में अपूर्व माधुर्य पैदा हो गया है। इस काम में उन्हें ऐसा कमाल हासिल था कि आज तक दूसरे कवि को नसीब नहीं हुआ। इस तरह के उनके अनेक शेर हैं। एक बड़ी मनोरञ्जक घटना है। अवध के एक मशहूर मुसलमान शिया अक़ीदा रखते थे, उसके बाद वे सुन्नी हो गये और फिर थोड़े दिनों बाद

अपने को शिया कहने लगे। इन हज़रत के सम्बन्ध में अकबर ने कहा था —

मुजक्कर के लिए ही है,
मुअन्नस के लिए शी है।
मगर हज़रत, मुखन्नस हैं,
न हीअों में, न शीअों में।

अकबर साहब कहते हैं कि मुजक्कर (पुलिङ्ग, पुरुष) के लिए 'ही' (he) शब्द का प्रयोग होता है और मुअन्नस (स्त्रीलिंग, स्त्री) के लिए 'शी' (she) लपज़ इस्तेमाल होता है। लेकिन ये हज़रत स्त्री या पुरुष किसी भी श्रेणी में नहीं आते, बल्कि मुखन्नस (नपुंसक) हैं।

हज़रत अकबर के रिश्तेदार मौलाना शौकत हुसैन साहब, तहसीलदार, का बयान है—जिस समय में इलाहाबाद में था, हज़रत अकबर कभी-कभी मेरे यहाँ आया करते थे। एक रोज़ इतवार की छुट्टी थी। मैं घर पर कुछ सरकारी कागजात देख रहा था। अकबर आये और कहने लगे—भाई तुम्हें छुट्टी के दिन भी फुरसत नहीं मिलती। मेने जवाब दिया, 'जी हाँ, एक ज़रूरी मिसल देखनी है।' यह सुनकर हज़रत अकबर ने फरमाया—

संडे को भी जाता हूँ तो फरमाती है वह मिस।

क्या क्रहर है संडे को भी संडा नहीं टलता ॥

अलीगढ़ में मुसलमानों में सबसे पहले अब्दुल गफ़ूर खाँ नामक एक रईस ने करजन फैशन रखा था। अब तो करजन फैशन साधारण सी बात हो गई है, किन्तु उस समय नई बात होने के कारण लोगों की उज्जलियाँ उठती थीं। फिर अकबर तो धार्मिक मुसलमान थे। इन्हें डाढ़ी का मुंडवाना किस प्रकार पसन्द आता? कहने से चूकने वाले न थे। महाकवि ग़ालिब के अनुसार 'सर जाय या रहे, न रहे पर कहे बग़ैर'। एक दिन जब अब्दुल गफ़ूर खाँ अपने मित्रों में बैठे थे तो आप बोले—

देख अब्दुल गफ़ूर खाँ की तरफ। मर्दे खुश-हाल इसको कहते हैं ॥
यार अबरु का याँ सफाया है। फ़ारिग-उल्-बाल इसको कहते हैं ॥

‘फ़र्राग-उल्-बाल’ शब्द विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है। उर्दू मुहावरे में फ़र्राग-उल्-बाल उस मनुष्य को कहते हैं जिसे किसी प्रकार का फ़िर्र न हो। किन्तु ‘फ़र्राग-उल्-बाल’ का लफ्ज़ी तर्जुमा यह होता है कि जिसके बाल न हों।

बनारस कालिज से ओल्ड बाय (old boy) मेगजीन निकलने पर आपने लिखा था—

निकला ब-आबोताब बनारस से ओल्ड बाय ।

अल्लाह उसको गोल्ड भी दे और पर्ल भी ॥

ख्वाहिश है अब ये बाज़ मुहिबाने-कौम की ।

निकले किसी तरफ से यूँही ओल्ड गर्ल भी ॥

लार्ड मिन्टो के समय में अमीर काबुल के आने पर आपने लिखा था—

जो सच्ची बात है कह दूँगा बे खौफो खतर उसको ।

नहीं रुकने का मैं हरगिज़ परी टोके कि जिन टोके ॥

अनार आते जो काबुल से तो पड़ते सबके हिरसे में ।

अमीर आये तो हमको क्या मज़े हैं लार्ड मिन्टो के ॥

देखिए क्राफ़िये ने उपरोक्त पद्य में कैसी जान डाल दी है।

एक बार संयोगवश ‘अंजुमन तरक्किये-उर्दू’ का जिक्र आपके मित्रों ने छेड़ दिया। आप बोले—“ले दे के एरु जवान रह गई थी जिसे हम अपनी कह सकते थे। अब यह भी हमारे संभाले नहीं संभलती। इसके लिए भी एक अंजुमन (सभा) खड़ी की है। यह सब बनावट और दिखावे की बातें हैं।” इसके बाद आपने यह शेर पढ़ा—

हम से छिन कर हो गई बज्मे-तरक्की के सुपुर्द ।

सच कहा मिरज़ा ये अब उर्दू भी ‘कोरट’ हो गई ॥

‘कोरट’ का शब्द कैसा विनोद-पूर्ण है। जब कोई अपनी रियासत का प्रबन्ध करने में असमर्थ होता है या कम उम्र होता है, तो उसकी रियासत

का प्रबन्ध सरकार अपने हाथ में ले लेती है। इसी को रियासत का 'कोरट' हो जाना कहते हैं। इस अवसर पर 'कोरट' शब्द का प्रयोग कैसा उपयुक्त तथा शेर में जान डालने वाला है।

सन् १९२० ई० के प्रारम्भ में खिलाफत का एक डेपूटेशन विलायत गया था। इस डेपूटेशन में मौलाना मोहम्मद अली तथा 'इन्डिपैन्डेंट' के भूतपूर्व सम्पादक सैयद हुसैन के साथ-साथ 'मआरिफ' नामक मासिक पत्र के सम्पादक मौलाना सैयद मुलेमान नदवी भी थे। अकबर को मुसलमानी धर्मशास्त्र के एक विद्वान् का राजनीतिक डेपूटेशन में जाना कुछ पसन्द न आया। देखिये निम्नलिखित पद्य में अकबर ने अपना भाव किस अनोखे ढंग से व्यक्त किया है—

सुखेमां^१ की बात कैसी बनी।

कि नदवी से अब हो गये लंदनी ॥

रहे बादे-नोशों से बेशक खिंचे।

मगर चाय वालों से गाढ़ी छनी ॥

मुहम्मद अली की रिफ़ाक़त^२ में है।

खुदा शैर से उनको करदे गर्नी^३ ॥

आज कल लोगों ने धर्म को अपने स्वार्थ साधन का जरिया बना लिया है। यह बात सब लोग जानते हैं। किन्तु एक स्थान पर इस ख्याल में अकबर ने जो हास्य भर दिया है वह उन्हीं का किस्सा था। आप कहते हैं—

फ़रमा गये हैं ये खूब भाई धूरन।

दुनिया रोटी है और मज़हब चूरन ॥

जब खाना अधिक खा लिया जाता है और हज़म नहीं होता, तो चूर्ण की सहायता ली जाती है। इस ही प्रकार स्वार्थ-परायण लोग अपना उत्प्लू सीधा करने के लिए धर्म की आड़ ले लेते हैं जिससे कोई उनके मार्ग में रुकावट न डाले।

यूरोप की व्यावसायिक उन्नति का चित्र भी देखिये अकबर ने कैसी विनोद-पूर्ण भाषा में खींचा है—

यूरप में गो है जंग की कुव्वत^१ बढ़ी हुई ।
लेकिन फ़िजू^२ है उससे तिजारत बढ़ी हुई ॥
मुमकिन नहीं लगा वो सकें तोप हर जगह ।
देखो मगर 'पियर्स' का है सोप हर जगह ॥

सब पाठक जानते होंगे कि खिताब और सरकारी नौकरियों के उम्मेदवार अफसरों के पास जाकर कैसे-कैसे घृणित कार्य करते हैं। अपने आत्मसम्मान को तिलांजलि दे देते हैं और अपने भाइयों की भूठी-सच्ची बुराईयाँ करते हैं। ऐसे मनुष्यों को देश-घातक कहना बिलकुल सत्य है, किन्तु कटु सत्य है। नीतिकार कह गये “सत्यं वद प्रियं वद मा ब्रूयताम् सत्यमप्रियम्” स्वयं आपका भी कहना था—

कलई भी रियाकार की खुलती रहे 'अकबर' ।

तानों में मगर तर्जे-मुहज्जब भी न छूटे ॥

इसी ही कारण देखिये आपने हँसी-हँसी खुशामदी लोगों पर कैसी चोट की—

अक़ल ने अच्छी कही कल लाला मजलिस राय से ।

भुक के मिलना चाहिये हम सबको वायसराय से ॥

शेर कैसा ही हो लेकिन क्राफ़िये इसके हैं खूब ।

कौन ऐसा है जो हो मुख़ालिफ़ इस राय से ॥

आधुनिक सभ्यता से प्रभावान्वित होकर बहुत से युवक भोग-विलास में डूबे जा रहे हैं, और मद्यपान सीखते जा रहे हैं। ऐसे लोगों की ओर संकेत करके अकबर कहते हैं—

फ़िक्र साढ़ी की है न कंगन की । ।

अब तो धुन है उन्हें फिरंगन की ॥ ।

निम्न लिखित पद्य में अकबर ने आधुनिक जमींदारों के जीवन का सच्चा तथा सजीव चित्र जिस विनोद-पूर्ण भाषा में खींचा है वह अकबर ही का हिस्सा है—

मौहताजे दरे-वकीलों-मुख्तार हैं आप ।

सारे अमलों के नाज़ बरदार हैं आप ॥

आवारा वो मुन्तशिर^१ हैं मानिन्दे-गुबार ।

मालूम हुआ मुझे जमींदार हैं आप ॥

जो पाठक जमींदार है या जमींदारों के जीवन से भली भाँति परिचित है उपरोक्त उक्ति की यथार्थता तथा व्यङ्ग्य को भली भाँति अनुभव कर सकेगे । वास्तव में आजकल के जमींदारों की ऐसी ही शोचनीय दशा है । महीने में बीस दिन कचहरी की खाक छाननी पड़ती है और चपरासियों तक को सलाम भुकानी पड़ती है ।

आजकल बेचारे लेखकों की दशा भी बड़ी हृदय-विदारक है । मौखिक प्रशंसा ही यथेष्ट पुरस्कार समझा जाता है । विशेषतया प्रकाशक तथा साधारणतः जन-साधारण यह समझते हैं कि लेखक एक प्रकार के विशेष प्राणी हैं जो बिना खाये-पिये ही जी सकते हैं तथा साहित्य-सेवा कर सकते हैं । देखिये अकबर इस दशा का चित्र किन शब्दों में खींचते हैं—

खुला दीवां मेरा तो शोरे तहसी^२ बज़म^३ में उठा ।

मगर सब होगये ख़ामोश जब मतबे^४ का बिल आया ॥

अकबर को भी समाचार-पत्रों के सम्पादक साधारण कवि समझकर भिन्न-भिन्न विषयों पर फ़रमायशी ग़ज़लें लिखने की प्रार्थना करते रहते थे । अकबर ऐसी प्रार्थनाओं से तंग आकर कहते हैं—

उशशाक़ को भी माले तिजारत समझ लिया ।

इस क्रूर को मुलाहज़ा लिह्लाह कीजिये ॥

भरते हैं मेरी आह को क़ोनोग्राफ़ में ।

कहते हैं क़ीस लीजिये और आह कीजिये ॥

कहीं-कहीं अकबर ने शब्दों का विशेष रूप से प्रयोग करके कविता में हास्य पैदा कर दिया है । इस विषय के भी आपके दो-चार शेर सुन लीजिये—

१. पाकर ख़िताब नाच का भी शौक़ हो गया ।
सर^१ होगये तो बाल^२ का भी शौक़ हो गया ॥
२. खाई मिज़गां^३ वो नज़र की जो क़सम बोला वो शोख़ ।
आप अब कसमें भी खाते हैं छुरी कांटे से ॥
३. शेख़ जी घर से न निकले और मुझ से कह दिया ।
आप बी० ए० पास हैं और बन्दा बी० बी० पास है ॥
४. बोले चपरासी जो मैं पहुँचा ब-उम्मीदे-सलाम ।
फांकिये खाक आप भी साहब हवा खाने गये ॥
५. शैतां ने किया हज़रते आदम को न सिजदा^४ ।
और उज़्र किया पेश कि मैं आग वो मिट्टी ॥
६. हज़रत को भी तक्रलीदे^५-नमाज़ी में है ये उज़्र ।
मसजिद का वो मुल्ला है मैं साहब का हूँ मुन्शी ॥

अधिक कहाँ तक उल्लेख किया जाय, अकबर की कविता आदि से अन्त तक हास्य-रस से भरी हुई है । कठिनता से दस प्रतिशत ऐसे शेर होंगे जिनसे हास्यरस न टपकता होगा । कैसा ही शुष्क विषय क्यों न हो अकबर ने हास्य को हाथ से नहीं जाने दिया है । मही कारण है कि जो अकबर की कविता एक बार पढ़ लेता है, अकबर पर लट्टू हो जाता है । दो-चार शुष्क हृदयों की और बात है ।

१. एक अंग्रेज़ी ख़िताब । २. अंग्रेज़ी नाच । ३. भृकुटी । ४. सर झुकाना । ५. अनुगमन, पीछे चलना ।

है बदगुमाँ जो वो बुत परवा नहीं कुछ इसकी ।
हर बिरहमन है शैदा^१ अकबर की काफ़िरी का ॥

प्रेम

यद्यपि अकबर ने प्रेम-विषयक कविता अधिकतर प्राचीन शैली ही पर की है, किन्तु पूर्ववर्ती कवियों के समान ज़मीन-घासमान के कुलाबे मिलाकर अपनी आह से 'उन्का' के बालों को नहीं जलाया है^२ । अकबर की प्रेम-विषयक कविता एक प्रेम के हादिक उद्गारों का सीधी सादी भाषा में जीता-जागता चित्र है । इस बात की पुष्टि के लिए हम यहाँ पर अकबर के कुछ शेर उद्धृत करते हैं—

ज़ज़बये-दिल ने मेरे तासीर दिखलाई तो है ।
घुंघरुओं की जानिचे-दर कुछ सदा आई तो है ॥
इश्क़ के इज़हार में हरचन्द रुसवाई तो है ।
पर कलूँ क्या अब तबीयत आप पर आई तो है ॥
आपके सर की कसम मेरे सिवा कोई नहीं ।
बे तकल्लुक़ आइये कमरे में तन्हाई तो है ॥
जब कहा मैंने तड़पता है बहुत अब दिल मेरा ।
हँसके फ़रमाया तड़पता होगा सौदाई तो है ॥
यों मुरब्बत से तुम्हारे सामने चुप हो रहे ।
कल के जलसों की खबर हमने मगर पाई तो है ॥
देखिये कब तक नहीं आती गुले-आरिज़^३ की याद ।
सैरे-गुलशन से तबीयत हमने बहलाई तो है ॥
मैं बला में क्यों फसूँ दीवाना बनकर उसके साथ ।

१—आसक्त ।

२—मैं अदम से भी परे हूँ वरना ज़ालिम बारहा ।

आहे आतशी से मेरी बाले उनका जल गया ॥ —ज़ालिब

३—फूल के समान कपोल ।

दिल को वहशत हो तो कमबख्त सौदाई तो है ॥
जिसकी उलफ़त पर बड़ा दावा था 'अकबर' कल तुम्हें ।
आज हम जाकर उसे देख आये हरजाई तो है ॥

(२)

उन्हें पसन्द नहीं और इससे मैं बेज़ार ।

इलाही फिर ये दिले बेकरार क्या होगा ॥
अज़ीज़ो सादा ही रहने दो लौहे तुरबत^१ को ।

हमीं मिटे तो ये नक़शो निगार क्या होगा ॥

(३)

अगरचे आशिक बुतों का हूँ मैं नज़र खुदा से फिरी नहीं है ।
जो आँख रखते हैं जानते हैं कि आशिकी काफ़िरी^२ नहीं है ॥
जमाले-दिलकश^३ का महवू^४ होना नहीं है हरगिज़ ख़िलाफे-ताअत^५ ।
खुदा की कुदरत की कद्र करना सबाब^६ है काफ़िरी नहीं है ॥

(४)

क्या मौत है तबियत आ गई उस आफ़ते जां पर ।
जिसे इतना नहीं मालूम उलफ़त क्या वफ़ा क्या है ॥
उन्हें भी जोशे-उलफ़त हो तो लुफ़ उट्टे मोहब्बत का ।
हमीं दिन रात अगर तढ़पें तो फिर इसमें मज़ा क्या है ॥
मुसीबत ऐन राहत है अगर हो आशिके सादिक^७ ।
कोई परवाने से पूछे कि जलने में मज़ा क्या है ॥
तबीबों से मैं क्या पूछूँ इलाज़े दर्दे-दिल अपना ।
मर्ज जब ज़िन्दगी खुद हो तो फिर उसकी दवा क्या है ॥

(५)

इन बुतों के बाब में इतनी ही मेरी अर्ज़ है ।

कुफ़्र है इनकी परस्तिश प्यार करना फ़र्ज़ है ॥

१. क्रम का पत्थर । २. नास्तिकता । ३. चित्ताकर्षक सौन्दर्य ।

४. लीन । ५. आज्ञा-पालन के विरुद्ध । ६. पुण्य । ७. सच्चा प्रेमी ।

३. धर्म

अकबर की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि चाहे कैसा ही शुष्क विषय क्यों न हो उसे भी मनोरञ्जक तथा चित्ताकर्षक बना दिया है। दार्शनिक तथा धार्मिक तत्त्वों का समावेश अकबर ने अपनी कविता में कुछ इस प्रकार किया है कि देखते ही बनता है। देखिये ईश्वर का अस्तित्व आप किस प्रकार प्रमाणित करते हैं—

गौर से देखो ज़मीनों-आसमां को मुन्क़रों^१।

चल भी सकता बे खुदा के इन्तज़ाम इतना ॥

संसार से मनुष्य को कितना सम्बन्ध रखना चाहिए इस बात को देखिये अकबर ने निम्नलिखित पद्य में किस ढंग से बताया है—

‘अकबर’ से मैंने पूछा, “अय वाहज़े-तरीक़त,

दुनियाये-दूँ से रक्खूँ मैं किस क़दर ताल्लुक़।”

उसने दिया बलागत से ये जवाब मुझको,

“अंग्रेज़ को है नेटिव से जिस क़दर ताल्लुक़ ॥”

मज़हब तथा साइन्स की तुलना भी देखने लायक है—

सदाक़त^२ के निशां इस मिसरये-अकबर में मिलते हैं।

कल्ले साइन्स से चलती हैं दिल मज़हब से हिलते हैं ॥

ईश्वर की प्रार्थना से सम्बन्ध रखने वाली एक ग़ज़ल के भी शेर सुनाने लायक हैं।

खुदा का नाम रोशन है खुदा का नाम प्यारा है।

दिलों को इससे कुव्वत है ज़बानों को सहारा है ॥

उसी के हुक्म से है रात दिन की ये कमी-बेशी।

उसी के हुक्म का तावे फ़लक़ पर हर सितारा है ॥

उसी के इन्तज़ामों-हुक्म से मौसम बदलते हैं।

वही है वक़्त पर जिसने हवाओं को उभारा है ॥

उसी के हुक्म से फल और गल्ले की है पैदायश ।
 ज़मीं पर बदलियों से उसने पानी को उतारा है ॥
 ये जब तक सांस चलती है समझते हो हमीं हम हैं ।
 अजल^१ जब सर पै आ पहुँची तो फिर क्या बस हमारा है ।
 अगर आमाल^२ अच्छे हैं तो पावोगे बड़े दर्जे ।
 समझ लो इम्तहां इस 'दारे-क्रानी'^३ में तुम्हारा है ॥
 बजुगों का अदब अल्लाह का डर शर्म आंखों में ।
 इन्हीं औसाफ़^४ की निस्बत मज़ाहिब में इशारा है ॥

उपनिषदों में ईश्वर को 'अज्ञेय' कहा गया है । हर्बर्ट स्पेंसर और उसके अनुयायी 'अज्ञेयवादियों' के अनुसार भी ईश्वर अज्ञेय है, अर्थात् नहीं जाना जा सकता । आपका भी यही विचार था । आपके विचार में सर्वव्यापक ईश्वर का यथार्थ ज्ञान प्राप्त करना मनुष्य की परिमित बुद्धि से बाहर है—

किया है जिसने आलम को पैदा उसको क्या कहिये ।

ख़िर्द^५ ख़ामोश है और दिल ये कहता है खुदा कहिये ॥

ईश्वर के विषय में तर्क से भी काम नहीं लिया जा सकता क्योंकि—

क्यों कर दलील^६ देख सके उस जमाल^७ को ।

जिसका ख़याल बर्क़^८ गिराता है होश पर ॥

इस कारण आप धार्मिक शास्त्रार्थों को व्यर्थ समझते थे । देखिये निम्नलिखित पद्य में आपने यह भाव किस सुन्दरता से प्रगट किया है—

फ़लसफ़ी तजरूबा करता था हुवा मैं रुख़सत ।

मुझ से वो कहने लगा आप किधर जाते हैं ॥

कह दिया मैंने हुवा तजरूबा मुझको तो यही ।

तजरूबा हो नहीं चुकता है कि मर जाते हैं ॥

१. मृत्यु । २. कर्म । ३. नश्वर संसार । ४. बुद्धि । ५. गुणों ।
 ६. युक्ति । ७. ज्योति । ८. बिजली ।

इसके अतिरिक्त—

मज़हब के ये मुबाहिस्^१ निकले हैं हिस्ट्री से ।

उनको है क्या तआल्लुक वहदत की मिस्ट्री^२ से ॥

अकबर अद्वैतवादी थे । किसी मज़हब से तास्सुब नहीं रखते थे ।
आप कहते थे—

आता है वज्द^३ मुस्लको हर दीन की अदा पर ।

मसजिद में नाचता हूँ नाक़्स^४ की सदा पर ॥

किन्तु आप उन लोगों के विरुद्ध थे जो धर्म की आड़ में शिकार खेलते थे । मुनिये क्या कहते हैं—

किसी को भी किसी से कुछ नहीं इस बात में भगड़ा ।

करो तुम ध्यान परमेश्वर का दिल को उसका दर्शन हो ॥

मगर मुश्किल तो ये है नाम सब लेते हैं मज़हब का ।

गरज़ लेकिन यह होती है जथा हो और भोजन हो ॥

इस प्रकार का दिखावे काढोंग आपको पसन्द नहीं था । ऐसे मनुष्यों को आप दूर ही से प्रणाम करते थे—

पण्डित को भी सलाम है और मौलवी को भी ।

मज़हब न चाहिए मुझे ईमान चाहिए ॥

मज़हब और ईश्वर की ओर से लापरवाह रहने के कारण देखिये आपने कालिज के लड़कों के कैसी मीठी चुटकी ली है—

मज़हब का हो क्योंकिर इल्मो-अमल,

दिल ही नहीं भाई एक तरफ़ ।

किरकिट की खिलाई एक तरफ़,

कालिज की पढ़ाई एक तरफ़ ।

क्या ज़ौक़े-इबादत हो उनको,

जो मिस के लबों के शैदा हों !

१. शास्त्रार्थ । २. रहस्य । ३. ईश्वर-प्रेम में निमग्न हो जाना । ४. शंख ।

हलवे-बहिश्ती एक तरफ़,

होटल की मिठाई एक तरफ़ ।

ईश्वर को भूले हुए आजकल के नौकरी के उम्मीदवारों के विषय में भी एक शेर सुन लीजिये—

मुसीबत में भी अब यादे-खुदा आती नहीं उनको ।

दुआ मुँह से न निकली पाकियों से अज़ियाँ निकली ॥

यूरुप में वैज्ञानिक उन्नति के साथ-साथ नास्तिकता के भाव भी बढ़ते जाते हैं । अपने देशवासियों को नास्तिकता के फन्दे से बचने की चेतावनी आपने बड़े ही अनुपम ढङ्ग में दी है—

भूलता जाता है यूरुप आसमानी बाप को ।

बस खुदा समझा है उसने बक़^१ को और भाप को ॥

बक़^१ गिर जायगी एक दिन और उड़ जायगी भाप ।

देख 'अकबर' बचाये रखना अपने आप को ॥

आप खुदा को खुश करना ही अपना सर्वोपरि कर्तव्य समझते थे । आपका कहना था कि यदि हम ईश्वर को प्रसन्न रखने का प्रयत्न करेंगे तो आस्तिक अफसर स्वयं ही प्रसन्न हो जायेंगे ।

तुम खुदा को खुश करो 'अकबर' खुशामद छोड़कर ।

बाखुदा हाकिम जो होगा खुद ही खुश हो जायगा ॥

आपके काव्य में नीति-विषयक शेर भी बहुत से हैं । यहाँ भी आपने 'हास्य' को हाथ से नहीं जाने दिया है । शराब की निन्दा में आप लिखते हैं—

नफ़स^२ के ताबे हुवे ईमान रुख़सत हो गया ।

वो ज़नाने में घुसे मदमान रुख़सत हो गया ॥

मय^३ उन्होंने पी अब उनके पास क्योंकर दिल लगे ।

जानवर इक रह गया इन्सान रुख़सत हो गया ॥

ठीक ही तो है। मनुष्य और जानवर में यही भेद होता है कि मनुष्य को भले-बुरे का ज्ञान होता है और जानवर को नहीं। नशे की हालत में मनुष्य को भले-बुरे का ज्ञान नहीं रहता। इस कारण जानवर के समान ही हो जाता है।

देखिये आपने स्वार्थी वाक्-चतुर उपदेशों के फन्दे से बचने की चेतावनी किन शब्दों में दी है—

वो रोये बहुत स्पीचों में हिक्मत इसको कहते हैं।

मैं समझा खैरखाह उनको हिमाकृत इसको कहते हैं ॥

कभी-कभी शान्त मनुष्यों को भी क्रोध आ जाता है। क्रोध आना तो प्राकृतिक है। दिल में मैल नहीं रखना चाहिए—

गुस्सा आना तो है नेचुरल^१ 'अकबर'।

लेकिन है शदीद^२ ऐब क्रीना^३ रखना ॥

आजकल मैत्री दिखावे की रह गई है। अवसर आने पर मैत्री का लम्बा-चौड़ा दम भरने वाले आँखें फेर लेते हैं। इस साधारण बात को अकबर ने निम्नलिखित शेर में प्रकट किया है, किन्तु फोनोग्राफ की उपमा देकर शेर में एक अजीब लुत्फ पैदा कर दिया है—

क्या अजब हो गये मुझ से मेरे दमसाज़^४ जुदा।

दौरे फौनो में गले से हुई आवाज़ जुदा ॥

देखिए अकबर का निम्नलिखित शेर कैसा सारगर्भित है—

सबाब^५ कहता है मिल जाऊँगा कर उनकी मदद।

झिपा हुआ मैं गरीबों की भूख प्यास में हूँ ॥

उपरोक्त शेर में अकबर ने धर्म का सार रख दिया है साधारण शब्दों में ऐसी गूढ़ बात कह जाना अकबर ही का हिस्सा था—

तेरे बाद 'अकबर' कहाँ ऐसी नइमें ।

वो दिल ही न होंगे कि ये आह निकले ।

४. समाज-सुधार

यद्यपि अकबर पश्चिमी शिक्षा के विरोधी नहीं थे और अपने लड़के को भी विलायत पढ़ने के लिए भेजा था, किन्तु यूरुप की नास्तिकता तथा 'मैटीरियलिज्म' (Materialism) के बिलकुल विरुद्ध थे । आप इस बात के भी पक्ष में नहीं थे कि भारतीय अपनी चाल-ढाल तथा रीति-रस्म भूल जायें और सोलहों आने अंग्रेजी चाल-ढाल पर चलने लगें । आपने अपनी कविता में यूरुपीय सभ्यता की उन बातों की, जिन्हें वे दूषित समझते थे, खूब खुशकी उड़ाई है । यूरुपीय सभ्यता पर लट्ट नये ढंग के बावू लोगों की भी आपने खूब खबर ली है । कहीं-कहीं तो अकबर ने एक-एक शेर में पूरे 'लेक्चर' का मज़मून बन्द कर दिया है ।

परदा

अकबर परदे के रिवाज के पक्ष में थे । देखिये आपने नीचे के दो शेरों में अपने पक्ष का किस निराले ढङ्ग से समर्थन किया है तथा विपक्षियों के कैसी चुटकी ली है—

बेपरदा नज़र आई जो कल चन्द बीबियाँ ।

'अकबर' ज़मी में शैरते-क़ौमी से गड़ गया ॥

पूछा जब उनसे आपका परदा वो क्या हुआ ।

कहने लगीं कि अक्ल पै मरदों की पड़ गया ॥

स्त्री-शिक्षा

अकबर स्त्री-शिक्षा के विरोधी नहीं थे, किन्तु आप अंग्रेजी ढंग की शिक्षा लड़कियों के लिए उचित नहीं समझते थे । आपका विचार था कि अंग्रेजी ढंग की शिक्षा लड़कियों के आचार पर बुरा प्रभाव डालती है और उनको घरेलू काम-काज तथा पति की ओर से उदासीन बना देती

है। निम्नलिखित पद्य में आपने आधुनिक शिक्षा-प्रणाली से शिक्षित लड़कियों का चित्र खींचा है—

घर से जब पढ़ लिख के निकलेंगी कुँवारी लड़कियाँ ।
 दिलक़शों^१ आज़ादों-खुशरू^२ साख़ता^३ परदाख़ता^४ ॥
 ये तो क्या मालूम क्या मौक़े अमल^५ के होंगे पेश ।
 हाँ निगाहें होंगी मायल^६ उस तरफ़ बेसाख़ता^७ ॥
 मगरबी तहज़ीब आगे चलके जो हालत दिखाये ।
 एक मुदत तक रहेंगे नौजवाँ दिल-धाख़ता^८ ॥
 औजे^९ क़ौमी से शराफ़त का हुमा^{१०} गिर जायगा ।
 माकियाँ^{११} से पस्ततर^{१२} दिखाई देगी फ़ाख़ता ॥
 डाल देगा सीनये-ग़ैरत^{१३} सिपर^{१४} मैदान में ।
 तेरी^{१५} अबरू^{१६} ही नज़र आयगी हरसू आख़ता^{१७} ॥

और एक स्थान पर आपने लिखा है—

१. तहज़ीब-मगरिबी में है बोसा तलक मुआफ ।
 इससे अगर बढ़ो तो शरारत की बात है ॥
२. रुकिये अगर तो हँस के कहे एक मिसे-हसीं ।
 वैल मौलवी ये बात नहीं है गुनाह की ॥

अब ज़रा धरेलू काम-काज से उदासीनता के विषय में भी दो-एक शेर सुन लीजिए—

१. उनसे बीबी ने फ़क़त स्कूल ही की बात की ।
 ये न बतलाया कहाँ रक्खी है रोटी रात की ॥

१. चित्ताकर्षक । २. सुन्दर । ३. दुरुस्त । ४. सुसज्जित । ५. आकर्षित । ६. आप ही आप । ७. जिनका दिल पर से काबू जा चुका है । ८. आकाश । ९. एक जानवर का नाम है जो केवल हड्डी खाता है । कहा जाता है कि जिस आदमी पर इसका साया पड़ जाता है वह बाद-शाह हो जाता है । १०. घर की पत्नी हुई सुर्गि । ११. ज़्यादा नीची । १२. लज्जा । १३. डाल । १४. तलवार । १५. भृकुटी । १६. लटकी हुई ।

बीबी में जो तरङ्गे मगरबी हो तो कहो ।

अहसान है ये जो मुझको शौहर समझो ॥

अकबर के उपरोक्त पद्य पढ़कर स्वर्गीय सर सैयद अहमद का कथन याद आ जाता है । एक बार आपने बातों-बातों में कहा था कि यदि अपनी पत्नी को प्रसन्न रखना चाहो तो दो बातों का ध्यान रखो । यदि पत्नी नई रोशनी की है तो उसके आचार पर आक्षेप न करो । वह जो करे करने दो । सदैव सन्तुष्ट रहेगी । और यदि पत्नी पुरानी रोशनी की है तो अपना आचार ठीक रखो ।

अकबर का विचार था कि स्त्रियों को ऐसी शिक्षा दी जानी चाहिये जिससे वे अपनी गृहस्थी के काम-काज अच्छी तरह कर सकें । उन्होंने लिखा है—

तालीम लड़कियों की ज़रूरी तो है मगर ।

‘झातूनेखाना’^१ हों वो सभा की परी न हों ॥

जीइल्मो^२ मुत्तक्री^३ हों वले उनके मुन्तज़िम ।

उस्ताद अच्छे हों मगर उस्तादजी न हो ॥

देखिये आपने अपनी सम्मति किस अनुपम सुन्दरता से प्रकट की है । ‘उस्तादजी’ का शब्द कैसा विनोदपूर्ण है ।

आधुनिक शिक्षा

आजकल सरकारी स्कूलों में जिस प्रकार की शिक्षा लड़कों को दी जाती है उससे भी अकबर सन्तुष्ट न थे । असन्तुष्ट होने का सबसे बड़ा कारण यह था कि धार्मिक शिक्षा के सर्वथा अभाव के कारण आधुनिक स्कूलों तथा कालिजों में शिक्षित विद्यार्थी अपने धर्म तथा ईश्वर से विमुख हो जाते हैं । विद्यार्थियों को सम्बोधित करके अकबर लिखते हैं—

नये गमलों में पड़ कर फूल जाना ।

खुदाओ-आखिरत^४ को भूल जाना ॥

१. घर की देवियाँ । २. विद्वान् । ३. परहेज़गार । ४. परलोक ।

बहुत बेजा है ये वल्लाह 'अकबर' ।

ज़रा सुन लो तो फिर स्कूल जाना ॥

आधुनिक शिक्षा से प्रभावान्वित होकर बहुत से लड़के बड़ों का अदब लिहाज़ बिलकुल छोड़ देते हैं। इस विषय में भी एक शेर सुनिये—

हम ऐसी सब किताबें क्राबिले-ज़बती समझते हैं ।

जिन्हें पढ़-पढ़ के लड़के बाप को ख़बती समझते हैं ॥

आधुनिक कालिजों में शिक्षा प्राप्त युवकों पर सोलहों आने विदेशी सभ्यता का रङ्ग चढ़ जाता है। और क्यों न चढ़े—

तिफ़ल में बू आये क्या मां बाप के एतवार की ।

दूध तो डिब्बे का है तालीम है सरकार की ॥

कुछ स्कूलों तथा कालिजों में धार्मिक शिक्षा देने का भी प्रबन्ध होता है। किन्तु अकबर इस प्रबन्ध को यथेष्ट नहीं समझते थे। आपका कहना था—

नई तहज़ीब में भी मज़हबी तालीम शामिल है ।

मगर यूँ ही कि जैसे आबे^१ ज़मज़म^२ मय में दाखिल है ॥

भारतीय युवकों के जीवन का बड़ा भाग इस ही प्रकार की दूषित शिक्षा प्राप्त करने में नष्ट हो जाता है—

बहारे-उम्र गुज़री सालहाये-इम्तहानी में ।

हमें तो पास ही की फ़िक्र ने पीसा जवानी में ॥

इतना बहुमूल्य समय तथा धन-व्यय किस लिये किया जाता है ? यथार्थ ज्ञान या कोई बड़ा औहदा पाने के लिये नहीं। बड़े औहदे तो अधिक संख्या में विदेशियों ही के लिये सुरक्षित थे। हम तो बल्की पाना ही अहोभाग्य समझते थे ! साधारण बल्की के लिये इतनी मुसीबत !

१. पानी । २. गङ्गा के समान मुसलमानों की एक पवित्र नदी ।

मज़हब छोड़ो मिललत छोड़ो सूरत बदलो उअ्र गंवावो ।
सिर्फ क्लर्की की उम्मीद और इतनी मुसीबत तोबा तोबा ॥
खेद की बात तो यह है कि इतनी आराधना करने पर भी क्लर्की
रूठी ही रहती है—

हैं अमल अच्छे मगर दरवाज़ये-जन्नत^१ है बन्द ।
कर चुके हैं पास लेकिन नौकरी मिलती नहीं ॥

अतएव—

ख्वाहाने-नौकरी न रहें तालिबाने-इल्म ।
क्रायम हुई है राय ये अहले-शऊर की ॥
कालिज में धूम चल रही है पास पास की ।
औहदों से सदा आ रही है दूर दूर की ॥

किन्तु नौकरी न करें तो क्या करें ? आधुनिक शिक्षा तो क्लर्की के
सिवाय और किसी काम का बनाती ही नहीं । एकमात्र साहित्यिक शिक्षा
से रोटी का प्रश्न हल नहीं हो सकता । संसार शिल्प-वाणिज्य के मैदान
में कुलांचे मारता चला जाता है, किन्तु हम अपनी पुरानी ही डगर
पर हैं—

डार्विन के वही मक़तब का सबक है अब तक ।
वही बन्दर वही ल'गूर चला जाता है ॥

अब तो हमको समझ आनी चाहिए तथा शिल्प-वाणिज्य की शिक्षा
की ओर अधिक ध्यान देना चाहिए । देखिए इस प्रकार की शिक्षा का
समर्थन अकबर निम्नलिखित शेर में किस अनूपम सुन्दरता के साथ
करते हैं—

हमारे खेत से ले जाते हैं बन्दर चने क्योंकर ।
ये बहस अच्छी है इससे हज़रते आदम बने क्योंकर ॥

आपका विचार था कि आधुनिक यूरोपीय सभ्यता में बाहरी टीप-

१. स्वर्ग के द्वार ।

टाप ही अधिक है। देखिए आपने इस भाव को निम्नलिखित शेर में किस उत्तमता से प्रकट किया है—

हमको नई रविश^१ के हलक्रे^२ जकड़ रहे हैं।

बातें तो बन रही हैं और घर बिगड़ रहे हैं ॥

तर्ज-मगरिब में नहीं है शर्ते-दिल बहरे-अमल।

चल खड़े होते हैं स्टीमर हवा हो या न हो ॥

स्टीमर का उदाहरण कितना उपयुक्त है। एक और स्थान पर आप लिखते हैं—

कमैटियों से सदा उठी है ज़माना बदला है तुम भी बदलो।

मगर हमारा तो क़ौल ये है खुदा वही है तो हम वही हैं ॥

किन्तु उपरोक्त पद्य से अकबर का यह आशय नहीं समझना चाहिए कि समय के साथ-साथ हम कुछ भी परिवर्तन न करे—

तुम शौक से कालिज में फलों पार्क में फूलों,

जायज़ है गुबारों पै चढ़ो चर्ख^३ पै भूलो।

पर एक सनसु बन्दये-आजिज़ का रहे याद,

अल्लाह को और अपनी हकीकत को न भूलो।

अकबर उन आदमियों में नहीं थे जो किसी बात का इस ही कारण विरोध करते हैं कि वह नई है। आपने एक स्थान पर लिखा है—

शेख़ साहब का तास्सुब^४ है जो कहते हैं।

ऊँट मौजूद है फिर रेल पै क्यों चढ़ते हो ॥

आपने अपने लड़के को विलायत पढ़ने के लिए भेजा था। किन्तु इस ही बात से डरा करते थे कि कहीं लड़का विलायत जाकर सरस्वती की आराधना करने के स्थान में कामदेव की आराधना न करने लगे।

कमरे में जो हँसती हुई आई मिसे रैना,

टीचर ने कहा इस्म की आक़त है तो ये है।

पेचोदा मसायल के लिए जाते हैं इंग्लैण्ड ।

जुल्फों में उलझ आते हैं शामत है तो ये है ॥

४. राजनीति

अकबर सरकारी नौकर होने के कारण देश के राजनीतिक कार्यों में भाग नहीं लेते थे । स्पष्ट रूप से विवादग्रस्त समस्याओं पर अपने विचार भी प्रकट नहीं कर सकते थे । किन्तु उनके पास 'जराफत' का नुस्खा ऐसा था कि हँसी-दिल्लगी के बहाने बाण मार जाते थे । कड़वी-से-कड़वी दवा दे देते थे और उस पर हास्य-रस का इतना मोठा चढ़ा देते थे कि खाने वाला कड़वी गोलियों को निगल जाने पर भी होंठ चाटता रह जाता था । एक स्थान पर आपने स्पष्ट रूप से लिखा है—

लगज़िशें मद्दे-ज़राफत में जो कुछ आयें नज़र ।

दोस्तों से इत्तज़ा ये है करें उनको मुआफ़ ॥

सर्द मौसम था हवाएँ चल रही थीं बर्फ़बार ।

शाहिदे मानी ने ओढ़ा है ज़राफत का लिहाफ ॥

उपरोक्त पद्य का भावार्थ यह है कि 'जराफत' में जो कुछ कमी या अपूर्णताएँ रह गई हों उनके लिए मित्रगण क्षमा करें । बात यह है कि मौसम जाड़े का था अर्थात् राजनीतिक समस्याओं ने विकट रूप धारण कर रखा था और ठण्डी हवाएँ चल रही थी, अर्थात् सरकारी पकड़-धकड़ जोरों पर थी । इस कारण अर्थ रूपी 'माशूक' या 'नायिका' को 'जराफत' या 'हास्य' का लिहाफ ओढ़ना पड़ा है । आशय यह कि सारी बातें हास्य के परदे में कही गई हैं । यही कारण था कि अकबर सरकारी नौकर होते हुए भी सत्य के पक्ष में तथा सरकार के विपक्ष में ऐसी-ऐसी बातें कह गये हैं जिनको कहने के लिए बड़े साहस की आवश्यकता है ।

मेरा ये शेर 'अकबर' एक दफ्तर है मअानी का ।

कोई समझे न समझे हम तो सब कुछ कह गुज़रते हैं ॥

अर्थात् अथ अकबर, मेरा यह पद गूढ़ रहस्यों की एक पुस्तक है । चाहे कोई समझे या न समझे किन्तु हम तो सब कुछ कह डालते हैं ।

अकबर का अधिकांश जीवन सरकारी नौकरी में बीता। साधारणतः सरकारी नौकरी में—विशेषतः उच्च पदाधिकारियों में—मानसिक गुलामी आ जाती है। किन्तु आप इस रोग से सर्वथा मुक्त थे—

शागिर्दे-डारविन तो खुदा ही ने कर दिया।

‘अकबर’ मग़ार नहीं है मदारी के हाथ में॥

अकबर का विचार था कि भारतवर्ष के लिए अंग्रेजों का राज्य हितकर नहीं हो सकता। अंग्रेजी राज्य से देश-वासियों का शासन चाहे हिन्दुओं का हो या मुसलमानों का—कही अच्छा है। देखिए आपने इस विचार को किस मजे के साथ व्यक्त किया है—

धुन देश की थी जिसमें गाता था एक दिहाती।

बिस्कुट से है मुलायम पूरी हो या चपाती॥

बिस्कुट, पूरी तथा चपाती से अंग्रेज, हिन्दू तथा मुसलमानों के शासन का अभिप्राय है।

राजनीतिक अधिकार पाने के लिए आप माडरेटों के समान खुशामद या शिकायत से काम लेना समय का वृथा नष्ट करना समझते थे। आप एक प्रसिद्ध अंग्रेज राजनीतिज्ञ के निम्नलिखित कथन की यथार्थता को पूर्णरूप से अनुभव करते थे—

In politics from a promise it is meant that it will not be fulfilled, unless pressed.

अर्थात् राजनीति में वादे का यह मतलब है कि ‘वादा उस समय तक पूरा न किया जायगा जब तक पूरा करने के लिए विवश ही न हो जायें।’ इस ही कारण आपने लिखा है—

निहायत क्राबलियत से मुझे साबित किया मुरदा।

मुनासिब दाद देना है मुझे यारब कि रोना है॥

निदा आई मुनासिब है कि जीना अपना साबित कर।

खुशामद या शिकायत दोनों ही में वक्त खोना है॥

राजनीतिक क्षेत्र में केवल जिह्वा बनना व्यर्थ है, यहाँ तो हाथ बनने से काम चलता है—

ज़ोरे-बाजू नहीं तो क्या स्पीच ।

हाथ भी दे खुदा ज़बां के साथ ॥

जब तक हाथ में शक्ति नहीं, व्यर्थ के आलाप से क्या लाभ ?
रकाबियों की भंकार उम्र-भर सुनते रहिये । किन्तु इससे कहीं भूख
मिट सकती है ?

रिज़ोल्यूशन की शोरिश^१ है मगर उसका असर शायब ।

प्लेटों की सदा सुनता हूँ और खाना नहीं आता ॥

आप नाम-मात्र के सुधारों से— जैसे कौंसिलों में भारतीय सभासदों
की संख्या कुछ बढ़ा दी या भारतीयों को दो-चार ऊँचे पद और दे
दिये—सन्तुष्ट नहीं थे । आपके विचारानुसार—

हमदर्द हों सब ये लुरफे आबादी है ।

हमसाया भी हो शरीक तब शादी है ॥

तसकीन है जब कि खुदा पर हो तकिया ?

क़ानून बना सकें तब आज़ादी है ॥

अंग्रेज़ों के बंगलों की खाक छानना भी आप जातीय उन्नति की
दृष्टि से व्यर्थ समझते थे—

क्रौम के हक़ में तो उलझन के सिवा कुछ भी नहीं ।

सिर्फ़ आनर के मज़े उनकी मुलाक़ात में हैं ॥

ठीक भी है, ख़िताब के सिवा और मिलता भी क्या है ?

स्वराज्य

स्वराज्य-आन्दोलन की आरम्भिक अवस्था में आपने लिखा था—

जब ये समझे थे परहेज़ जरूरी है इन्हें ।

वादा बच्चों से मिठाई का मुनासिब ही न था ॥

१. आवाज़ ।

आप ही ने तो किया 'केक' का ज़िक्रे-शीरी,
वरना इस चीज़ का इनमें कोई तालिब ही न था ॥

उपरोक्त पद्यों का अर्थ साफ है। 'परहेज़' शब्द से कवि ने प्रकट किया है कि अधिकारीवर्ग नहीं चाहते कि भारतवासियों को 'होमरूल' अर्थात् 'स्वराज्य' मिले। 'बच्चों से मिठाई के वादे' की उक्ति बहुत ही व्यङ्ग्यपूर्ण है। स्वराज्य-आन्दोलन की प्रारम्भिक अवस्था में स्वराज्य के अर्थ में होमरूल शब्द ही का प्रयोग किया जाता था। 'होमरूल' अंग्रेजी शब्द है। इसी कारण कवि ने 'होमरूल' के लिए 'केक' शब्द का प्रयोग किया है। किन्तु साथ-ही-साथ 'ज़िक्रे' के साथ 'शीरी' लगाकर इस बात को भी प्रकट कर दिया है कि 'होमरूल' देश के लिए आवश्यक है।

देखिये भारतवर्ष की दशा का आपने कैसा वास्तविक तथा मार्मिक चित्र खींचा है—

ये बात गलत कि दौरे-इस्लाम है हिन्द,
ये झूठ कि मुल्के-लक्ष्मनो-राम है हिन्द।
हम सब हैं मुत्ती वो खैरखाहे-इङ्गलिश,
यूरुप के लिए बस एक गोदाम है हिन्द ॥

भावार्थ यह कि न तो अब भारतवर्ष इस्लाम का घर है और न राम-लक्ष्मण ही का देश है। अब तो यहाँ अंग्रेज जाति के आदमी और उनके शुभचिन्तक रहते हैं, और भारतवर्ष यूरुप का गोदाम बना हुआ है।

अकबर ऐसे नेताओं को बिलकुल पसन्द न करते थे जो ऊपर से तो क़ौमी खिदमत का ढोंग रचते रहते हैं, किन्तु वास्तविक उद्देश्य यह होता है कि कौन्सिलों के मेम्बर हो जायें, खिताब हासिल कर लें या अपने सम्बन्धियों को सरकारी नौकरियाँ दिला दें। ऐसे नेताओं को सम्बोधित करके आप कहते हैं—

गुम की थी मैंने राह मुसीबत यही थी सख्त ।
इस पर हुआ ये क्रहर तुम ऐसे खिज़र मिले ॥
बातें भी मुझसे कीं मेरी खातिर भी की बहुत ।
लेकिन मज़ाल क्या जो नज़र से नज़र मिले ॥
किससे मैं पूछता गुलो-बुलबुल की सरगुज़स्त ।
दो चार वर्ग खुशक तो दो चार तर मिले ॥

देखिये निम्नलिखित शेर में आपने एकमात्र नाम के इच्छुक लीडरों के कैसी चुटकी ली है—

कौम के ग़म में डिनर खाते हैं हुक्काम के साथ ।
लीडर को ग़म बहुत है मगर आराम के साथ ॥

बहुत से वकील वकालत में अकृतकार्य होकर उदर-पूर्ति के लिए लीडरी के मैदान में आ जाते हैं । ऐसे लीडरों के विषय में भी कुछ सुन लीजिये—

मवक्किल छुटे उनके पञ्जे से जब ।
तो बस कौम-मरहूम के सर हुए ॥
पपीहे पुकारा कि ये 'पी' कहाँ ।
मगर वो तो प्लीडर से लीडर हुए ॥

पपीहा, पी, प्लीडर तथा लीडर शब्दों ने उपरोक्त शेर में अजब जान डाल दी है । अंग्रेजी शब्द Pleader (वकील) में से जब 'P' निकाल लेते हैं तो Leader (नेता) बाकी रह जाता है ।

उस समय की कांग्रेस को लक्ष्य में रखकर, जब वह कामरेडों के हाथ में थी, आप लिखते हैं—

हो दिसम्बर में सुबारिक ये उछल कूद आपको ।
खून मुझमें भी है लेकिन मुझको फागुन चाहिये ॥

उस समय की कौन्सिलें एक प्रकार से खिलौना-मात्र थीं । गवर्नर या वाइसराय को अधिकार था कि सर्व-सम्मति से स्वीकृत हुए महत्वपूर्ण से महत्वपूर्ण प्रस्ताव को रद्द कर दे—

एक दिल्लीवासी है वक्त गुज़रने के वास्ते ।
 देखो तो मेम्बरों के ज़रा ढेर फेर को ॥
 ऐसी कमैटियों से है फल का उम्मीदवार ।
 अकबर दरख्त समझा है पत्तों के ढेर को ॥

आप कौन्सिल को व्यर्थ ही नहीं, प्रत्युत गुलामी की जंजीर और
 शिकारी का फन्दा समझते थे—

कौम के दिल में खोटा है पैदा ।
 अच्छे अच्छे हैं वोट पै शैदा ॥
 भाई भाई में हाथापाई ।
 सैफ गवर्नमेंट आगे आई ॥
 पॉव का होश अब फिर न सर की ।
 वोट की धुन में बन गये फिरकी ॥

निम्नलिखित शेरों में तो अकबर ने उस समय की कौंसिलों का
 खोखलापन बिल्कुल ही स्पष्ट रूप से प्रकट कर दिया है—

नेटिव है नमूद ही का मोहताज ।
 कौंसिल तो उनकी जिनका है राज ॥
 कहते जाते हैं या इलाही ।
 सोशल हालत की है तबाही ॥
 हम लोग जो इसमें फँस रहे हैं ।
 अग़ायार भी दिल से हंस रहे हैं ॥
 दरअसल न दीन है न दुनिया ।
 पिंजरे में फुदक रही है मुनिया ॥
 स्कीम का भूलना वो भूलें ।
 लेकिन ये क्यों अपनी राह भूलें ॥

सन् १९१४ ई० में यूरोपीय महायुद्ध आरम्भ हुआ । आपने
 समाचार पाते ही एक गज़ल लिखी जिसका यह मिसरा था —

बहम्मद अदलाह ! अब खूने शहीदा रंग लाया है ।

जिस समय यह ग़ज़ल लिखी गई थी अंगरेज़ लोग लड़ाई में सम्मिलित नहीं हुए थे। इस कारण प्रत्यक्ष है कि कवि का संकेत अंगरेज़ों की ओर नहीं हो सकता था। किन्तु 'चोर की दाढ़ी में तिनका' की कहावत के अनुसार अफसरों ने यह समझा कि अकबर का इशारा अंगरेज़ों ही की ओर है। इस कारण अकबर पर कड़ी दृष्टि पड़ने लगी। अकबर ने इस बात की घोषणा कर दी कि अब मैं कविता नहीं लिखूंगा। किन्तु शराबी की तोबा के समान प्राकृतिक कवि की तोबा कभी अधिक काल तक नहीं ठहर सकती। महाकवि ग़ालिब के कथनानुसार 'छूटती नहीं है मुंह से यह काफिर लगी हुई।' ज़ाहिर में तो अकबर ने शेर कहना छोड़ दिया, किन्तु चुपके-चुपके शेर लिखते रहे और अपने अभिन्न-हृदय मित्रों को सुनाते रहे। इस समय के लिखे हुए दो-एक शेर भी सुन लीजिये—

[१]

हुकम अकबर को मिला है कि न लिखो अशश्रार ।

ख्वाजा हाफ़िज़ भी निकाले गये मयखाने से ॥

[२]

सोने इधर ऐसे कि सहें जोरे-रफ़ल भी ।

कान उनके वो नाजुक कि ग़रां मेरी ग़ज़ल भी ॥

महात्मा गांधी के असहयोग (Non Co-operation) के सिद्धान्त से आपकी पूर्ण सहानुभूति थी। आपकी ताड़ने वाली निगाह बहुत पहले ही ताड़ गई थी कि शिक्षा तथा सभ्यता के नाम पर जितनी सरकारी संस्थाएँ हैं सबका यही आशय है कि हममें से जातीयता के भाव जाते रहे और उन्हीं के इशारों पर नाचने लगें—

उन्हीं के मतलब की कह रहा हूँ, ज़बान मेरी है बात उनकी ।

उन्हीं की महफ़िल संवारता हूँ, चिराग़ मेरा है रात उनकी ॥

फ़क़त मेरा हाथ चल रहा है, उन्हीं का मतलब निकल रहा है ।

उन्हीं का मज़मून उन्हीं का कागज़, कलम उन्हीं का दवात उन्हींकी ॥
 आपका विचार था कि यदि यही दशा रही तो जिनके अन्दर
 जातीयता के भाव बने हुये हैं उनके अन्दर से भी शीघ्र ही लुप्त हो
 जायेंगे—

वो इसको महवे-कलीसा बनाके छोड़ेंगे ।
 इस ऊंट को खरे-इसा बनाके छोड़ेंगे ॥
 करेंगे शौक़ से मुसलिम ग़िज़ा मय दाख़िल ।
 शराब को भी हरीसा बनाके छोड़ेंगे ॥
 कहा ये शेख़ से अकबर ने रोक अपनी ज़बां ।
 कि तुझको भी वे मुझीसा बनाके छोड़ेंगे ॥

अंग्रेज़ी शिक्षा के विषय में आपका विचार था—

सय्यद हुनर दिखलाये अगर सब मुमकिन है ।
 बुलबुल के लिए क्या मुशकिल है उल्लू भी बने और खुश भी रहे ॥
 बहुत से लोगों का विचार है कि अंग्रेज़ी शिक्षा के कारण हिन्दू-
 मुसलमानों की पारस्परिक फूट बढ़ती जाती है । आपका भी यही विचार
 था । देखिये आपने इस विचार को किस अनुपम ढंग से व्यक्त किया है—

नज्द में भी मगरिबी तालीम जारी हो गई ।

लैलओ-मजनूँ में आख़िर फौजदारी हो गई ॥

आपका विश्वास था कि भारतवर्ष की अधोगति का दायित्व सरकार
 ही पर है—

ले गये घसीट के मुझ को परेड पर ।

तैयार हो रहा था मैं जन्नत के वास्ते ॥

आप यह भी जानते थे कि जब तक भारतवर्ष अंग्रेज़ों की गुलामी
 में रहेगा उन्नति नहीं कर सकता—

दस्तो-पा-बस्ता^१ हूँ मैं ज़ाहिर कोई गुन क्या करूँ ।

दूसरों के बस में हूँ फ़िक्रे-तमद्दुन^२ क्या करूँ ॥

एक और स्थान पर आपने लिखा है—

दाने का है हक्के^१ नरबोनुमा,^२ इससे तो मुझे इंकार नहीं ।

लेकिन ये बताओ भुक्तको जरा, वो खेत में है या पेट में है ॥

महात्मा गांधी के अनुसार आप कौन्सिलों से बिल्कुल दूर रहने के पक्ष में थे । स्वराज्य-वादियों का यह विचार, कि कौन्सिलों को तोड़ने के लिये कौन्सिलों में जाना चाहिये, आपको पसन्द न था । सुनिये आप क्या कहते हैं—

माना कि पढ़ोगे वां पहुँच कर लाहौल^३ ।

जाना ही जरूर क्या है शैतान की तरफ ॥

महात्मा गांधी के समान आप ईश्वर के न्याय तथा दया पर भी पूर्ण विश्वास रखते थे । इस विषय को लेकर आपने एक पूरी गज़ल कह डाली है—

मसजिद में खुदा खुदा किये जाओ ।

मायूस न हो दुआ किये जाओ ॥

हरगिज़ न 'क्रज़ा करो'^४ नमाज़ें ।

मरते मरते अदा किये जाओ ॥

समझो ये वक्ते-इम्तहां है ।

हों भी जो सितम वफा किये जाओ ॥

कितना ही हो वक्ते-बेहिजाबी^५ ।

तुम पैरविये^६ हया^७ किये जाओ ॥

उम्मीदे-शफा^८ खुदा से रक्खो ।

क्यों तर्क^९ करो दवा किये जाओ ॥

-
१. अधिकार । २. विकास । ३. भाग शैतान । ४. छोड़ो ।
 ५. बेशर्मी का वक्त । ६. अनुगमन । ७. शर्म । ८. आराम ।
 ९. छोड़ना ।

आपके विचारानुसार तो अंग्रेजों के साथ सहयोग हानिप्रद ही नहीं वरन् एक प्रकार से असंभव था—

क्या हो बिनाये-उल्फत आखिर मुनासबत क्या ।

मैं झाँके-बेकसी पर वो तख्ते-सल्तनत पर ॥

किन्तु आप दिखावे का असहयोग पसन्द नहीं करते थे । आपका कहना था कि यदि पब्लिक में आने-जाने के लिये गाढ़े के कपड़े बनवा लिये और दिल में पश्चिमी सभ्यता का दम भरते रहे तो इससे कुछ लाभ न होगा—

हुस्ने-बुत दौर^१ में लिये जाता है ।

क्या नतीजा है बिरहमन से खिंचे रहने का ॥

इसी प्रकार असहयोग के समर्थन में आपके बहुत से शेर उद्धृत किये जा सकते हैं । मरने से कुछ दिन पहले आपने एक पूरा रिसाला 'गांधी नामा' के नाम से कह डाला था । महात्मा गांधी के विषय में आपकी सम्मति थी—

गांधी में सब भलाई लेकिन वो महज़ बेबस ।

साहब में सब बुराई लेकिन वो खूब चौकस ॥

महात्मा गांधी से एक बात में आपका मतभेद था । महात्मा जी केवल आत्मबल पर भरोसा रखते थे, किन्तु आप शारीरिक बल को काम में लाने के भी विरुद्ध नहीं थे । आपके निम्नलिखित शेरों से यही बात झलकती है—

खूब ये बात कही उनसे पुकारो उसको ।

बद्धुआ साँप को क्या देते हो मारो उसको ॥

एक और स्थान पर इससे भी साफ़ शब्दों में लिखते हैं—

कसीदे से न चलता है न ये दोहे से चलता है ।

समझ लो खूब कारे-सल्तनत लोहे से चलता है ॥

फिर भी आप असहयोग रूपी अस्त्र पर बहुत-कुछ भरोसा रखते थे—

जो पूछा 'क्यों कमर इस मनज़िले तारीक में बाँधी।'
 ज़बाने हज़रते-शौकत से बोले हज़रते-गांधी ॥
 'मबाश अय रह-नवरदे-इश्क़ शाफ़िल अज़ तपीदन हा।
 कि दर आख़िर बजाये भी रसद अज़ खुद रमीदन हा ॥'

अर्थात् यह पूछने पर कि आप इस अन्धकारमय पथ पर चलने के लिए क्यों कटिबद्ध हो गये हैं, महात्मा गांधी जी ने मौलाना शौकतअली के शब्दों में यह उत्तर दिया, 'ए. प्रेम-पथ के पथिक, तू तड़पने से मत चूक, क्योंकि इस पथ पर अपने-आपको बिल्कुल भूल जाने वाला ही अन्त में अपने इष्ट स्थान पर पहुँच जाता है।'

पाठक शायद प्रश्न करेंगे कि जब अकबर सत्याग्रह के सिद्धान्त के इतने अधिक पक्ष में थे तो फिर आपने सत्याग्रह-संग्राम में भाग क्यों नहीं लिया? रण-क्षेत्र में क्यों नहीं कूदे? केवल मौखिक सहानुभूति ही क्यों प्रकट करते रहे? इस प्रश्न का उत्तर हम अकबर के ही शब्दों में देना चाहते हैं—

उधर है जेल की जहमत^१ इधर है कौम की लानत।
 उधर आराम जाता है इधर ईमान जाता है ॥
 व मजबूरी वो माजूरी^२ शरीके-कैम्प हैं 'अकबर'।
 मगर जिसको बसीरत^३ है उसे पहचाना जाता है ॥

इन सब बातों का ध्यान रखते हुए आपका सत्याग्रह-संग्राम में प्रत्यक्ष रूप से भाग न लेना क्षम्य समझा जा सकता है। किन्तु ऐसा होते हुए भी आप सत्याग्रह का विरोध करने वाले सरकारी-खुशामदियों को चेतावनी दे गये—

कम्पू का जो साथी हो तो घर उसका मिटेगा ।

बंगले में हैं वो और ये मोहल्ले में पड़ेगा ॥

अकबर का विचार था कि देश के नेता राजनीति के विद्वान ही होने चाहियें । ऐरे-गैरे-नरथू-खैरे का नेता बन जाना आपको नहीं भाता था । इसी कारण आप यह उचित न समझते थे कि मौलवी लोग राजनीतिक विषयों पर भी 'फतवे' देने लगे । मौलवी को धार्मिक क्षेत्र में काम करना चाहिये और राजनीतिज्ञों को राजनीतिक क्षेत्र में । देखिये इस भाव को आपने निम्नलिखित पद्य में किस सुन्दरता के साथ प्रकट किया है—

नई रोशनी का हुआ तेल कम ।

हकूमत ने उससे किया मेल कम ॥

इधर मौलवी 'कस-म-पुरसी में थे'^१ ।

न आफिस में थे और न कुरसी में थे ॥

ये ठहरी कि आपस में मिल जाइये ।

सयासी^२ कमैटी में पिल जाइये ॥

इसी रोशनी का है बस ये जहूर ।

खुदा जाने जुल्मत^३ है इसमें कि नूर^४ ॥

भावार्थ यह है कि एक ओर तो नई रोशनी वाले अर्थात् अंग्रेजी परीक्षा पाये हुए नौकरियाँ न मिलने के कारण रुष्ट थे । दूसरी ओर मौलवी भी नाराज थे क्योंकि सरकार में उनकी कोई बात न पूछता था । अन्त में दोनों ने मिलकर यही ठानी कि सरकार के विरुद्ध आन्दोलन आरम्भ कर दिया जाय । ईश्वर ही जाने, इस मेल का क्या परिणाम निकलेगा ?

१. कोई पछुने वाला न था । २. राजनीतिक । ३. अन्धकार ।

४. प्रकाश ।

हिन्दू-मुस्लिम-एकता

अकबर देश के हित के लिए हिन्दू-मुसलमानों की एकता को बहुत आवश्यक समझते थे। हिन्दू तथा मुसलमानों को चाहिए कि आपका निम्नलिखित उपदेश सदव ध्यान में रखें —

कहता हूँ हिन्दू वो मुसलमां से यही ।
अपनी-अपनी रविश^१ पै तुम नेक रहो ॥
लाठी है हवाये-दहर^२ पानी बन जाओ ।
मौजों^३ की तरह लड़ो मगर एक रहो ॥

कैसे मार्मिक शब्द है। उपमा कैसी अनुपम है। हिन्दू-मुस्लिम एकता का पक्षपाती होने के कारण अकबर कुरबानी तथा हिन्दी-उर्दू का झगड़ा उठाने वालों के विरुद्ध रहते थे। देखिये निम्नलिखित पद्य में अकबर ने इस प्रकार का झगड़ा उठाने वालों के कैसी चुटकी ली है—

हम उर्दू को अरबी क्यों न करें, वो उर्दू को भाषा क्यों न करें ।
झगड़े के लिये अखबारों में, मजमून तराशा क्यों न करें ।
आपस में अदावत^४ कुछ भी नहीं, लेकिन एक अखाड़ा कायम है ।
जब इससे फलक का दिल बहले, हम लोग तमाशा क्यों न करें ॥

अकबर न तो मुसलमान मौलवियों के समान उर्दू में बड़े-बड़े अरबी-फ़ारसी शब्द ठूसने के पक्ष में थे और न आर्यसमाजियों के समान हिन्दी में कठिन संस्कृत शब्दों का प्रयोग ही उचित समझते थे। आप चाहते थे कि उर्दू उर्दू ही रहे। इसी विषय से सम्बन्ध रखने वाला एक और पद्य भी सुनने लायक है—

१. चलन । २. संसार की हवा । ३. लहर । ४. दुश्मनी ।

यदि कोई जाति अपनी उन्नति करना चाहती है तो वह जाति यूरुप की दृष्टि में कांटे के समान खटकने लगती है। उसके मार्ग में अनेकों रुकावटें डालने का प्रयत्न किया जाता है। पूर्वोक्त जातियों की इस हृदय-विदारक दशा का अकबर ने ऐसा विनोदपूर्ण चित्र उतारा है कि हंसी रोकना मुश्किल हो जाता है सुनिये क्या कहते हैं—

सर-अक्र-राज़ी^१ हो जंटों की तो गरदन काटिये उनकी ।

अगर बन्दर की बन आये तो फ़ैजे-^२इरतफ़ा^३ कहिये ॥

अकबर के राजनीतिक विचारों को पढ़ने से मालूम होता है कि आप बड़े ही निर्भीक वक्ता थे। सरकारी नौकर होते हुये भी इस प्रकार के विचार प्रगट कर जाना आप ही का काम था—

जब आंख को खुलने में हो भ्रमका, जब मुंह में ज़बां जबिश^४ से डरे ।
इस क्रौढ़ में क्योंकर जीना हो, अल्लाह ही अपना फ़जल करे ॥
क्या नाज़ हो ऐसी साअत^५ पर, अक्रसोस है ऐसी हालत पर ।
या झूठ कहे या कुछ न कहे, या कुफ़ करे या कुछ न करे ॥
क्रांतिल को भरोसा कुव्वत का, और हम को खुदा की रहमत^६ का ।
होना था जो कुछ हो ही लिया, वो भी न रुका हम भी न डरे ॥

अकबर के पत्र

इस छोटी सी जीवनी को समाप्त करने से पहले अकबर के पत्रों से भी पाठकों का परिचय करा देना उचित प्रतीत होता है। यूँ तो स्यात् ही कोई ऐसा मनुष्य हो जिसे कभी पत्र लिखने या लिखवाने का काम न पड़ता हो, किन्तु साधारण मनुष्यों के पत्रों तथा साहित्यज्ञों के पत्रों में आकाश-पाताल का अन्तर होता है। अंग्रेजी आदि उत्तम भाषाओं

१. बढ़ती । २. प्रसाद । ३. विकास । ४. हिलाना । ५. समय ।

६. क्षमा ।

में तो उपन्यास आदि के समान पत्र लेखन भी साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण शाखा समझी जाती है। खेद का विषय है कि हिन्दी वालों का साहित्य के इस अङ्ग की पूर्ति की ओर बिल्कुल भी ध्यान नहीं है। एक भी हिन्दी लेखक या कवि ऐसा नहीं है जिसके पत्र साहित्य की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण ठहराये जा सकें। और हो भी कहाँ से ?

हम लोग तो हिन्दी में पत्र लिखना अपमान-सूचक तथा अंग्रेजी से अनभिज्ञ होने का कारण समझते हैं। अस्तु, यद्यपि उर्दू में भी साहित्य की दृष्टि से अच्छे पत्र लिखने वाले बहुत कम साहित्यसेवी हुए हैं, किन्तु फिर भी गालिब, आजाद (शम्सुल उल्मा मौलवी मौहम्मद हुसैन आजाद) और अकबर—इन तीन लेखकों—के पत्र ऐसे हैं जो साहित्य-सेवियों में आदर की दृष्टि से देखे जा सकते हैं।

अकबर के पत्रों की भाषा बहुत ही सरल तथा सारगर्भित है। दार्शनिक समस्याओं को भी बहुत ही साधारण शब्दों में हल कर दिया है। बड़े-बड़े भावों को दो शब्दों में व्यक्त कर दिया है। यदि किसी के विरुद्ध भी लिखा है तो इस ढङ्ग से उसको किंचित भी बुरा न मालूम हो। आपके पत्र पढ़ते समय ऐसा प्रतीत होता है कि मानो आप सामने खड़े बात कर रहे हैं। पाठकों के मनोरंजन के लिये यहाँ पर आपके तीन छोटे-छोटे पत्र उद्धृत किये जाते हैं। इनमें से पहले दो पत्र देहली निवासी ख्वाजा हसन निजामी के नाम हैं और तीसरा पत्र मौलाना अब्दुल माजिद के नाम है—

[१]

‘मुकर्रमी दाम मजद कुम’ !

मुद्दत से आपका खत नहीं आया। हूरबानू कैसी है ? मेरे खतूत

१. मान्यवर ! आप हमेशा बुजुर्ग होवें ।

पहुँचे होंगे ? अपना हाल क्या लिखूँ ? मेरी दुनिया हो चुकी है । जिन्दगी बाक़ी रह गई है । उसका बसर करना दुश्वार हो रहा है ।

बढ़े जाते हैं बेमकसूद^१ बहरे-जिन्दगानी^२ में ।

अमराज से तकली एक तरफ़ । दुनिया की सदैव महरी का आलम एक तरफ़ । यागने-मुवाफ़िक़ का साथ नहीं । खुदायेकरीम नदारद । इशरत मंज़िल की बिरानी और अपनी माजूरी पेशे-नज़र । माजिद मियाँ जुलाई में आने वाले हैं । मैं तो खुद ही यहाँ इशरत मियाँ का महमान हूँ । महमां-नवाज़ी क्या करूँगा ।

एक ख़त में एक फ़िक़रा लिख गया हूँ । इख़्तसार और मानी को देखिये । इशरत मियाँ चाहते हैं कि आराम से रहूँ, खुश रहूँ । लेकिन आराम की उम्र नहीं, खुशी की अमलदारी नहीं । ग़ालिब इस फ़िकरे को आप लिटरेरी और पब्लिक माल करार दें ।

अकबर-प्रतापगढ़, १६ जून, सन् १९२१ ई० ।

[२]

मुकर्रमी^३ ! फ़तवाये-फिरत यही है कि देहली में रहिये । तकलीफें उठाइये । बा-सलीका नौकर हम लोगों के लिए उनका होते जाते हैं । फ़ारसी भूल जाइये, गुस्सा कम हो जाय । मेरठ का सफ़र भी इस मौसम में ज़हमत^४ से ख़ाली न हुवा होगा । नवाब साहब के मोटर से गिरने का अफ़सोस हुआ । अपना शेर याद आया—

अज्म^५ कर तकलीदे-मशरिब^६ का हुनर के ज़ोर से ।

लुफ़ क्या है लद लिए मोटर पै ज़र के ज़ोर से ॥

नवाब साहब को आपने फरिश्ता-सिफ़त लिखा है । मैं कहता हूँ इससे भी ज्यादा । फरिश्ते सिर्फ़ नेक और मुकद्दस^७ होते हैं । आक्रिल

१. बिना उद्देश्य । २. जीवन रूपी समुद्र । ३. मान्यवर ।

४. कष्ट । ५. इरादा । ६. पश्चिम का अनुगम । ७. पवित्र ।

की उनको जरूरत नहीं क्योंकि सिर्फ हुक्मेखुदा की तामील कर देते हैं। नवाब साहब अबलमन्द भी है। मेरे क़दीम इनायत फरमा हैं। हूर^१ को फिर बुला लीजियेगा। उर्दू आ जाय मजहब से वाकिफ हो जाय। बस काफी है। बहुत प्यारी लड़की है और वाजिब-उल्-रहम है।

अकबर—इलाहाबाद, २२ मई, सन् १६२२ ई०

[३]

इलाहाबाद—२८ अगस्त, सन् १६१७ ई०

अजीज मुकर्रम सलमा अल्लाह ताला ! आपने खूब लिखा..... की निस्वत। भला देखिये तो जो शरूस हाफिज^२ को बद कहे उसको क्या कहूँ ? मगर मजबूरी है।

अफसोस है कि आप से मुझ से कबल-रवानगी हैदराबाद मुलाकात न होगी। खैर अल्लाह आपको कामयाब करे। मैं क्या ? मेरी ज़िन्दगी क्या ?

फलक^३ मशशाक़ है पैहम^४ नया जलवा दिखाने में।

ज़मी को देर क्या गुज़रे हुआँ को भूल जाने में ॥

लखनऊ पहुँचा तो आपके बग़ैर सूना नजर आयगा। खतीब भेजता हूँ। बाद मुलाहज़ा वापिस फरमाइये। हैदराबाद से खत लिखियेगा। ख्वाजा गुलाम हुसैन साहब का इन्तक़ाल इब्रत-अंग्रेज है। वह मुझ से भी मिले थे। लेकिन भूल जाने में दुनिया को देर न लगेगी। क्या राजे-हस्ती है। खुदा ग़ौर की फुरसत दे। मालूम हुआ कि आपके दोस्त ख्वाजा साहब को चीफ़ कमिश्नर ने अपने सूबे में क़ैदे-निगरानी से बरी

१. ख्वाजा साहब की लड़की का नाम है। २. फारसी का प्रसिद्ध कवि। ३. आकाश। ४. लगातार।

कर दिया । काश यहाँ भी ऐसा हो । बनें साहब लखनऊ कब आयेंगे ?
कब तक रहेंगे ?

—अकबर

निस्सन्देह अकबर अपने समय के उर्दू के सबसे बड़े तथा अनुपम कवि थे । आपकी मृत्यु से उर्दू-साहित्य को जो हानि पहुँची है उसका अनुमान नहीं किया जा सकता । खेद की बात तो यह है कि शीघ्र ही आपके स्थान की पूर्ति की कोई आशा नहीं दिखाई देती । आपके स्वर्ग-वास ने बहुत दिनों के लिए उर्दू-समाज को सूना कर दिया है—

कोई बैठ के लुप्त उठायेगा क्या ।

कि जो रौनके-बज़म तुम्हीं न रहे ॥

—अकबर

महाकवि अकबर का उर्दू-काव्य

धर्म, तत्त्वज्ञान तथा उपदेश

१—कमसिन हो अभी तजरुबा दुनिया का नहीं है ।

तुम खुद ही समझ जाओगे खुदा भी है कोई चीज़ ॥ १ ॥

तदबीर सदा रास्त जो आती नहीं अकबर ।

इन्सान की ताक़त के सिवा भी है कोई चीज़ ॥ २ ॥

मैंने कहा क्यों लाश पै आक्रा की है मरता ।

होटल की तरफ जा गिज़ा भी है कोई चीज़ ॥ ३ ॥

कुत्ते ने कहा कि हो ये जहालत की तास्सुब ।

लेकिन मेरे नज़दीक वफ़ा भी है कोई चीज़ ॥ ४ ॥

शब्दार्थ : कमसिन—कम उम्र, रास्त न आना—ठीक न पड़ना,
आक्रा—स्वामी, जहालत—मूर्खता, तास्सुब—पक्षपात ।

२—जो मिल गया वो खाना दाता का नाम जपना ।

इसके सिवा बताऊँ क्या तुम को काम अपना ॥ १ ॥

रोना है तो इसका कोई नहीं किसी का ।

दुनिया है और मतलब मतलब है और अपना ॥ २ ॥

अब बिरहमन हमारा तेरा है एक आलम ।

हम खाब देखते हैं तू देखता है सपना ॥ ३ ॥

बे इश्क के जवानी कटनी नहीं मुनासिब ।

क्योंकर कहूँ कि अच्छा है जेठ का न तपना ॥ ४ ॥

शब्दार्थ : आलम—दशा ।

३—अजल से वे डरें जीने को जो अच्छा समझते हैं !

यहाँ हम चार दिन की ज़िन्दगी को क्या समझते हैं ॥ १ ॥

यक़ी कुफ़ार को आता नहीं रोज़े-क़यामत का ।

इसे भी वे तुम्हारा वायदे-फ़रदा समझते हैं ॥ २ ॥

मैं अपने नक़द दिल से जिन्से-उल्फ़त मोल लेता हूँ ।

अतिब्बा को ज़रा देखो इसे सौदा समझते हैं ॥ ३ ॥

इसे हम आख़िरत कहते हैं जो मशगूले-हक़ रक्खे ।

ख़ुदा से जो करे शाफ़िल उसे दुनिया समझते हैं ॥ ४ ॥

शब्दार्थ : कुफ़ार—नास्तिक, क़यामत—ईश्वरीय न्याय का दिन, फ़रदा—कल, उल्फ़त—प्रेम, अतिब्बा—वैद्य, सौदा—पागलपन, आख़िरत—परलोक, मशगूले-हक़—ठीक मार्ग पर ।

४—मुश्ताक़ नहीं ज़िन्दगी के ।

मरना है तो क्या करेंगे जी के ॥ १ ॥

पाई न किसी में वू वफ़ा की ।

चाहा था कि हो रहें किसी के ॥ २ ॥

तौहीद का मसला है असली ।

बाक़ी हैं शगूफ़े हिस्ट्री के ॥ ३ ॥

रिन्दी किस काम की यह अक़बर ।

मिलते ही नहीं जब किसी से पी के ॥ ४ ॥

शब्दार्थ : मुश्ताक़—इच्छुक, तौहीद—अद्वैत, मसला—सिद्धान्त, शगूफ़े—मस्वियाये, हिस्ट्री—इतिहास, रिन्दी—मस्ती ।

५—हो मुझी पै बुतों की चश्मे-करम दिल को ये तलब अस्लान रही ।

मुझको भी ख़ुदा ने ग़ैरत दी उनको जो मेरी परवान रही ॥ १ ॥

दुनिया का तरदुद जब तक था जब तक कि हम उसके तालिब थे ।

फेरी जो नज़र ग़म हो गये कम रग़वत न रही दुनिया न रही ॥ २ ॥

सब पूछिये तो राहत हो मिलो दुनिया से जुदा हो जाने में ।
थोड़ी सी उदासी है भी तो हो आकृत तो मगर बरपा न रही ॥ ३ ॥

शब्दार्थ : चश्मे-करम—कृपा की दृष्टि, तलब—इच्छा, अस्ला—
बिल्कुल, गैरत—लज्जा, तरदुद—दुःख, तालिब—इच्छुक, रगबत—
प्रवृत्ति, राहत—आराम ।

६—फलसफ़ी को बहस के अन्दर खुदा मिलता नहीं ।
डोर को सुलझा रहे हैं और सिरा मिलता नहीं ॥ १ ॥
मारफ़त खालिक की आलम में बहुत दुशवार है ।
शहरे-तन में जब कि खुद अपना पता मिलता नहीं ॥ २ ॥
आक़िलों के लुफ़ को काफ़ी है दुनियावी खुशी ।
आक़िलों को बेग़मे-उक़बा मज़ा मिलता नहीं ॥ ३ ॥

शब्दार्थ : मारफ़त—ज्ञान, खालिक—विधाता, आलम—संसार,
उक़बा—परलोक ।

७—सब जानते हैं इल्म से है ज़िन्दगीये-रूह ।
बेइल्म है अगर तो वो इन्सां है नातमान ॥ १ ॥
बे इल्म बे हुनर है जो दुनिया में कोई क़ौम ।
नेचर का इक़तज़ा है रहे बनके वो गुलाम ॥ २ ॥
तालीम अगर नहीं है ज़माने के हस्ब हाल ।
फिर क्या उम्मीदे-दौलतो-आरामो-अहताराम ॥ ३ ॥

शब्दार्थ : इक़तज़ा—तक़ाज़ा, हस्ब हाल—समय के अनुसार,
अहताराम—मान ।

८—कुछ शर्ज़ और है अहबाब न इस शक में रहें ।
बस यह है शौक़ कि पब्लिक की झकझक में रहें ॥ १ ॥
नहीं मंज़ूर नमाज़ों में गुज़ारें रातें ।
हां कमेटी हो तो उलझे हुए झकझक में रहें ॥ २ ॥

नगमये-मुर्गो-सहर से नहीं अंजन को गरज ।
पेट अंगारों से भर दीजिये भकभक में रहें ॥ ३ ॥

शब्दार्थ : ग्रहबाब—मित्रगण, नगमये-मुर्गो-सहर—प्रातःकाल के मुर्ग की आवाज ।

९—बस यही काम सबको करना है ।
यानी जीना है और मरना है ॥ १ ॥
अब रही बहस रंजो राहत की ।
ये फ़क़त वक्त का गुज़रना है ॥ २ ॥
सब से बदतर बुतों से है उम्मीद ।
सब से बेहतर खुदा से डरना है ॥ ३ ॥

१०—ये शेख़ अकबर से इतना क्यों खफ़ा है ?
ये क्यों ग़ैज़ो-ग़ज़ब जोरो जफ़ा है ॥ १ ॥
है नहीं भगड़े की इस में कोई बात ।
यह एक कौले-हकीमे-बाशफ़ा है ॥ २ ॥
न हो मज़हब में जब ज़ोरे-हुकूमत ।
तो वह क्या है फ़क़त एक फ़लसफ़ा है ॥ ३ ॥

११—आफ़िशल आमालनामे की न होगी कुछ सनद ।
हथ में तो नामये-आमाल देखा जायगा ॥ १ ॥
बच रहे ताऊन से तो अहले-ग़फ़लत बोल उठे ।
अब तो मौहलत है फिर अगले साल देखा जायगा ॥ २ ॥
तह करो साहब नसब-नामे वह वक्त आया है अब ।
बे असर होगी शराफ़त माल देखा जायगा ॥ ३ ॥

शब्दार्थ : नामये-आमाल—कर्मों का लेखा । नसबनामा—वशावलि ।

१२—क्या है मज़हब एक मुत्की और सोशल इन्तज़ाम ।

ये नहीं पहचान हरगिज़ काफ़िरो-दीदार की ॥ १ ॥

सूरतो-अलफ़ाज़ का अकसर नहीं है ऐतबार ।

हैं फ़कत ये आदतें रफ़्तार की गुफ़्तार की ॥ २ ॥

हैं हर एक मज़हब में कुछ काफ़िर भी कुछ दींदार भी ।

याद रख तू बात ये एक महरमे-इसरार की ॥ ३ ॥

शब्दार्थ : सोशल—सामाजिक, रफ़्तार—चलन, गुफ़्तार—वातचीत, महरमे-इसरार—रहस्य जानने वाला ।

१३—फिलसफी तजरूबा करता था हुआ मैं रुख़सत ।

मुझ से वह कहने लगा आप किधर जाते हैं ॥ १ ॥

कह दिया मैंने हुआ तजरूबा मुझको तो यही ।

तजरूबा हो नहीं चुकता है कि मर जाते हैं ॥ २ ॥

१४—हर खाक के पुतले को उभारा है फ़लक ने ।

यकताई के इज़हार में मस्त अहले-जमीं हैं ॥ १ ॥

हर एक को यह दावा है कि हम भी हैं कोई चीज़ ।

और हम को यह नाज़ कि हम कुछ भी नहीं हैं ॥ २ ॥

शब्दार्थ : फ़लक—आकाश, यकताई—अद्वितीयता, अहले-जमी—पृथ्वी वाले, नाज़—गर्व ।

१५—किसी को भी किसी से कुछ नहीं इस बाब में झगड़ा ।

करो तुम ध्यान परमेश्वर का दिल को उसका दर्शन हो ॥ १ ॥

मगर मुश्किल तो है यह नाम सब लेते हैं मज़हब का ।

ग़रज़ लेकिन ये होती है जथा हो और भोजन हो ॥ २ ॥

१६—मैं तो हमदर्द हूँ बस उनकी गिरफ़्तारी का ।

क्रैदे-हस्ती से जो मुश्ताक़ हैं आज़ादी के ॥ १ ॥

ढूँढना चाहिये था अकबरे-बेकस को वहां ।
एक वीराना भी है मुत्तसिल आबादी के ॥ २ ॥

शब्दार्थ : हस्ती—अस्तित्व, मुश्ताक—इच्छुक, मुत्तसिल—निकट ।

१७—पेच मज़हब का किसी साहब ने ढीला कर दिया ।
सादा तबअों को भी रंगीला कर दिया ॥ १ ॥
शौक पैदा कर दिया बंगले का और पतलून का ।
वह मसल है मुफ़लिसी में आटा गीला कर दिया ॥ २ ॥

शब्दार्थ : सादा तबअों—सीधे स्वभाव वालों ।

१८—जनाबे-शेख से जाकर ज़रा लिल्लाह कह देना ।
कि गुमराही थी मुझ से रिन्द को गुमराह कह देना ॥ १ ॥
बहुत मुश्किल है बचना बादये-गुलगूँ से खिलवत में ।
बहुत आसान है यारों में मआज़-अल्लाह कह देना ॥ २ ॥

शब्दार्थ : लिल्लाह—ईश्वर के लिये, रिन्द—मस्त, खिलवत—एकान्त,
गुमराह—भ्रष्ट, बादये-गुलगूँ—सुख शराव, मआज़-अल्लाह—ईश्वर की
शरण ।

१९—मुनकिर हैं रूह के जो ये अहले-गरूर ।
एक अमर है पूछना हमें उनसे ज़रूर ॥ १ ॥
है फ़हमी-ख़िर्द का तुम को दावा यह कहो ।
पैदा हुआ मादे में क्यों कर यह शऊर ॥ २ ॥

शब्दार्थ : मुनकिर—इंकार करने वाले, फ़हम—समझ, ख़िर्द—
बुद्धि, मादा—प्रकृति ।

२०—चाल दुनिया की तुम्हें महसूस हो दुशवार है ।
यह ज़मीं चलती है तेज़ी से मगर हिलती नहीं ॥ १ ॥

दिल के जो दुश्मन हैं उनके शौक में रहती है आँख ।
जान का मालिक जो है उससे नज़र मिलती नहीं ॥ २ ॥

शब्दार्थ : महसूस—अनुभव, दुश्वार—कठिन ।

२१—खाने से अगर जीना होता मरते न कभी जाने वाले ।
खाना भी खुदा के हुक्म से है जीना भी खुदा के हुक्म से है ॥१॥
ईमान से उलफ़त रखता हूँ शैतान को दुश्मन जानता हूँ ।
उलफ़त भी खुदा के हुक्म से है कीना भी खुदा के हुक्म से है ॥२॥

शब्दार्थ : उलफ़त—प्रेम, कीना—द्वेष ।

२२—दिल मेरा जिससे बहलता कोई ऐसा न मिला ।
बुत के बन्दे मिले अल्लाह का बन्दा न मिला ॥ १ ॥
सथ्यद उठे जो गज़ट लेकर तो लाखों लाये ।
शेख़ कुरआन दिखाते फिरे पैसा न मिला ॥ २ ॥

२३—इनक़लाबे-जहाँ को देख लिया ।
हुब्बे-दुनियां से क़ल्ब पाक हुआ ॥ १ ॥
कल कली खिल के हो गई थी फूल ।
फूल कुम्हला के आज खाक हुआ ॥ २ ॥

शब्दार्थ : इनक़लाब—परिवर्तन, हुब्बे-दुनिया—संसार का प्रेम,
क़ल्ब—दिल ।

२४—है सबो-क़नाअत एक बड़ी चीज़ ।
लज्ज़त अभी उसकी तूने चक्की है कहाँ ॥ १ ॥
दुनिया-तलबी के वाज़ में मद्ध है तू ।
यह तो ज़रा समझ कि रक्खी है कहाँ ॥ २ ॥

शब्दार्थ : क़नाअत—संतोष, वाज़—उपदेश, मद्ध—निमग्न ।

२५—कहा बुकरात से दुनिया में क्यों आया तू ए दाना ।

कहा उसने कि मैं लाया गया मुझको पड़ा आना ॥ १ ॥

कहा क्योंकर बशर की उम्र बोला साथ हैरत के ।

कहा क्या जाना ? बोला कुछ नहीं जाना यही जाना ॥ २ ॥

शब्दार्थ : बुकरात—यूनान का प्रसिद्ध तत्त्वज्ञानी, हैरत—आश्चर्य ।

२६—‘अकबर’ से मैंने पूछा अय वाइजे-तरीक़त ।

दुनियाये-दूँ से रक्खूँ मैं किस क्रदर तआल्लुक ॥ १ ॥

उसने दिया बलागत सं यह जवाब मुझको ।

अंग्रेज़ को है नेटिव से जिस क्रदर तआल्लुक ॥ २ ॥

शब्दार्थ : वाइजे तरीक़त—धर्मोपदेशक, दुनियाये-दूँ—कमीनी दुनिया ।

२७—इल्मो-हिक़मत में हो गर ख्वाहिशे-फेम ।

सरकार की नौकरी को हरगिज़ न कर एम' ॥ १ ॥

शादी न कर अपनी क़बले-तहीसीले-अलूम ।

बुत हो कि परी हो ख्वाह वो हो कोई मेम ॥ २ ॥

शब्दार्थ : एम—उद्देश्य, फेम—ख्याति, क़बल—पूर्व, तहीसीले-अलूम—विद्या प्राप्त करना ।

२८—कुछ सनअतो-हिफ़त पै भी लाजिम है तवउजो ।

आख़िर यह गवमैँट से तनख्वाह कहाँ तक ॥ १ ॥

मरना भी जरूरी है ख़ुदा भी है कोई चीज़ ।

अय हिर्स के बन्दे हविसे-जाह कहाँ तक ॥ २ ॥

शब्दार्थ : सनअतो-हिफ़त—शिल्प, जाह—पद, औहदा ।

२९—शक्रलत की हंसी से आह भरना अच्छा ।

अक्रआले-मुज़िर से कुछ न करना अच्छा ॥ १ ॥

‘अकबर’ ने सुना है अहले-गैरत से यही ।

जीना ज़िल्लत से हो तो मरना अच्छा ॥ २ ॥

शब्दार्थ : अफ़आल —कार्य, मुज़िर—हानिकारक, अहले-गैरत—
आत्म-सम्मान का ख्याल रखने वालों ।

३०—जो अपनी ज़िन्दगानी को हुबाब-आसा समझते हैं ।

नफ़स की मौज कां मोजे-लबे दरिया समझते हैं ॥ १ ॥

जो हैं अहले-बसीरत इस तमाशागाहे-हस्ती में ।

तिलस्मे-ज़िन्दगी को खेल लड़कों का समझते हैं ॥ २ ॥

शब्दार्थ : हुबाब-आसा—बुलबुले के समान, नफ़स—सांस, अहले-
बसीरत—ज्ञानी, तमाशागाहे-हस्ती—संसार ।

३१—जब लुफ़ो करम से पेश आये महबूब ।

अगले रंजो को भूल जाना अच्छा ॥ १ ॥

जब मिस्ले-नसीम वो गले से लग जाये ।

मानिन्द कली के फूल जाना अच्छा ॥ २ ॥

शब्दार्थ : लुफ़ो करम—मेहरबानी, महबूब—प्यारा, नसीम—
प्रातःकाल की वायु ।

३२—क्या तुम से कहें जहाँ को कैसा पाया ।

गफ़लत ही में आदमी को डूबा पाया ॥ १ ॥

आँखें तो बेशुमार देखीं लेकिन ।

कम थीं बख़ुदा कि जिनको बीना पाया ॥ २ ॥

शब्दार्थ : बीना—वास्तविकता को देखने वाली ।

३३—हर एक को नौकरी नहीं मिलने की ।

हर बाग में यह कली नहीं खिलने की ॥ १ ॥

कुछ पद के तू सनअतो-जराअत को देख ।
इज्जत के लिये काफ़ी है अय दिल नेकी ॥ २ ॥

शब्दार्थ : सनअत—शिल्प, जराअत—कृषि ।

३४—आला मक़सद चाहिये पेशे-नज़र ।
कोशिश तेरी गो हो लुप्फे-ज़ाती के लिये ॥ १ ॥
फ़रहाद पहाड़ पर अमल करता था ।
शीरों के लिये कि नाशपाती के लिये ॥ २ ॥

शब्दार्थ : आला—उच्च, मक़सद—उद्देश्य, पेशे-नज़र—आँखों के सामने ।

३५—नफ़स के ताबअ हुए ईमान रुख़सत हो गया ।
वह ज़नाने में घुसे मेहमान रुख़सत हो गया ॥ १ ॥
मय उन्होंने पी अब उनके पास क्योंकर दिल लगे ।
जानवर इक रह गया इन्सान रुख़सत हो गया ॥ २ ॥

शब्दार्थ : नफ़स—वासना, ताबअ—अनुयायी, मय—शराब ।

३६—ऊँचा नीयत का अपनी ज़ीना रखना ।
अहबाब से साफ़ अपना सीना रखना ॥ १ ॥
गुस्सा आना तो नेचरल^१ है अकबर ।
लेकिन है शदीद ऐब कीना रखना ॥ २ ॥

शब्दार्थ : अहबाब—मित्रगण, नेचरल—प्राकृतिक, शदीद—सख्त, कीना—द्वेष ।

३७—औरों की कही हुई जो दोहराते हैं ।
वे फोनोग्राफ की तरह गाते हैं ॥ १ ॥

खुद सोच के हस्ब-हाल मजमूँ निकाल ।
इन्सान यूँही तरकियाँ पाते हैं ॥ २ ॥

३८—ग़फ़लत को छोड़ दीजिये कुछ काम कीजिये ।
इल्मो-हुनर से नाम का अंजाम कीजिये ॥ १ ॥
गर कुछ नहीं तो हज़रते-अकबर का क़ौल है ।
मुरदों के साथ क़ब्र में आराम कीजिये ॥ २ ॥

३९—हासिल करो इल्म तबअ को तेज़ करो ।
बातें जो बुरी हैं उनसे परहेज़ करो ॥ १ ॥
क़ौमी इज़्ज़त है नेकियों से 'अकबर' ।
इसमें क्या है कि नक़ले-अंगरेज़ करो ॥ २ ॥

४०—रोज़ी मिल जाय मालो-दौलत न सही ।
राहत हो नसीब शानो-शौक़त न सही ॥ १ ॥
दरबार में खुश रहें अज़ीज़ों के साथ ।
दरबार में बाहमी रक़ाबत न सही ॥ २ ॥

शब्दार्थ : राहत—आराम, नसीब—प्राप्त, अजीज—प्यारा, बाहमी
रक़ाबत—पारस्परिक प्रतिद्वन्दिता ।

४१—खातिर मज़बूत दिल तवाना रक्खो ।
उम्मीद अच्छी ख़याल अच्छा रक्खो ॥ १ ॥
हो जायेंगी मुश्किलें तुम्हारी आसान ।
'अकबर' अल्लाह पै भरोसा रक्खो ॥ २ ॥

शब्दार्थ : तवाना—मज़बूत ।

४२—गर जेब में फ़र नहीं तो राहत भी नहीं ।
बाबू में सक्त नहीं तां इज़्ज़त भी नहीं ॥ १ ॥

गर इल्म नहीं तो ज़ोरो-ज़र हैं बेकार ।
मज़हब जो नहीं तो आदमियत भी नहीं ॥ २ ॥

शब्दार्थ : राहत—आराम, सक्त—ताकत ।

४३—दौलत ही है जो अक्लो-मेहनत से मिले ।
लज्जत वो है कि जोशे-सेहत से मिले ॥ १ ॥
ईमां का हो नूर दिल में वो राहत है ।
इज्जत ही है जो अपनी मिललत से मिले ॥ २ ॥

शब्दार्थ :—नूर—प्रकाश, राहत—आराम, मिललत—जाति ।

४४—आमाल को हुस्न से संवारना सीखो ।
अल्लाह से नेक उम्मीद करना सीखो ॥ १ ॥
मरने से मफ़र नहीं है जब अय 'अक़बर' ।
बेहतर है यही खुशी से मरना सीखो ॥ २ ॥

शब्दार्थ : आमाल—कार्य, हुस्न—सौन्दर्य, मफ़र—भागने की जगह ।

४५—आज़ाद से दीन का गिरफ़्तार अच्छा ।
शरमिन्दा हो दिल में जो गुनहगार अच्छा ॥ १ ॥
हरचन्द कि ज़ोर भी है एक ख़सलते-बद ।
बल्लाह बेहया से मक्कार अच्छा ॥ २ ॥

शब्दार्थ : दीन—धर्म, ख़ललत—स्वभाव ।

४६—मर्द को चाहिये क़ायम रहे ईमान के साथ ।
ता-दमे-मर्ग़ रहे यादे-ख़ुदा जान के साथ ॥ १ ॥
मैंने माना कि तुम्हारी नहीं सुनता कोई ।
सुर मिलाना तुम्हें क्या फ़र्ज़ है शैतान के साथ ॥ २ ॥

शब्दार्थ : ता-दमे-मर्ग—मृत्यु-पर्यन्त ।

४७—वाइज़ ने कहा खौफ़े खुदा भी है कोई चीज़ ।

उतावुत ने कहा मेरी अदा भी है कोई चीज़ ॥ १ ॥

खुलते हुए उक़दे नज़र आते हैं हज़ारों ।

मालूम हुआ उक़दा-कुशा भी है कोई चीज़ ॥ २ ॥

शब्दार्थ : वाइज़—उपदेशक, उक़दे—ग्रन्थियाँ, उक़दा-कुशा—ग्रन्थि को खोलने वाला ।

४८—अगर मिला नहीं मिलने का आसरा तो है ।

हमें इसी में है तस्कीने-दिल खुदा तो है ॥ १ ॥

अजल को देखके ज़ेरे फ़लक करार आया ।

मुसीबतों का बिलाख़िर इक इन्तहाँ तो है ॥ २ ॥

शब्दार्थ : तस्कीने-दिल—हृदय की शान्ति, अजल—मृत्यु, जेरे फ़लक—आसमान के नीचे, करार—सन्तोष, बिलाख़िर—अन्त में ।

४९—इक नज़र का है तआल्लुक इस जहाँ से होश को ।

सब का सब इक जुम्बिशे-मिज़गां में पिनहां हो गया ॥ १ ॥

तर्के-दुनिया से हुई जमईयते-खातिर नसीब ।

हाल मेरा गो कि ज़ाहिर में परीशां हो गया ॥ २ ॥

शब्दार्थ : जुम्बिशे-मिज़गां—एक पल, पिनहां—ओभल, तर्के-दुनिया—संसार का परित्याग, जमईयते-खातिर—आत्मा की शान्ति, परीशां—विकल ।

५०—छोड़ देहली लखनऊ से भी न कुछ उम्मीद कर ।

नज़म में भी वाज़े-आज़ादी की अब ताईद कर ॥ १ ॥

साफ़ है रोशन है और है साहबे-सोज़ो-गुदाज़ ।

शायरी में बस ज़बाने-शमा की तक़लीद कर ॥ २ ॥

शब्दार्थ : नज़म—कविता, वाज़े-आज़ादी—स्वतन्त्रता का उपदेश, ताईद—अनुमोदन, साहबे-सोज़ो-गुदाज़—जलने और पिघलने वाला अर्थात् दूसरों के दुःख से दुःखी होने वाला, ज़बाने-शमा—दीपक की ली लुपी जिह्वा, तक़लीद—अनुकरण ।

भावार्थ—अब लखनऊ देहली के कवियों के रंग में कविता करना व्यर्थ है। अब तो कविता में भी स्वतन्त्रता का उपदेश होना चाहिये। कविता में दीपक की लौ रूपी जिह्वा का अनुकरण करना चाहिये। जिस प्रकार दीपक उज्ज्वल प्रकाश देता है तथा सभासदों की दुर्दशा पर अपना दिल जलाता है, इसी प्रकार कविता भी ऐसी होनी चाहिये जिसके पढ़ने से ज्ञान की वृद्धि हो तथा जिसमें जाति की दुर्दशा पर आँसू बहाये गए हों।

५१—दिन गुज़रते ही चले जाते हैं।

लोग मरते ही चले जाते हैं ॥ १ ॥

जानते हैं कि ये ग़फ़लत के हैं काम।

फिर भी करते ही चले जाते हैं ॥ २ ॥

५२—हंस के दुनिया में मरा कोई, कोई रो के मरा।

ज़िन्दगी पाई मगर उसने, जो कुछ होके मरा ॥ १ ॥

जो उठा मरने से वो, जिसकी खुदा पर थी नज़र।

जिसने दुनिया ही को पाया था, वह सब खो के मरा ॥ २ ॥

५३—बार तकलीफ़ों का मुँह पर बारे-अहसास से है सहल।

शुक्र की जा है अगर हाजत-रवा मिलता नहीं ॥ १ ॥^१

यों कहो मिल आऊँ उनसे, लेकिन 'अकवर' सच यह है।

दिल नहीं मिलता, तो मिलने का मज़ा मिलता नहीं ॥ २ ॥

शब्दार्थ : बार—बोझ, जा—स्थान, हाजत-रवा—आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाला।

५४—करेगा क़द्र जो दुनिया में अपने आने की।

उसी की जान को लज्जत मिलेगी जाने की ॥ १ ॥

१. महाकवि ग़ालिब ने भी एक स्थान पर कहा है—

दर्द मिन्नतकशे दवा न हुआ।

मैं न अच्छा हुआ बुरा न हुआ ॥

मजा भी आता है दुनिया से दिल लगाने में ।

सजा भी मिलती है दुनिया से दिल लगाने की ॥२॥

५५—रखो जो मुकाबिल उसके सारा आलम ।

दुनिया बखुदा है एक ज़रें से भी कम ॥१॥

उस एक ज़रें में है हमारी क्या अस्ल ।

नाफ़हम हैं, कर रहे हैं नाहक 'हम-हम' ॥२॥

शब्दार्थ : आलम—सृष्टि, बखुदा—ईश्वर साक्षी है, जर्ग—परमाणु, नाफ़हम—बेसमझ नाहक—व्यर्थ ।

५६—यही बहसें रही सब में वे कैसे हैं वे कैसे थे ।

यही सुनते हुए गुज़री वो ऐसे हैं वे ऐसे थे ॥१॥

अमल औरों ही के देखा कि ये ये नेक ये बद हैं ।

तरक्की खुद न की कुछ रह गये वैसे कि जैसे थे ॥२॥

५७—इधर तसबीह की गरदिश में पाया शेख़ साहब को ।

बिरहमन को उधर उलझा हुआ जुन्नार में देखा ॥

मगर इश्क़े-हक्कीकी का कोई रिश्ता न था दिल में ।

फ़क़त नफ़सानियत का पेचो-ख़म हर तार में देखा ॥

शब्दार्थ : तसबीह—माला, गरदिश—फेर, जुन्नार—जनेऊ, इश्क़े हक्कीकी—ईश्वर का प्रेम, नफ़सानियत—विषय वासना ।

५८—बनोगे ख़ुसरवे-अकलीमे-दिल शीरीं जब होकर ।

जहाँगीरी करेगी ये अदा नूरे-जहाँ होकर ॥१॥

मजाख़े-गुफ़्तगू किसको फना का जब पयाम आया ।

हुई ख़ामोश आख़िर शमा भी आतश-जबां होकर ॥२॥

शब्दार्थ : ख़ुसरवे-अकलीमे-दिल—हृदय रूपी देश के राजा, शीरी-जबां—मिष्ट भाषी, जहाँगीरी—विश्व-विजय, नूरे-जहाँ—संसार का प्रकाश, फ़ना—मृत्यु, पयाम—निमन्त्रण ।

- ५९—लताफत को न छोड़े रंग तेरे शादी ओ गम का ।
हंसी आये तो फूलों की जो रोना हो तो शबनम का ॥
शब्दार्थ : लताफत—पाकीज़गी, शादी—हर्ष, शबनम—ओस ।
- ६०—कामयाबी हो गई तो बेवकूफी पर भी नाज़ ।
और जो नाकामी हुई अक्ल भी शरमिन्दा है ॥
शब्दार्थ : नाज़—गर्व ।
- ६१—हमारे ज़हन को हस मिसरये-अकबर पै मस्ती है ।
खुश अखलाकी हबादत है खुशामद बुत-परस्ती है ॥
शब्दार्थ : खुश अखलाकी—शिष्टाचार ।
- ६२—जुस्तजू हमको आदमी की है ।
वे कितानें अबस मंगाते हैं ॥
शब्दार्थ : जुस्तजू—खोल । अबस—व्यर्थ
- ६३—निगाहें काबिली पर पड़ ही जाती हैं ज़माने में ।
कहीं छिपता है 'अकबर' फूल पत्तों में निहां होकर ॥
शब्दार्थ : निहां—छिपना ।
- ६४—हकीकत ज़ीस्त की पीरी में हम समझे तो क्या समझे ।
बड़ा धोका दिया ज़ालिम ने दुनिया से खुदा समझे ॥
- ६५—न कितारों से न कालिज के है दर से पैदा ।
दीन होता है बुज़ुर्गों की नज़र से पैदा ।
शब्दार्थ : दर—द्वार, दीन—धर्म ।
- ६६—जुदाई ने 'मैं' बनाया मुझको जुदा न होता तो मैं न होता ॥
खुदा की हस्ती है मुझसे साबित खुदा न होता तो मैं न होता ॥
- ६७—नजर उनकी रही कालिज में बस हल्मी-फ़ायद पर ।
गिरा कीं चुपके चुपके बिजलियां दीनी अक़ायद पर ॥
शब्दार्थ : कवायद—लाभ, दीनी अक़ायद—धार्मिकसि द्वांत ।

६८—टट्टू पै जिस तरह से ही ताज़ी का साज़ बोझ ।

यूँ बाबुआने-हिन्द पै है अब नमाज़ बोझ ॥

६९—तमाशा देखिये बिजली का मगरिब और मशरिक में ।

कलों में है वहां दाखिल यहां मजहब पै गिरती है ॥

७०—जो मुजतरित है उसको इत्तफात है ।

आखिर ख़ुदा के नाम में कोई तो बात है ॥

शब्दार्थ : मुजतरिब—परेशान, इत्तफात—आनन्द ।

७१—गो हम-नफत अपने उठ गये सब दम साज़ हमारी आह तो है ।

कोई जो हमारा रह न गया ईमान तो है अल्लाह तो है ॥

७२—हमेशा कहता था हर बात पर 'नमीदानम' ।

कुछ इसमें शक नहीं 'अकबर' बड़ा ही आलिम था ॥

शब्दार्थ : नमीदानम—मैं कुछ नहीं जानता, आलिम—विद्वान् ।

७३—वही कानूने फ़ितरत है जिसे तकदीर कहते हैं ।

जिसे किस्मत समझते हैं वो तदबोरो का हासिल है ॥

शब्दार्थ : फ़ितरत—प्रकृति ।

७४—सखुन-सज्जी का क्या कहना मगर ये याद रख 'अकबर' ।

जो सच्ची बात होती है वही दिल में उतरती है ॥

७५—फिलासफ़ी के मुकालमों में किसी ने ये खूब ही कहा है ।

जो तन्दुरुस्ती हो तेरी अच्छी तो सांस ही में बड़ा मज़ा है ॥

७६—हरम में दम-बखुद बैठा तो 'अकबर' ने किया अच्छा ।

वो क्यों बेसूद बुतखाने में आहे-नारसा खींचे ॥

शब्दार्थ : हरम—घर, बेसूद—व्यर्थ, नारसा—न पहुँचने वाली, प्रभाव-हीन ।

७७—किया है जिसने आलम को पैदा उसको क्या कहिये ।

ख़िर्द ख़ामोश है और दिल ये कहता है ख़ुदा कहिये ॥

शब्दार्थ : ख़िर्द—बुद्धि ।

७८—कह दिया मैंने कि हूँ और नहीं समझा कि क्या ।

इस खुदी का हश् क्या होता है देखा चाहिये ॥

शब्दार्थ : खुदी—आत्मज्ञान, हश्—परिणाम ।

७९—खुदाई तेरी है हम भी हैं अय खुदा तेरे ।

मुसीबतों में पुकारें किसे सिवा तेरे ॥

८०—जुबां खोली है महफिल में वाह-वाह के लिये ॥

कभी तो बंद कर आंखों को भी खुदा के लिये ॥

८१—आता है वज्द मुझको हर दीन की अदा पर ।

मसजिद में नाचता हूँ नाकूस की सदा पर ॥

शब्दार्थ : वज्द आना—प्रेम में निमग्न हो जाना, दीन—धर्म, नाकूस—शस्त्रा, सदा—आवाज ।

८२—खुदा ने अकल की न्यामत अता की मेहरबां होकर ।

अदाये शुक्र कर दीवानये-हुस्ने-खुतां होकर ॥

८३—बेसाख्ता आती है मुसीबत में ये लब पर ।

फितरत ही की जानिब से दुआ भी है कोई चीज़ ॥

शब्दार्थ : फितरत—प्रकृति, बेसाख्ता—आप ही आप, लब—होंठ, दुआ—प्रार्थना ।

८४—बरसों का छोड़ती है साथ ज़ाजिम ।

कहते हैं उअ जिसको माशूके-बेवफ़ा है ॥

८५—कभी लरज़ता हूँ कुफ़ से मैं कभी हूँ कुरबान भोलेपन पर ।

खुदा के देता हूँ वास्ते जब तो पूछता है वो बुत खुदा क्या ॥

शब्दार्थ : लरजना—कांपना, कुफ़—नास्तिकता, कुरबान—न्योछावर ।

८६—कोई कहता नहीं सैयाह हूँ फितरत का माहिर हूँ ।

यहीं तक फख की हद है कि छिप्टी हूँ वो नाज़िर हूँ ॥

शब्दार्थ : सैयाह—यात्री, फितरत—प्रकृति, माहिर—जानने वाला ।

८७—सदियों फ़िलासफी की चुनाचुनी रही ।

लेकिन ख़ुदा की बात जहां थी वहां रही ॥

८८—मैं तो कहता था यही और कहूंगा यही ।

बात वह खूब है जो अल्लाह से नज़दीक करे ॥

८९—ये बुत पियहां यहीं होते खुदा ज़ाहिर नहीं होता ।

शानीमत वह जमाना है कि मैं काफ़िर नहीं होता ॥^१

शब्दार्थ : पिनहां होना—छिपना, काफ़िर—नास्तिक ।

९०—साइन्स से ज़्यादा है मज़हब की जड़ बढ़ी ।

तोपों की मार से भी खुदा की पकड़ बढ़ी ॥

९१—मैं यह नहीं कहता कि दवा कुछ नहीं करती ।

कहता हूँ कि बे-हुक्मे-ख़ुदां कुछ नहीं करती ॥

९२—अतिब्बा को तो अपनी फ़ीस लेना और दवा देना ।

ख़ुदा का काम है लुत्फो-करम करना शफ़ा देना ॥

शब्दार्थ : अतिब्बा—वैद्य, लुत्फो करम—दया, शफ़ा—आराम ।

९३—किसी के मरने से यह न समझो कि जान वापस नहीं मिलेगी ।

बईद शाने करीम से है किसी को कुछ देके छीन लेना ॥

शब्दार्थ : बईद—विरुद्ध, करीम—दयालु ।

९४—मिटा दो रंग-वहदत में खुदी का नक़्श अय 'अकबर' ।

अगर साबित किया चाहो तो तुम अपना मौतबिर होना ॥

शब्दार्थ : वहदत—अद्वैत, खुदी—आत्म भाव, मौतबिर—

विश्वासपात्र ।

१. एक और उर्दू के कवि ने कहा है—

क्यों बुतों को हुस्न बख़्शा था जो भूले हम तुम्हे ।

मुन्सफी कुछ दावरे-रोज़ै-क्रयामत चाहिये ॥

अर्थात् माशूक का सौन्दर्य देखकर हम तुम्हे भूल गये किन्तु इस अपराध के लिये हम दण्ड के पात्र क्यों हैं ? अय अन्तिम न्याय करने वाले कुछ तो इन्साफ़ से कामले । तू ही बता कि तू ने माशूकों को इतना सौन्दर्य क्यों दिया था कि उनको देखकर हम तेरी याद भूल गये ।

१५—सेठ जी को फ़िक थी एक-एक के दस कीजिये ।

मौत आ पहुँची कि हज़रत जान वापस कीजिये ॥

१६—मैं जिसे समझा हूँ “मैं” वे नफ़्स की हैं ख़्वाहिशें ।

“मैं” हकीकत में है जो मुझसे निहायत दूर है ॥

१७—असल अल्लाह से लगावट है ।

वरना मज़हब में सब बनावट है ॥

१८—सदाक़त के निशां इस मिसरये-अकबर में मिलते हैं ।

कलें साइन्स से चलती हैं दिल मज़हब से हिलते हैं ॥

शब्दार्थ : सदाक़त—सत्य ।

१९—ख़ुदा की हस्ती को याद करना और अपनी हस्ती को भूल जाना ।

नज़र उसी पर है और बातों को मैंने अपनी फ़िज़ूल जाना ॥

शब्दार्थ : हस्ती—अस्तित्व ।

१००—गौर से देखो ज़मीनो-आस्मां को मुन्क़िरो ।

चल भी सकता बे ख़ुदा के इन्तज़ाम इतना ॥

शब्दार्थ : मुन्क़िरो—नास्तिकों ।

१०१—हज़ार साइन्स रंग लाये हज़ार कानून हम बनायें ।

ख़ुदा की कुदरत यही रहेगी हमारी हैरत यही रहेगी ॥

शब्दार्थ : हैरत—आश्चर्य ।

१०२—मज़हब के ये मुबाहस निकले हैं हिस्ट्री^१ से ।

उनको है क्या तआल्लुक वहदत की मिस्ट्री^२ से ॥

शब्दार्थ : वहदत—अद्वैत, मिस्ट्री—भेद, मुबाहस—शस्त्रार्थ, हिस्ट्री—इतिहास ।

१०३—जुगराफ़िये से हाले-गवर्नमेंट पूछिये ।

हम तो यह जानते हैं ख़ुदाई ख़ुदा की है ॥

१०४—निजामे-आलम बता रहा है कि है इसका कोई बनाने वाला ।

जहूरे-आदम दिखा रहा है कि दिल में है कोई आनेवाला ॥^१

शब्दार्थ : निजाम—प्रबन्ध ।

१०५—यह मिसरा चाहिये लिखना बायज़े-चश्मे वहदत में ।

खुदा का इश्क है इश्के मजाज़ी भी हकीकत में ॥^२

शब्दार्थ : बायज़—कापी, चश्म——आँख, वहदत——अद्वैत, इश्के मजाज़ी—सांसारिक माशूक के साथ प्रेम ।

१०६—कुफ़्रे इस्लाम की तफ़रीक़ नहीं फ़ितरत में ।

यह वह नुक्ता है जिसे मैं भी बमुश्किल समझा ॥

शब्दार्थ : फ़ितरत—प्रकृति, नुक्ता—बारीक बात ।

१०७—शोर क्यों ग़बरो-मुसलमां ने मचा रक्खा है ।

दौर में कुछ नहीं काबे में क्या रक्खा है ॥

१. 'जलील' साहब का शेर है :—

हमने देखा रूवे-जानां में खुदा को अय 'जलील' ।

मर्तबा ज़ाहिर किया मेमार का तामीर ने ॥

अर्थात् हमने अपने माशूक के चेहरे में ईश्वर को देखा । जिस प्रकार किसी भवन को देखने से उसके बनानेवाले कारीगर के कौशल का पता चलता है, उसी प्रकार अपने माशूक की सुन्दरता देखकर हमें ईश्वर की महत्ता का पता लगा ।

२. 'जलील' साहब ने भी लिखा है —

'जलील' अपने यहां तो बुतपरस्ती-जुजवे ईमां है ।

कि बे इश्के-मजाज़ी इश्के-कामिल हो नहीं सकता ॥

अर्थात् हम तो सांसारिक माशूक के साथ प्रेम करने को भी धर्म का एक अंग समझते हैं, क्योंकि आरम्भ में सांसारिक माशूक के साथ प्रेम किये बिना ईश्वर के साथ भी प्रेम नहीं हो सकता ।

शब्दार्थ : गन्न—प्रतिमा-पूजक, दैर—मन्दिर ।

१०८—दिखलाते हैं बुत जलवये-मस्ताना किसी का ।

यहां काबये-मकसूद है बुतखाना किसी का ॥

शब्दार्थ : मकसूद—इष्ट ।

१०९—मेरी नाकामयाबी की कोई हद हो नहीं सकती ।

सदाकत चल नहीं सकती खुशामद हो नहीं सकती ॥

शब्दार्थ : सदाकत—सत्य ।

११०—हुस्न है बेवफ़ा भी फ़ानी भी ।

काश समझे इसे जवानी भी ॥

शब्दार्थ : फ़ानी—नश्वर, काश—कहीं ऐसा हो ।

१११—रंगे-हाफ़िज़ पै बहक जाते हैं अरबाबे मज़ाज़ ।

ये समझते नहीं वह बादापरस्ती क्या थी ॥

शब्दार्थ : हाफ़िज़—फारसी के प्रसिद्ध कवि जो बड़े ईश्वर-भक्त थे, अरबाबे मज़ाज़—भूठा प्रेम रखने वाले, बादापरस्ती—मद्यपान ।

११२—फ़ना दौर जारी है मग़ार मरते हैं जीने पर ।

तिलस्मे-ज़िन्दग़ानी भी अजब एक राज़े-फ़ितरत है ।

११३—ख़ुदा का घर बनाना है तो नक़शा ले किसी दिल का ।

ये दीवारों की क्या तजवीज़ है ज़ाहिद ये छत कैसी ॥

११४—जो देखी हिस्त्री इस बात पर कामिल यकीं आया ।

उसे जीना नहीं आया जिसे मरना नहीं आया ॥

शब्दार्थ : कामिल यकीं—पूरा विश्वास ।

११५—निसार अपने तसव्वुर के कि जिसके फ़ैज़ से हरदम ।

जो ना पैदा हैं नज़रों से उसे पैदा समझते हैं ॥

शब्दार्थ : तसव्वुर—कल्पना, फ़ैज़—प्रसाद, कृपा ।

११६—हुजूमे बुलबुल हुआ चमन में,
किया जो गुल ने जमाल पैदा ।
कमी नहीं क़ददां की 'अकबर',
करे तो कोई कमाल पैदा ॥

११७—तसव्वुफ़ के बयां को होश ने रूह-आशना पाया ।
मश्रानी कुछ न समझा पर क्रयामत का मज़ा पाया ॥
शब्दार्थ : तसव्वुफ़—ब्रह्म-ज्ञान, रूह आशना—आत्मा से परिचित,
क्रयामत का मज़ा—अत्यन्त आनन्द ।

११८—मुकामे शुक्र है गाफ़िल मुसीबते-दुनिया ।
इसी बहाने से अल्लाह याद आता है ॥

११९—महबूबा भी रुख़सत हुई साक़ी भी सिधारा ।
दौलत न रही पास, तो अब 'ही' है न 'शी' है ॥
शब्दार्थ : महबूबा—प्रेमिका, साक़ी—शराब पिलाने वाला, ही—
वह (पुल्लिङ्ग) अर्थात् प्यारा, शी—वह (स्त्रीलिङ्ग) अर्थात् प्यारी ।

१२०—चिपकूँ दुनियां से किस तरह मैं ।
औरत ने कहा कि गोद मैं हूँ ॥'

१२१—ज़वाले-जाहो-दौलत में बस इतनी बात अच्छी है ।
कि दुनिया को बख़ूबी आदमी पहचान जाता है ॥

शब्दार्थ : ज़वाले—जाहो दौलतधन तथा ऐश्वर्य का नष्ट होना ।

१२२—ज़हन में जो घिर गया ला इन्तहा क्योंकर हुआ ।
जो समझ में आ गया फिर वह ख़ुदा क्योंकर हुआ ॥

१. महाकवि बिहारिलाल ने उपरोक्त विचार को अपने एक दोहे में इस प्रकार प्रगट किया है—

या भव पारावार को उलंघि पार को जाय ।
तिय-छवि छायाग्राहनी गहै बीच ही आय ॥

शब्दार्थ : ला इन्तहा—अपरिमित ।

१२३—नामे खुदा को अक्सर जेबे-जबां तो पाया ।

इश्के-बुतां को लेकिन नक्शे-कलूब देखा ॥

शब्दार्थ : जेबे-जबां—जिह्वा पर, नक्शे-कलूब—हृदय पर अंकित ।

१२४—गमे-दहर से बचाता है बशर को मस्त रहना ।

मुझे शायरी न आती तो मैं बादानोश होता ॥

शब्दार्थ : गमे-दहर—संसार की चिन्ता, बशर—मनुष्य, बादानोश—नोश—शराब पीने वाला ।

१२५—तरक्की मुस्तकिल वह है जो रूहानी हो अय 'अकबर' ।

उड़ा जो ज़रये-अन्सर वह फिर सूबे-जमीं आया ॥

शब्दार्थ : मुस्तकिल—स्थायी, रूहानी—आत्मिक, ज़रये-अन्सर—परिमाणु का टुकड़ा, सूबे-जमी—पृथ्वी की ओर ।

१२६—खुदा का नाम गो अक्सर ज़बानों पर है आ जाता ।

मगर काम इससे जब चलता कि यह दिल में समा जाता ॥

१२७—जो अपनी ज़िन्दगानी को फ़कत इक इस्तहां समझा ।

उसी ने राहतों-तकलीफ का राज़े-निहां समझा ॥

शब्दार्थ : राहत—आराम, राज़े-निहां—गुप्त रहस्य ।

१२८—लज्जत है रूह को तने-खाकी से मेल में ।

फ़ितरत ने मस्त रक्खा है कैदी को जेल में ॥

शब्दार्थ : लज्जत—आनन्द, रूह—आत्मा, फ़ितरत—प्रकृति ।

१२९—उसकी बातों से समझ रक्खा है, तुमने उसे खिन्न ।

उसके पांवों को देखो कि किधर जाते हैं ॥

१३०—जनूने-इश्क से इन्सान की तीनत संवरती हैं ।

यही वो मस्ती है जो अकल को हुशियार करती है ॥

शब्दार्थ : तीनत—स्वभाव ।

१३१—जब खूब किया का कोई मौका न निकाला ।

फिर क्या जो हुई धूम फूटत 'खूब कही' की ॥

१३२—खुदी के इजहार में दुई है दुई को वहदत से क्या ताल्लुक ।

फिराक अपना करे गवारा जो कोई उसका विसाल चाहे ॥

शब्दार्थ : खुदी—आत्मज्ञान, इजहार—प्रगट करना, दुई—द्वैत, वहदत—अद्वैत, फिराक—वियोग, गवारा—मन्जूर ।

१३३—नासहे-नादां ने मतलब मेरा समझा ही नहीं ।

क्या समझता ! आलमे-दिल में तो वह था नहीं ॥

१३४—रकबा तुम्हारे गाँव का मोलों हुआ तो क्या ।

रकबा तुम्हारे दिल का तो दो इंच भी नहीं ॥

१३५—दुनिया की क्या हकीकत और हमसे क्या तआल्लुक ।

वह क्या है, इक भलक है, हम क्या हैं इक नज़र हैं ॥

शब्दार्थ : हकीकत—वास्तविकता, तआल्लुक—सम्बन्ध ।

१३६—हुकूम उसका उसी की मज़ीं,

उसी के सब काम और धन्धे ।

कहाँ के इंग्लिश, कहाँ के नेटिव,

खुदा की दुनिया खुदा के बन्दे ॥

१३७—रंजे-दुनिया से बहुत मुजतरिबुल्हाल था मैं ।

दिल में तिस्कीं हुई मज़हब के असर से पैदा ॥

शब्दार्थ : मुजतरिबुल्हाल—व्यग्र, तिस्कीं—शान्ति ।

१३८—न नमाज़ है न रोज़ा न जकात है न हज है ।

तो खुशी फिर इसकी क्या है कोई जण्ट कोई जज है ॥

शब्दार्थ : जकात—दान, हज—काबे की यात्रा ।

१३६—आरजू मर्ग की तुम करते हो 'अकबर' लेकिन ।

सोच लो कब्र में आराम मिलेगा या नहीं ॥'

शब्दार्थ—आरजू—इच्छा, मर्ग—मृत्यु ।

१४०—तमाशा देख 'अकबर' दीदये-इबरत से दुनियां का ।

अजल की नींद जब आये लहद में जाके सोरहना ॥

शब्दार्थ—दीदये इबरत—शिक्षाग्रहण करने की दृष्टि, अजल—मृत्यु, लहद—कब्र ।

भावार्थ—संसार विश्राम का स्थान नहीं है । यहाँ की घटनाओं को तो हमें शिक्षा ग्रहण करने के उद्देश्य से देखना चाहिए । मृत्युरूपी निद्रा आने पर कब्र में आराम मिलेगा ।

१४१—दुनिया में अम्रोहक को किस तरह साफ़ कहिये ।

करता है दुश्मनी वह जिसके खिलाफ़ कहिये ॥

शब्दार्थ—अम्रोहक—सच्ची बात ।

१४२—कोर्स तो लफ़्ज़ ही सिखाते हैं ।

आदमी आदमी बनाते हैं ॥

शब्दार्थ—कोर्स—पाठ्य पुस्तक ।

१४३—दो मुरादें जो मिलीं चार तमन्नायें कीं ।

हमने खुद कलब में आराम को रहने न दिया ॥

१. महाकवि ज़ौक का भी इस विषय का शेर है जिस को महाकवि ग़ालिब बहुत पसन्द करते थे—

अबतो घबरा के कहते हैं कि मर जायेंगे ।

मरके भी चैन न पाया तो किधर जायेंगे ॥

और महाकवि दाग़ ने लिखा है—

राहत के वास्ते है तुझे आरजूये-मर्ग ।

अय 'दाग़', और जो चैन न आया क़ज़ा के बाद ॥

शब्दार्थ : मुराद—कामना, तमन्ना—आशा, कल्ब—दिल ।

१४४—दुनिया यों ही नाशादियों में शाद रहेगी ।

बरबाद किये जायेगी आबाद रहेगी ॥

शब्दार्थ : नाशादी—रञ्ज, शाद—खुश ।

१४५—बन्दगी में तो है वह लुफ़ जो शाही में नहीं ।

दिल से कोई मगर अल्लाह का बन्दा भी तो हो ॥^१

शब्दार्थ—बन्दगी—सेवा, बन्दा—सेवक ।

१४६—मरज़ हज़ार बलाख़ेज हो पसन्द है वह ।

दवा में लाख शफ़ा हो, मगर नहीं मंज़ूर ॥^२

शब्दार्थ : मरज़—रोग, बलाख़ेज—दुखोत्पादक, शफ़ा—स्वास्थ्य-प्रदत्ता ।

१४७—मज्जिले-इश्को-तवक्कुल मज्जिले-ऐज़ाज़ है ।

शाह सब बसते हैं यां कोई गदा मिलता नहीं ॥

शब्दार्थ : मज्जिले-इश्को-तवक्कुल—प्रेम तथा सन्तोष का विश्राम स्थान, मज्जिले ऐज़ाज़—सम्मान का विश्राम स्थान, गदा—फकीर ।

१४८—नहीं कुछ इसकी पुरसिश उल्फ़ते-अल्लाह कितनी है ।

यही सब पूछते हैं आपकी तनज़्वाह कितनी है ॥

शब्दार्थ : पुरसिश—पूछताछ, उल्फ़ते-अल्लाह—ईश्वर का प्रेम ।

१४९—ग़रीब 'अकबर' के गिर्द क्यों हैं जनाबे वाइज़ से कोई कह दे ।

उसे डराते हो मौत से क्या वह ज़िन्दगी ही से डर चुका है ॥

१. उर्दू के प्रसिद्ध कवि अमीर का शेर है —

हम फ़कीर अपनी फकीरी में सबो-रोज हैं मस्त ।

तुम्ह को ऐ शाह मुबारक रहे शाही तेरी ॥

२. अंग्रेजी के प्रसिद्ध विद्वान् कार्लायल ने भी एक स्थान पर लिखा है—

In all way we are to become perfect through suffering—अर्थात् कष्ट सहन द्वारा ही हम पूर्णता प्राप्त कर सकते हैं ।

१५०—लोग कहते हैं कि हैं आप निहायत काबिल ।

मैं इसी सोच में रहता हूँ कि किस काबिल हूँ ॥

१५१—क्या कहें औरों को ये ऐसे हैं वे ऐसे हैं ।

सच जो पूछो तो हमीं कौन बहुत अच्छे हैं ॥

१५२—अहले मजहब में जियादहतर है बस लफ़्जी निज़ाअ ।

एक ही मालिक जहां का है तो फिर कैसी निज़ाअ ॥

शब्दार्थ : अहले मजहब—मजहब वाले, लफ़्जी—शाब्दिक, निज़ाअ—भगड़ा ।

१५३—शेरे-अकबर में कोई कश्फो-करामात नहीं ।

दिल पै गुज़री हुई है और कोई बात नहीं ॥

शब्दार्थ : कश्फो-करामात—चमत्कार ।



२—प्रेम

१—क्या हथ्र हुआ बरपा थोड़ी सी जो पीली है ।
 डाका तो नहीं डाला चोरी तो नहीं की है ॥१॥
 ना तजरुबेकारी से वाइज की हैं ये बातें ।
 इस रंग को क्या जाने पछो तो कभी पी है ॥२॥
 उस मय से नहीं मतलब दिल जिससे है बेगाना ।
 मकसूद है उस मय से दिल ही में जो खिंचती है ॥३॥
 वां दिल में कि सदमे दो यां जी में कि सब सहलो ।
 उनका भी अजब दिल है मेरा भी अजब जी है ॥४॥
 सूरज में लगे धब्बा फितरत के करिश्मे हैं ।
 बुत हमको कहें काफिर अल्लाह की मरजी है ॥५॥

शब्दार्थ : हथ्र—क्यामत, वाइज—उपदेशक, मद—शराब,
 बेगाना—अजनबी, मकसूद—मतलब, सदमे—कष्ट, फितरत—प्रकृति,
 करिश्मे—अनोखे काम ।

२—शौके-पाबोसिये-जाना मुझे बाकी है हनोज़ ।
 घास जो उगती है तुरबत पै हिना होती है ॥१॥
 नजअ का वक्त बुरा वक्त है खालिक की पनाह ।
 है वो साअत कि क्यामत से सिवा होती है ॥२॥
 रूह तो एक तरफ़ होती है रुख़सत तन से ।
 आरजू एक तरफ़ दिल से जुदा होती है ॥३॥
 जिस्म तो खाक में मिल जाते हुए देखते हैं ।
 रूह क्या जाने किधर जाती है क्या होती है ॥४॥

हूँ फ़रेबे-सितमे-यार का कायल 'अकबर' ।
मरते मरते ने कहा यह कि जफ़ होती है ॥५॥

शब्दार्थ : पाबोसी—पांव का चुम्बन करना, हतोज—अब तक,
तुरबत—कब्र, हिना—मेंहदी, नज़म—प्राण निकलने का समय, पनाह—
शरण, साअत—समय, सिवा—अधिक, आरजू-इच्छा ।

३—ज़माने साज़ी है अब यह कि मुन्तज़िर था मैं ।
हमारे आने की तुमको तो कुछ ख़बर भी न थी ॥१॥
फ़लक ने क्यों शबे-फ़ुरक़्त मुझे हलाक किया ।
जमाले-यार नहीं था तो क्या सहर भी न थी ॥२॥
तुम्हारे दिल की नज़ाकत पै उसको रहम आया ।
नहीं तो आह मेरी ऐसी बे असर न थी ॥३॥
जो आप होते हैं मुनकिर तो ख़ैर मैं झूठा ।
मेरा ज़िगर भी न था आपकी नज़र भी न थी ॥४॥
शहीदे-जल्लवये-मस्ताना हो गया शबे-वस्ल ।
खुशी नसीब में आशिक़ के रात भर भी न थी ॥५॥

शब्दार्थ : ज़माना साज़ी—दुनिया के दिखाने की बात, सहर—
प्रातःकाल, मुनकिर—इन्कार करने वाला, शब—रात ।

४—रोशन दिले-आरिफ़ से फ़िज़ूँ है बदन उनका ।
रंगी है तबीयत की तरह पैरहन उनका ॥१॥
महरूम ही रह जाती है आग़ोशे-तमन्ना ।
शर्म आके चुरा लेती है सारा बदन उनका ॥२॥
यह शर्म के मानी हैं हया करते हैं इस को ।
आग़ोशे-तसव्वुर में न आया बदन उनका ॥३॥
है साफ़ निगाहों से अयां जोशे-जवानी ।
आँखों से सम्हलता नहीं मस्तानापन उनका ॥४॥

दिलचस्प है आफ़त है क़यामत है ग़ज़ब है ।

वात उनकी क़द उनका चलन उनका ॥५॥

शब्दार्थ : दिले आरिफ़—सिद्ध का हृदय, पैरहन—वस्त्र, आगोशे—तमन्ना गोद में बैठाने की अभिलाषा, हया—लज्जा, आगोशे तसव्वुर—ध्यान की गोद, अयां—प्रगट ।

५—समझे वही उसको जो हो दीवाना किसी का ।

अकबर ये ग़ज़ल मेरी है अफ़साना किसी का ॥१॥

गर शेख़ो-बिरहमन सुनें अफ़साना किसी का ।

मोबिद न रहे काबश्चो-ख़ुतख़ाना किसी का ॥२॥

अल्लाह ने दी है जो तुम्हें चांद सी सूरत ।

रोशन भी करो जाके सियहख़ाना किसी का ॥३॥

अश्क़ आँखों में आ जायें एवज़ नौद के साहब ।

ऐसा भी किसी शब सुनो अफ़साना किसी का ॥४॥

हम जान से बेज़ार रहा करते हैं 'अकबर' ।

जब से दिले-बेताब है दीवाना किसी का ॥५॥^१

शब्दार्थ : अफ़साना—कहानी, मोबिद—पूज्य, सियहख़ाना—अन्धकारमय स्थान, अश्क़—आँसू ।

६—जलवये-साकी वह मय जान लिये लेते हैं ।

शेख़जी ज़व्त करें हम तो पिये लेते हैं ॥१॥

दिल में याद उनकी जो आते हुए शरमाती है ।

दर्द उठता है कि हम आब किये लेते हैं ॥२॥

१. एक और उर्दू के कवि का शेर है ।

जी भर आया सुनने वालों का जिगर फट फट गये ।

कुछ अजब हसरत भरी थी दास्ताने-अहले-इश्क़ ॥

दौरे-तहज़ीब में परियों का हुआ दूर नकाब ।
 हम भी अब चाके-गरीबां को सिये लेते हैं ॥३॥
 खुदकशी मना खुशी गुम ये कायामत है मगर ।
 जीना ही कितना है अब खैर जिये लेते हैं ॥४॥
 लज़्ज़ते-वस्ल को परवाने से पूछें उरशाक ।
 वह मज़ा क्या है जो वह जान लिये लेते हैं ॥५॥

शब्दार्थ : साक़ी—शराब पिलाने वाला, मय—शराब, नकाब—
 घूंघट ।

७—क्या मौत है तबियत आ गई उस आफते-जा पर ।
 जिसे इतना नहीं मालूम उल्फ़त क्या वफा क्या है ॥१॥
 उन्हें भी जोशे-उल्फ़त हो तो लुफ़ उठे मौहब्बत का ।
 हमीं दिन रात अगर तड़पे तो फिर इसमें मज़ा क्या है ॥२॥
 मुसीबत ऐन राहत है अगर हो आशिके-सादिक ।
 कोई परवाने से पूछे कि जलने में मज़ा क्या है ॥३॥
 तबीबों से मैं क्या पूछूँ इलाजे-दर्दे-दिल अपना ।
 मरज़ जब ज़िन्दगी खुद हो तो फिर उसकी दवा क्या है ॥४॥

शब्दार्थ : उल्फ़त—प्रेम, ऐन—बिल्कुल, राहत—आराम, सादिक—
 सच्चा, तबीब—वैद्य ।

८—ज़ख्मी किया सीने को नज़र है कि ग़ज़ब है ।
 खूँ होके भी कायम है ज़िगर है कि ग़ज़ब है ॥१॥
 वह कहते हैं मय पीने को तू पी नहीं सकता ।
 अय शेख़ ये अक्लाह का डर है कि ग़ज़ब है ॥२॥
 गुज़ारी है शबे-वस्ल कि आई है मेरी मौत ।
 वह होते हैं रुख़सत यह सहर है कि ग़ज़ब है ॥३॥
 लिपटा के मुझे सीने से वह आज ये बोले ।
 'अक़बर' तेरी आहों का असर है कि ग़ज़ब है ॥४॥

शब्दार्थ : मय—गराब, शब—रात्रि, सहर—प्रातःकाल ।

- ६—अलग सबसे नज़र नीची ख़राम आहिस्ता आहिस्ता ।
 वो मुझ को दफ़न करके अब पशेमाँ होते जाते हैं ॥१॥
 कहाँ से लाऊंगा खूने-जिगर उनके खिलाने को ।
 हज़ारों तरफ़ के ग़म दिल के महमाँ होते जाते हैं ॥२॥
 ग़ज़ब की याद हैं अय्यारियों वल्लाह तुमको भी ।
 ग़रज कायल हम तो तुम्हारे अय जाँ होते जाते हैं ॥३॥
 इधर हम से भी बातें आप करते हैं लगावट की ।
 उधर ग़ैरों से भी कुछ अहदो-पैमाँ होते जाते हैं ॥४॥

शब्दार्थ : ख़राम—चाल, पशेमाँ—नज़्जित, अहदो-पैमाँ—वादे ।

- १०—ज़हादे-ख़ुशक दुश्न-बुतों से हैं बेनसीब ।
 आंखें खुदा ने दी हैं मगर देखते नहीं ॥१॥
 मैं जिनके देखने को समझता हूँ जिन्दगी ।
 उनका ये हाल है कि इधर देखते नहीं ॥२॥
 तासीरे-इन्तजार ने ये हाल कर दिया ।
 आंखें खुली हुई हैं मगर देखते नहीं ॥३॥
 बे ख़ौफ़ दिल को करते हो पामाल अय बुतों ।
 ये शोखियाँ खुदा का भी घर देखते नहीं ॥४॥

शब्दार्थ : ज़हाद—ज़ाहिद लोग अर्थात् साधु, तासीर—प्रभाव,
 पामाल करना—कुचलना ।

- ११—जो नासह मेरे आगे बकने लगा ।
 मैं क्या करता मुँह उसका तकने लगा ॥१॥
 मौहब्बत का तुमसे असर क्या कहूँ ।
 नज़र मिल गई-दिल धड़कने लगा ॥२॥

रक्रीबों ने पहलू दबाया तो चुप ।
 मैं बैठा तो ज़ालिम सरकने लगा ॥३॥
 जो महफिल में 'अकबर' ने खोली जबां ।
 गुलिस्तां में बुलबुल चहकने लगा ॥४॥

शब्दार्थ : नासह—उपदेशक, गुलिस्तां—बाग ।

१२—लगावट की अदा से उनका कहना पान हाज़िर ।
 क़यामत है सितम है दिल फ़िदा है जान हाज़िर है ॥१॥
 कहो जो चाहो सुन लेंगे मगर मुतलक न समझेंगे ।
 तबीयत तो खुदा जाने कहीं है कान हाज़िर है ॥२॥
 निगाहें ढूँढ़ती हैं जिनको उनका दो निशाँ यारो ।
 इसे मैं क्या करूँगा ये जो सब सामान हाज़िर है ॥३॥
 बैठा कर ग़ैर की महफ़िल में मुझको उसने फ़रमाया ।
 सुनो 'अकबर' की ग़ज़लें देखो ये मस्ताना हाज़िर है ॥४॥

शब्दार्थ : मुतलक—बिल्कुल ।

१३—इरक कहता है बयाने-हाल की परवा न कर ।
 तेरे दिल की खुद बख़ुद उनको ख़बर हो जायगी ॥१॥
 मुझको हैरत है निगाहें-शौक़ की उम्मीद पर ।
 क्या निगाहें क़हर उलफ़त की नज़र हो जायगी ॥२॥
 मैंने पूछा तुम्हें मुझसे मौहब्बत है कि नहीं ।
 हंस के फरमाया नहीं अब तक मगर हो जायगी ॥३॥
 मैं शबे फुरकत में तबपूँ और वे सोयें चैन से ।
 किस तरह मानूँ मौहब्बत बा-असर हो जायगी ॥४॥
 शब्दार्थ : क़हर—क्रोध, शबे फुरकत—वियोग की रात ।

१४—ख़ुदा की शान मेरा तबपना दिखलगी समझें ।
 किसी की जान जाती है किसी का जी बहलता है ॥१॥

खयाले-जुल्फ़ में श्रय दिल न तय कर मंजिले-उल्फ़त ।
 अन्धेरी रात में नादौं कोई राह चलता है ॥२॥
 विसाले-यार का वादा है कल और आज मौत आई ।
 करें क्या अब मुकद्दर पर किसी का ज़ोर चलता है ॥३॥
 मौहब्बत उनसे करके फ़ूस गये हम तो आफ़त में ।
 न दिल काबू में आता है न उन पर ज़ोर चलता है ॥४॥

१५—ग़रीबख़ाने में लिह्लाह दो घड़ी बैठो ।
 बहुत दिनों में आये हो इस गली की तरफ ॥१॥
 ज़रा सी देर ही हो जायगी तो क्या होगा ।
 घड़ी घड़ी न उठाओ नज़र घड़ी की तरफ ॥२॥
 जो घर में पूछे कोई ख़ौफ़ क्या है कह देना ।
 चले गये थे टहलते हुये किसी की तरफ ॥३॥

१६—तेरे सहरे-नज़र से हुआ ये ज़नूँ,
 मेरे दिल की तो इसमें ख़ता ही न थी ।
 तेरे कूँचे में आके मैं बैठ रहा,
 बजुज़ इसके कुछ और दवा ही न थी ॥१॥
 न निभी तो फिर इसमें थी किसकी ख़ता,
 ये गिलः है मेरी ही तरफ़ से बजा ।
 मेरे इश्क़ का रंग तो ख़ूब रहा,
 मगर आप में बुये-बफ़ा ही न थी ॥२॥
 ग़मे-हिज़्र में जी से गया जो गुज़र,
 तो ये अक़बरे-ज़ार ने ख़ूब किया ।
 कि इलाज़े-फिराक़ तो था ही यही,
 बजुज़ इसके कुछ और दवा ही न थी ॥३॥

शब्दार्थ : सहर—जादू, बजुज—अतिरिक्त, गिला—शिकायत, बजा—उचित ।

१७—वो आये भी जो बाली पर तो ऐसे वक्रत में आये ।

कि फर्ते-जोफ़ से हम कर नहीं सकते इशारा तक ॥१॥

जो उसने नाज़ से पूछा कि तेरी आरजू क्या है ।

खुशी से ये हुए बेखुद कि हम भूले तमन्ना तक ॥२॥

न निकले अशके-हसरत नज़्म में अय वेकसी क्यों कर ।

वो बेकस हूँ नहीं है कोई मुझको रोंने वाला तक ॥३॥

शब्दार्थ : बाली—सिरहाने, फर्ते-जोफ़—कमजोरी की अधिकता, आरजू—इच्छा, तमन्ना—इच्छा, अशके-हसरत—नैराश्य के आँसू, नज़्म—प्राण निकलने का समय ।

१८—वो कूचये-जानों के मज़े एक न पाये ।

हम पहले समझते थे कि जन्नत में भी कुछ है ॥१॥

फ़रमाते हैं वो सुनकर मेरे रोंने का अहवाल ।

ये बात तो दाख़िल तेरी आदत में भी कुछ है ॥२॥

जब कहता हूँ उनसे कि मेरे दिल में हसरत है ।

कि नाज़ से कहते हैं कि हसरत में भी कुछ है ॥३॥

शब्दार्थ : कूचये जानां—माशूक की गली, जन्नत—स्वर्ग, अहवाल—हाल ।

१९—तुम्हे अय-उम्मीदे-फर्दा दिलो-जौं से प्यार करते ।

मगर अपनी जिन्दगी का नहीं ऐतवार करते ॥१॥

है बुतों की खुदनुमाई मेरी गफ़लतों से कायम ।

मैं अगर नज़र न करता तो वह क्यों सिंगार करते ॥२॥

लिया हमने बोसये-रुख तो न बदगुमौ हो जाना ।

कोई फूल देख लेते तो उसे भी प्यार करते ॥३॥

शब्दार्थ : फर्दा—कल, भविष्य ।

२०—पोशीदा आंखों में कभी दिल में निहाँ रहा ।
 बरसों खयाले-यार मेरा मेहमां रहा ॥१॥
 फरयाश किसकी थी पसे-दीवार रात भर ।
 क्या मुझसे पूछते हो तू कल शब कहाँ रहा ॥२॥
 बेजा मेरे गफ़र पे हैं ये बदगुमानियाँ ।
 पेशे-नज़र तुम्हीं तो रहे मैं जहाँ रहा ॥३॥^१

शब्दार्थ : पोशीदा—छिपा हुआ, निहां—गुप्त, पसे-दीवार—दीवार के नीचे, शब—रात, बेजा—अनुचित, पेशे-नज़र—आंखों के सामने ।

२१—मैं शेफ़ता हूँ आप से बे-मिस्ल हसीं का ।
 हैरौँ हूँ मेरे काम सवर क्यों नहीं जाते ॥१॥
 जब कहता हूँ मरता हूँ मेरी जान मैं तुम पर ।
 फ़रमाते हैं मरते हो तो मर क्यों नहीं जाते ॥२॥
 वो नींद में हैं शहर में फिरने लगे पहरे ।
 पछे कोई 'अकबर' से ये घर क्यों नहीं जाते ॥३॥

शब्दार्थ : शेफ़ता—आसक्त ।

२२—मेरे इश्क़ के सोज़ में हो न कमी,
 अजल आये तो ऐसी जफ़ा न करे ।
 मेरी जान को जिस्म से करदे अलग,
 मेरे दर्द को दिल से जुदा न करे ॥१॥
 बुते-शोख़ की देख रहा हूँ नज़र,
 मेरे इश्क़ का कुछ भी नहीं है असर ।
 जो मैं कहता हूँ काश हो तुझ में वफा,
 तो वो कहता है हँसके खुदा न करे ॥२॥

१. महाकवि ज़ौक का शेर है—

तुम मेरे पास होते हो गोया ।
 जब कोई दूसरा नहीं होता ॥

मुझे इश्क़ो-बक्रा की सनद न मिले,
 जो मैं ज़ब्त से सब से काम न लूँ ।
 वहाँ हुस्न के नाज़ में आय कमी,
 जो वो हक्के-सितम को अदा न करें ॥३॥

शब्दार्थ : सोज़—जलन, नाज़—नखरा ।

२३—ख़ुदा के होते बुतों को पूजूँ,
 नहीं था मुतलक़ गुमान ऐसा ।
 मगर तुम्हें देखकर तो वरलाह,
 आ गया मुझको ध्यान ऐसा ।
 वो छत पै बेपरदा सो रहे हैं,
 क़लक कमर से ये पूछता है ।
 बता तो तेरी नज़र से गुज़रा है,
 कोई खुशरू जवान ऐसा ।
 दिलो-जिगर को फिराके-बुत में,
 हवालाये-चश्मेतर करूँगा ।
 कभी किसी ने किया न होगा,
 किनारये-गङ्ग दान ऐसा ।

शब्दार्थ : मुतलक़—बिल्कुल, गुमान—सम्भावना, कमर—चन्द्रमा,
 खुशरू—सुन्दर, फिराके बुत—प्रेमपात्र का वियोग ।

२४—क़रीबे-खरम थी मजलिस कि आ निकले इधर वो भी ।
 गरज़ वाइज़ की मेहनत रह गई सब रायगों होकर ॥१॥
 निगाहें मिल गई थीं मेरी उनकी रात महफिल में ।
 ये दुनिया है बस इतनी बात फैली दास्तां होकर ॥२॥
 बहुत मुश्किल हुआ है खरम करना मुझको नामे का ।
 बक्रू-शौक से रुकता नहीं ख़ामा रवां होकर ॥३॥

शब्दार्थ : वाइज़—उपदेशक, रायगां—व्यर्थ, नामा—पत्र, बफूरे—
शौक, शौक की ज्यादाती, खात्मा—लेखनी, रवां होकर—चलकर ।

२५—दम लबों पर था दिले-ज़ार के घबराने से ।

आ गई जान में जान आपके आ जाने से ॥१॥

बचता हूँ कूचये-हसीना की हवा खाने से ।

फायदा क्या है दबी आग के भड़काने से ॥२॥

मैं तो कहता हूँ कि मरता हूँ तो फरमाते हैं ।

करे-दुनिया न रुकेगा तेरे मर जाने से ॥३॥

२६—रंगे-शराब से मेरी नीयत बदल गई ।

वाइज़ की बात रह गई साक्की की चल गई ॥१॥

तैयार थे नमाज़ पै हम सुन के ज़िक्रे-हूर ।

जलवा बुतों का देख के नीयत बदल गई ॥२॥

चमका तेरा जमाल जो महफिल में बख्ते-शाम ।

परवाना बेकरार हुआ शमअ जल गई ॥३॥

२७—मैं नज़्म में हूँ आयें तो अहसान है उनका ।

लेकिन ये समझ लें कि तमाशा नहीं होता ॥१॥

हम आह भी करते हैं तो हो जाते हैं बदनाम ।

वो कत्ल भी करते हैं तो चरचा नहीं होता ॥२॥

शब्दार्थ : नज़्म—अन्तिम समय ।

२८—जब कहा मैंने भुला दो ग़ैर को हँस कर कहा ।

याद फिर मुझको दिलाना भूल जाने के लिये ॥१॥

खूब उम्मीदें बैंधी लेकिन हुई हिरमां नसीब ।

बदलियाँ उठीं मगर विजली गिराने के लिये ॥२॥

शब्दार्थ : हिरमां—दुःख ।

२९—तुमने बीमारे-मौहब्बत को अभी क्या देखा ।

जो ये कहते हुए जाते हो कि देखा देखा ॥१॥

तिफले-टिल को मेरे जाने लगी किसकी नज़र ।

मैंने कमबख्त को दो दिन भी न अच्छा देखा ॥२॥

३०—इस जफ़ा पर भी तबियत उस पै बस आ ही गई ।

एक अदा ज़ालिम ने ऐसी की कि वो भा ही गई ॥१॥

आशिकों को रस्मे-ऐशे-दुनियवी रायज़ नहीं ।

क़ैस^१ कब दूल्हा बना लैला कहाँ ब्याही गई ॥२॥

३१—जब उनको रहम कुछ आया हया ने समझाया ।

बिगड़ बिगड़ गई तक़दीर मेरी बन बन के ॥१॥

मरीज़ों-शम को डराया करे न फिर इतना ।

क़ज़ा जो देखले तेवर तुम्हारी चितवन के ॥२॥

शब्दार्थ : हया—लज्जा ।

३२—हया से सिर झुका लेना अदा से मुस्करा देना ।

हसीनों को भी कितना सहल है बिजली गिरा देना ॥१॥

ये तर्ज़ अहसान करने का तुम्हीं को ज़ेब देता है ।

मरज़ में मुबतला करके मरीज़ों को दवा देना ॥२॥

३३—बक्रा बुतों में नहीं है खुदा को पायें कहाँ ।

इसी फिराक में कटते हैं दिन कि जायें कहाँ ॥१॥

ये कहके खूने-जिगर मांगता है शम दिल से ।

कि तेरे घर में रहें रात दिन तो खायें कहाँ ॥२॥

३४—हूर मिस को मये-गुलगूँ को परी कहते हैं ।

शेख़ खुश हों कि ख़फ़ा हम तो खरी कहते हैं ॥१॥

हुस्न के बाब में 'अकबर' की सनद ठीक नहीं ।

ये तो हर एक बुते-कमसिन को परी कहते हैं ॥२॥

शब्दार्थ : मये गुलगूँ—सुखं शराब, कमसिन—कम उम्र ।

३५—उलफ़त जो कीजिये ग़ज़-आशना से क्या ।

वादा जो लीजिये बुते-बेवफ़ा से क्या ॥ १ ॥

क्रातिल तुम्हें कहेंगे जहाँ में हमें शहीद ।

अय यार और होगा तुम्हारी ज़का से क्या ॥ २ ॥

३६—अहबाब क्या करेंगे ठहर कर मज़ार पर ।

बालीं पै खाक उड़ाने को हां आरजू रहे ॥ १ ॥

फ़ितना रहे फ़िसाद रहे गुफ़्तगू रहे ।

मंजूर सब मुझे जो मेरे घर में तू रहे ॥ २ ॥

शब्दार्थ : अहबाब—मित्रगण, मज़ार—कब्र, बालीं—सिरहाना, आरजू—इच्छा ।

३७—ज़िन्दा जो तेरे हिज़्र में हूँ मैं तो क्या अजब ।

गो तू नहीं है पास तेरी आरजू तो है ॥ १ ॥

सुझ को तो देख लेने से मतलब है नासहा ।

बदखू अगर है यार तो हो खूबरू तो है ॥ २ ॥

शब्दार्थ : बदखू—बुरे स्वभाव वाला, खूबरू—सुन्दर ।

३८—आस्मां से क्या ग़रज़ है ज़मी पर ये नमक ।

माहो-अञ्जुम से है बढ़कर उनके बुन्दे बालियाँ ॥ १ ॥

‘फूल’ वो कहती हैं सुझको मैं उन्हें समझा हूँ फूल ।

हैं गुले-रंगी से बेहतर इन गुलों की गालियाँ ॥ २ ॥

शब्दार्थ : माह—चांद, अञ्जुम—तारे ।

३९—पहुँचना दाद को मज़लूम का मुश्किल ही होता है ।

कभी क़ाज़ी नहीं मिलते कभी क़ातिल नहीं मिलता ॥ १ ॥

ये हुस्नो-इश्क ही का काम है शुबहा करें किस पर ।

मिजाज़ उनका नहीं मिलता हमारा दिल नहीं मिलता ॥ २ ॥

शब्दार्थ : दाद—न्याय, मज़लूम—अन्याय पीड़ित ।

४०—राज़े-खुते-शोख की खबर ही न मिली ।

दिल क्या मिलता कभी नज़र ही न मिली ॥ १ ॥

क्या वस्ल का हौसला करें पेशे-रक़ीब ।

जिनको इस वक्त तक कमर ही न मिली ॥ २ ॥

शब्दार्थ : राज़—रहस्य ।

४१—उठाता था हज़ारों सख्तियाँ दिल में इसे रख कर ।

मेरे संगे-लहद पर आरज़ू पटकेगी सर अपना ॥ १ ॥

कहीं देखा न हस्ती वो कदम का इश्तराक़ ऐसा ।

जहाँ में मिस्ल रखती ही नहीं उनकी कमर अपना ॥ २ ॥

शब्दार्थ : संगे-लहद—कब्र का पत्थर, आरज़ू—इच्छा, हस्ती—अस्तित्व, अदम—अनुपस्थिति, इश्तराक़—मेल ।

४२—बहुत अच्छा हुआ आये न वो मेरी अयादत को ।

जो वो आते तो ग़ैर आते जो ग़ैर आते तो गम होता ॥ १ ॥

अगर क़ब्रें नज़र आतीं न दारा वो सिकन्दर की ।

मुझे भी इश्तयाक़े दौलतो-जाहो-हशम होता ॥ २ ॥

शब्दार्थ : अयादत—मिजाज़ पूछना, इश्तयाक़—शौक, जाहो-हशम—वैभव तथा ऐश्वर्य ।

४३—किसी से वो मोहब्बत हो मोहब्बत जिसको कहते हैं ।

फिर उससे ऐसी फुरक़त हो कि फुरक़त जिसको कहते हैं ॥ १ ॥

दिली हालत का अन्दाज़ा हो उस वक्त शफ़िल को ।

मुसीबत ही नहीं देखी मुसीबत जिसको कहते हैं ॥ २ ॥

शब्दार्थ : फुरक़त—जुदाई !

४४—लहज़ा लहज़ा है तरक्की पै तेरा हुस्नो-जमाल ।

जिस को शक हो तुम्हें देखे तेरी तसवीर के साथ ॥ १ ॥^१

नातवानी मेरी देखी तो मुसव्विर ने कहा ।

डर है तुम भी कहीं खिंच आओ न तसवीर के साथ ॥ २ ॥

शब्दार्थ : लहज़ा—प्रति क्षण, मुसव्विर—चित्रकार ।

४५—सरसर ने लाख चाहा उड़ना उस गली से ।

अब तक गुबारा अपना खाके-रहे वफ़ा है ॥ १ ॥

रंगीं तेरीं अदा ने दिल खूँ किया चमन का ।

जो गुल है दाग़ो-दिल है जो वर्ग है हिना है ॥ २ ॥

शब्दार्थ : सरसर—आँधी, रहे वफ़ा—वफ़ा का रास्ता, वर्ग—पत्ता, हिना—मेंहदी ।

४६—दिन रात की ये बेचैनी हैं ये आठ पहर का रोना है ।

आसार बुरे हैं फुरक़त में मालूम नहीं क्या होना है ॥ १ ॥

क्यों पस्त हुई है हिम्मत-दिल क्यों रोक रही है मायूसी ।

कोशिश तो हम अपनी सी कर लें होगा वही जो होना है ॥ २ ॥

४७—उन्हें पसन्द नहीं और इस से मैं बेज़ार ।

इलाही फिर ये दिले-बेकरार क्या होगा ॥ १ ॥

अज़ीज़ों सादा ही रहने दो लौहे-तुरबत को ।

हमी मिटे तो ये नक़शो-निगार क्या होगा ॥ २ ॥

शब्दार्थ : लौहे तुरबत—क्रत्र का पत्थर ।

१. पद्माकर ने भी इसी कारण किसी ब्रज-बाला के स्वरूप-वर्णन में अपनी असमर्थता प्रकट की है—

पल पल में पलटन लगे जाके अंग अनूप ।

ऐसी एक ब्रज-बाला को कहि नहीं सकत सरूप ॥

४८—गुच्छये-दिल को नसीमे-इश्क ने वा कर दिया ।

मैं मरीज़े-होश था मस्ती ने अच्छा कर दिया ॥ १ ॥

सब के सब बाहर हुये बहमो-खिरद होशो तमीज़ ।

खानये-दिल में तुम आओ हमने परदा कर दिया ॥ २ ॥

शब्दार्थ : गुच्छये-दिल—दिल की कली, नसीमे-इश्क—प्रेम की हवा,
खिरद—बुद्धि, होशो-तमीज़—विवेक ।

४९—इनायत तख़लिये में बज़म में ना-आशना होना ।

ग़ज़ब है ये अदायें दमही भर में क्या से क्या होना ॥

जो दिक्कत है तो ये है दिल नहीं हैं मेरे कब्जे में ।

मुझे तसलीम है इरशादे-वाइज़ का बजा होना ॥

शब्दार्थ : तख़लिया—एकान्त, बज़म—सभा, ना-आशना—जिससे
पहचान न हो, तसली—स्वीकार, इरशादे-वाइज़—उपदेशक का कथन,
बजा—ठीक ।

५०—आप से आते हो कब उश्शाके-मुज़्तर की तरफ़ ।

जज़्बे-दिल ये तुमको लाया है मेरे घर की तरफ़ ॥ १ ॥

पूछता है जब कोई उनसे किसे है तुम से इश्क ।

देखते हैं प्यार से शरमा के 'अकबर' की तरफ़ ॥ २ ॥

शब्दार्थ : उश्शाके मुज़्तर—व्याकुल प्रेमियों, जज़्बे दिल—हृदय
की आकर्षण शक्ति ।

५१—नज़्म में हूँ अब भी आजायें वो दम भर के लिये ।

और तो क्या एक निगाहे आख़िरी हो जायगी ॥

शब्दार्थ : नज़्म—प्राण निकले का समय ।

५२—दिल लेके कहते हैं तेरी ख़ातिर से ले लिया ।

उलटा मुझी पै रखते हैं अहसान लीजिये ॥

५३—जब कहा मैंने मेरा दिल मुझको वापस कीजिये ।

नाज़ो-शोखी से वो बोला खो गया मिलता नहीं ॥

५४—गूज से बाले की जुलफ़ उलझी मैं आशिक़ हो गया ।

ये न ख़ौफ़ आया कि ये अफ़ई है वो ज़ंभूर है ॥

शब्दार्थ : अफ़ई—सर्प ।

५५—ज़माना हो गया बिसमिल तेरी सीधी निगाहों से ।

ख़ुदा ना ख़वास्ता तिरछी नज़र होती तो क्या होता ॥^१

शब्दार्थ : बिसमिल—घायल, ख़ुदा नाय ख़वास्ता—ईश्वर न करे ।

५६—बुतों के पहले बन्दे थे मिसों के अब हुये ख़ादिम ।

हमें हर अहद में मुशकिल रहा है बाख़ुदा होना ॥

शब्दार्थ : अहद—समय, बाख़ुदा—आस्तिक ।

५७—ख़ुदा जाने वो क्या समझे कि बिगड़े इस क्रूर मुझ पर ।

कहा था मैंने इतना ही मुझे कुछ अर्ज़ करना है ॥

शब्दार्थ : अर्ज़—निवेदन ।

५८—हँसते हैं क्यों वो ग़ैरों को मुझ पर ।

यही रोना है अब रोना है जो कुछ ॥

५९—बुतों की याद से दिल मायले-फ़रियाद होता है ।

मगर कहना ही पड़ता है बजा इरशाद होता है ॥

१. महाकवि आतिश के अनुसार तो कुछ न होत—

तिरछी नज़रों से तायरे-दिल हो चुका शिकार ।

जब तीर कज पड़ेगा तो देगा निशाना क्या ॥

किन्तु एक और उस्ताद का कहना है—

खता करते हैं टेढ़े तीर ये कहने की बातें हैं ।

वो देखें तिरछी नज़रों से ये सीधे दिल पै आते हैं ॥

६०—देख कर मुझको वो कहते हैं कि अच्छे तो रहे ।

जिन्दा हैं सांस लिये जाते हैं अच्छे क्या हैं ॥

६१—मंजिले-गौर में क्या खाक मिलेगा आराम ।

खू तड़पने की वही और ज़मीं थोड़ी सी ॥

शब्दार्थ : मजिल—पड़ाव, खू—आदत ।

६२—जफ़ायें भेल कर तासीर उत्कृत की दिखाते हैं ।

हिना की तरह पिस लेते हैं तब हम रंग लाते हैं ॥

शब्दार्थ : जफ़ाये—बेवफ़ाइयाँ, तासीर—असर, उत्कृत—प्रेम, हिना—मँहदी ।

६३—बनते हो मेरी जान तो आ बैठो गोद में ।

तुम जानते हो रुह को क़ालिब जरूर है ॥

शब्दार्थ : रुह—आत्मा, क़ालिब—शरीर ।

६४—कहा जो मैंने न तोड़ दिल को तुम्हें मुनासिब है दिल-नवाज़ी ।

तो हँस के बोला कि सहज होगा दिले-शकिस्ता में राह करना ॥

शब्दार्थ : दिले-शकिस्ता—टूटा हुआ दिल ।

६५—तुम्हारे आरिज़े-रोशन ने खोलदी आँखें ।

मैं कह रहा था कि अब क्या है मेहरो-माह के बाद ॥

शब्दार्थ : आरिज़—कपोल, मेहरो-माह—सूर्य, चाँद,

६६—बेगानगी नहीं है बस इतनी दोस्ती है ।

मैं उनको जानता हूँ वो मुझको जानते हैं ॥

६७—नाज़ कहता है कि ज़ेवर से हो तज़ईने-ज़माल ।

नाजकी कहती है कि सुरमा भी कहीं बार न हो ॥^१

१. महाकवि 'नासिख' ने भी लिखा है—

यों नज़ामेत से गरां सुरमाँ है चश्मे-यार को ।

जिस तरह हो रात भारी मर्दुमे-बीमार को ॥

- शब्दार्थ : तजईने जमाल—सौन्दर्य की वृद्धि, बार—बोझ ।
 ६८—ये परवानों का शमाओं से लिपटना और जल मरना ।
 मोहबबत की रविश ये भी हैं यों भी प्यार करते हैं ॥
 ६९—तुम्हारे हुस्न में साइन्स^१ का भी दिल उलझता है ।*
 कमर को देखकर वो खूबे-उकलैदस समझता है ॥
 ७०—वस्त्र का उस खुते-खुदबों से कोई हिन्ट^२ कहों ।
 सिर्फ बोसे में भला सैल्फ़ गवर्नमेंट^३ कहों ॥
 ७१—मेरे हवास इश्क में क्या कम है मुन्तशिर ।
 मजनूँ का नाम हो गया किसमत की बात है ॥
 ७२—कैस का ज़िक्र मेरी शाने-जनूँ के आगे ।**
 अगले वक्तों का कोई, बदिया-पैमाँ होगा ॥
 शब्दार्थ : जनूँ—उन्माद, बदिआ पैमाँ—जङ्गलों में फिरने वाला ।

* हिन्दी के महाकवि बिहारीलाल का भी कहना है—
 भूषन-भार सँभारि है क्यों यह तन सुकुमार ।
 सूधे पाँय न धर परत सोभा ही के भार ॥
 मुन्शा देवीप्रसाद साहब 'प्रोतम' ने इस दोहे का अनुवाद इस प्रकार किया है—

सँभाले बारे-ज़ेवर क्या तेरा नाज़ुक बदन प्यारी ।
 कजी रफ़्तार की कहती है बारे-हुस्न है भारी ॥

१. Science. २. Hint ३. Self Government.
 ** उर्दू के अन्य कवियों ने भी मजनूँ की बराबरी की है या मजनूँ से भी बढ़कर होने का दावा किया है । महाकवि 'दाश' का शेर है—

कैसो-फ़रहाद के किस्से तो सुना करते हो लोकिन ।
 दाद दो इसकी हमने तुम्हें चाहा कैसा ॥

७३—तेरी तिरछी नज़र से हमको डर क्या ।

मोहब्बत की तो फिर दिल क्या जिगर क्या ॥

७४—वलवले उठते हैं दिल में देख कर उनका जमाल ।

हौसले होते हैं पस्त उनकी नज़र को देख कर ॥

शब्दार्थ : वलवले उमङ्गों, जमाल—रूप, हीसला पस्त होना—
हिम्मत टूटना ।

७५—दिल क्योंकर मैं उस रुखसारे-रोशन के मुक़ाबिल हूँ ।

जिसे खुरशीदे-महशर देखकर कहता है मैं तिल हूँ ॥

शब्दार्थ : रुखसार—कपोल, गाल, खुरशीद—सूर्य, महशर—क्रया-
मत, ईश्वरीय न्याय का दिन ।

७६—एक दिल था सो दिया और कहाँ से लाऊँ ।

झूठ कहिये तो मैं कह दूँ कि नहीं और भी है ॥

७७—ज़ेरे गेसू रुवे-रोशन जलवागर देखा किये ।

शाने-हक़ से एक जा शामो-सहर देखा किये ॥

शब्दार्थ : जेरे गेसू—जुल्फों के नीचे, रुवे-रोशन—उज्ज्वल मुख,
शानेहक़—ईश्वर की महिमा, एक जा—एक जगह, शामों-सहर—सायं-
काल तथा प्रातःकाल ।

७८—फेर सकती नहीं तक़वे से मुझे कोई सदा ।

शर्त ये है कि वो पाजेब की झन्कार न हो ॥

शब्दार्थ : तक़वा—परहेज़गारी, सदा—आवाज़ ।

७९—कुछ नतीजा न सही इश्क़ की उम्मीदों का ।

दिल तो बढ़ता है तबियत तो बहल जाती है ॥

८०—बुते-मशरिक़ नहीं मौहताजे-सामों ।

कमर ही जब न हो कैसा कमरबन्द ॥

३—हास्य



१—बुतों से मेल खुदा पै नज़र ये खूब कही ।
 शब गुनाह वो नमाज़े-सहर ये खूब कही ॥१॥
 फ़िटन नफ़ीस सड़क खुशनुमा डिनर^१ हर शब ।
 ये लुफ़ छोड़ फे हज़ का सफ़र ये खूब कही ॥२॥
 तुम्हारी खातिरे-नाजुक का है ख़याल फ़क़त ।
 वरना मुझको रकीबों का डर ये खूब कही ॥३॥
 जनाबे-शेख़ का हो जाऊँ मौतकिद माकूल ।
 निगाहे-यार रहे बे असर ये खूब कही ॥४॥
 सवाले-वस्ल करूँ या तलब हो बोसे की ।
 वो कहते हैं मेरी हर बात पै ये खूब कही ॥५॥

शब्दार्थ : शब—रात, नमाज़े-सहर—प्रातःकाल की नमाज़, मौत-
 किद—मानने वाला ।

२—मजहब का हो क्योंकर इल्मो-अमल दिल ही नहीं भाई एक तरफ़ ।
 किरकिट की खिलाई एक तरफ़ कालिज की पढ़ाई एक तरफ़ ॥१॥
 क्या ज़ौके-इबादत हो उनको जो मिस के लबों के शैदा हों ।
 हलवाये-बहिश्ती एक तरफ़ होटल की मिठाई एक तरफ़ ॥२॥
 ताऊनो-तप और खटमल-मच्छर सब कुछ है ये पैदा कीचड़ से ।
 बग्घे की रवानी एक तरफ़ और सारी सफाई एक तरफ़ ॥३॥
 क्या काम चले क्या रंग जमे क्या बात बने कौन उसकी सुने ।
 है अकबरे-बेकस एक तरफ़ और सारी खुदाई एक तरफ़ ॥४॥

फरयाद किये जा अय अकबर कुछ हो ही रहेगा आखिरकार ।
अल्लाह से तोबा एक तरफ साहब की दुहाई एक तरफ ॥१॥

शब्दार्थ : जीके इबादत—पूजा काचाव, लब—ओष्ठ, शैदा—

आसक्त ।

३—उन्हें शौके-इबादत भी है और गाने की आदत भी ।

निकलती हैं दुआयें उनके मुंह से ठुमरियां होकर ॥१॥

न थी मुतलक़ तवक्क के बिल^१ बनाकर पेश कर दोगे ।

मेरी जां लुट गया मैं तो तुम्हारा मेहमां होकर ॥२॥

निकाला करती है घर से ये कह कर तू तो मजनूँ है ।

सता रखा है मुझको सास ने लैला की मां होकर ॥३॥

रकीबे-सिफ़ला-खू ठहरे न मेरी आह के आगे ।

भगाया मच्छरों को उनके कमरे से धुआं होकर ॥४॥

शब्दार्थ : इबादत—पूजन, सिफ़ला-खू—कमीन ।

४—अपना रंग उनसे मिलाना चाहिये ।

आजकल पीना पिलाना चाहिये ॥१॥

चाल में तलवार है दिल की घड़ी ।

तोप से इसको मिलाना चाहिये ॥२॥

क़ौल-बाबू का है जब बिल^१ पेश हो ।

पेशे-हाकिम बिलबिलाना चाहिये ॥३॥

कुछ न हाथ आये मगर इज़्ज़त तो है ।

हाथ उस मिस से मिलाना चाहिये ॥४॥

शब्दार्थ : पेश—सम्मुख ।

५—जब मैं कहता हूँ कि या अल्लाह मेरा हाल देख ।

हुक़म होता है कि अपना नामये-आमाल देख ॥१॥

सोच तुझको है अगर आइन्दा पालिटिक्स^२ की ।

ले नतायज से मदद और हिस्ट्री^३ में क़ाल देख ॥२॥

शौक्रे-तूलो-पेच इस जुलमत-कदे में है अगर ।

बात बङ्गाली की सुन बङ्गालनों के बाल देख ॥३॥

हुस्न-मिस पर कर नज़र मज़हब अगर जाता है जाय ।

क्रददां को निर्धन की क्या बहस अक्रबर माल देख ॥४॥

शब्दार्थ : नामये आमल—कर्मों का लेखा, जुलमत कदा—ग्रन्थकार-
मय स्थान ।

६—अज्ञोज्ञाने-वतन को पहले ही से देता हूँ नोटिस^१ ।

चुरट और चाय की आमद है हुक्का पान जाता है ॥१॥

ये इतनी गोशमाली तिलक्रे-मकतब की नहीं अच्छी ।

ज़बां आती है उसको सच है लेकिन कान जाता है ॥२॥

मेरी दाढ़ी से रहता है वो बुत इन्कार पर क्रायम ।

मगर जब दिल दिखाता हूँ तो क्रौरन मान जाता है ॥३॥

शब्दार्थ : गोशमाली—कान खेंचना, तिपल—बच्चा ।

७—चल गई यूसा की लाठी रह गया जादू का खेल ।

साहिरों के सांप को मारा खुदा की मार ने ॥१॥

रेल क्राबे तक अगर बन भी गई तो नाज़ क्या ।

अर्शे-बारी तक नहीं पाई रसाई तार ने ॥२॥

बाप मां से शेर से अल्लाह से क्या उनको काम ।

डाक्टर जनवा गये तालीम दी सरकार ने ॥३॥

शब्दार्थ : साहिरों—जादूगरों, नाज़—गर्व, अर्शे-बारी—आकाश,
खुदा की छत, रसाई—पहुँच ।

८—शू मेकरी शुरू जो को एक अज्ञोज्ञ ने ।

जो सिलसिला मिलाते थे बहराम शौर से ॥१॥

पूछा कि भाई तुमतो थे तलवार के धनी ।

मूरिस तुम्हारे आये थे ग़ज़नी वो ग़ोर से ॥२॥

कहने लगे है इसमें भी एक बात नोक की ।

रोटी हम अब कमाते हैं जूते के ज़ोर से ॥३॥

शब्दार्थ : शू मेकरी—जूता बनाना, मूरिस—पुरखा, ग़ज़नी—मह-
मूद ग़ज़नवी की जन्मभूमि, ग़ोर—मोहम्मद गोरी की जन्मभूमि ।

६—अकबर मुझे शक नहीं तेरी तेज़ी में ।

और तेरे बयान की दिलावेज़ी में ॥१॥

शैतान अरबी से है हिन्द में बेख़ौफ़ ।

लाहौल का तरजुमा कर अंग्रेज़ी में ॥२॥

शब्दार्थ : दिलावेज़ी—चित्ताकर्षकता, लाहौल—भाग शैतान ।

१०—कचहरियों में पुरसिश है ग्रेजुएटों की ।

सड़क पै मांग है कुलियों की और मेटों की ॥१॥

नहीं है कद्र तो बस इल्म में दीनो-तक्रवे की ।

ख़राबी है तो फ़क़त शेख़ जी के बेटों की ॥२॥

शब्दार्थ : पुरसिश—पूछ, तक्रव—परहेज़गारी ।

११—मज़हब और मौलवी पै गाली होली ।

स्पीच^१ पै अन्जुमन में ताली होली ॥१॥

दरवाज़े-मुन्सफ़ी है हम पर क्यों बन्द ।

हर बात तो अय जनावे-आली होली ॥२॥

१२—उश्शाक़ को भी माले-तिजारत समझ लिया ।

इस क़दर को मुलाहज़ा लिह्लाह कीजिये ॥१॥

भरते हैं मेरी आह को फ़ोनोग्राफ़ में ।

कहते हैं फ़ीस लीजिये और आह कीजिये ॥२॥

१३—मिल का आटा है नल का पानी है ।
 आबो-दाने की हुक्मरानी है ॥ १ ॥
 एक अदा से कहा मिसो ने कम आन^१ ।
 तीर की मुझ में अब रवानी है ॥ २ ॥

शब्दार्थ : रवानी—चाल ।

१४—परचा रक्खा जो उसने मैं यह समझा ।
 पाकेट^२ में ये बीस रुपये का नोट गया ॥ १ ॥
 घर पर खोला तो बस यही लिखा था ।
 क्या शेर थे वाह वाह मैं लोट गया ॥ २ ॥

१५—स्माल^३ नहीं ग्रेट^४ होना अच्छा ।
 दिल होना बुरा है पेट होना अच्छा ॥ १ ॥
 पंडित हो कि मौलवी हो दोनों बेकार ।
 इन्सान को ग्रेजुएट^५ होना अच्छा ॥ २ ॥

१६—जो दोनों साथ पढ़ें तो ये मुनासिब है ।
 कि अपने घर में क्रिसमस^६ भी कर तू ईद भी कर ॥ १ ॥
 खुदा करे कोई बुत आके कहे मुझ से ।
 बिठा भी ले घर में मुझे मुरीद भी कर ॥ २ ॥

१७—थे केक^७ की फिक में सो रोटो भी गई ।
 चाहते थे बड़ी शय सो छोटी भी गई ॥ १ ॥
 वाइज़ की नसीहत क्यों न मानें आखिर ।
 पतलून की ताक में लंगोटी भी गई ॥ २ ॥

१. Come on. २. Pocket. ३. Small. ४. Great.
 ५. Graduate. ६. Christmas. ७. Cake.

१८—कर दिया करज़न ने ज़न मरदों की सूरत देखिये ।

आबरू चेहरे की सब फ़ैशन बताकर पूंछ ली ॥ १ ॥

सच ये है इन्सान को यूँ रूप ने हलका कर दिया ।

इब्तदा दाढ़ी से की और इन्तहा में मूँछ ली ॥ २ ॥

शब्दार्थ : ज़न—स्त्री, इब्तदा—आरम्भ, इन्तहा—अन्त ।

१९—मैं रय्यत हूँ वो शाहना दिलरी है कहाँ ।

मुझको क्यों रश्क आये वज़ए-मिल्लते-अंग्रेज़ पर ॥ १ ॥

कांटे बिछ जाते हैं उन लोगों की राहे-रिज्क में ।

ख़ौफ़ आता है छुरी चलती है उनकी मेज़ पर ॥ २ ॥

शब्दार्थ : राहे-रिज्क—भोजन का मार्ग ।

२०—रह गया दिल ही में शौके-सायये-अलताफ़े-ख़ास ।

मुझको आने को इजाज़त दी नहीं बैडरूम^१ में ॥ १ ॥

खाने के कमरे से रुख़सत कर दिया बाद-अज़-डिनर^२ ।

थे फ़क़त छुरियाँ ही और कांटे मेरे मक़सूम में ॥ २ ॥

शब्दार्थ : अलताफ़े-ख़ास—विशेष प्रेम, मक़सूम—भाग्य ।

२१—किस्सये-मनसूर सुन कर बोल उठी वो शोख़ मिस ।

कैसा अहमक़ लोग था पागल को फांसी क्यों दिया ॥ १ ॥

काश अय अकबर वही हालत तुझे भी पेश आय ।

और ये काफ़िर पुकारे दर पनाहे-मन बिया ॥ २ ॥

शब्दार्थ : अहमक़—पागल, दरपनाहे मत बिया—मेरी शरण में आ ।

२२—उनकी तहरीकों से यूँ रहती है दुनिया बेचैन ।

जिस तरह पेट में बीमार के बाई दौड़े ॥ १ ॥

मैम्बरी के लिये लपका मेरी जानिब वो गोल ।

गाय मोटी नज़र आयी तो कसाई दौड़े ॥२॥

२३—ख्वाह साहब को तुम सलाम करो ।

ख्वाह मन्दिर में राम राम करो ॥१॥

भाई जी का फ़क़्त ये मतलब है ।

जिसमें रुपया मिले वो काम करो ॥२॥

२४—मेरी रसाई है दौर में भी हरम में भी मेरी मनजिलत है ।

बुतों से बोसे की है तवक्के खुदा से उम्मीदे-मग़फ़रत है ॥१॥

झुका है सर अपना पाये-बुत पर ज़बान पर है गिला जफ़ा का ।

मेरे अम्ल में है तरज़े-सय्यद ग़ज़ल में अन्दाज़े-लाजपत है ॥२॥

शब्दार्थ : रसाई—पहुँच, दौर—मन्दिर, मनजिलत—आदर, मग़-
फ़रत—क्षमा-दान, सय्यद—सर सैयद ग्रहमद, लाजपत—पंजाब के प्रसिद्ध
नेता श्रीयुत लाला लाजपतराय ।

२५—इस क़दर था खटमलों का चारपाई में हज़ूम ।

वस्ल का दिल से मेरे अरमान रुख़सत हो गया ॥१॥

लात दुनिया ने जो मारी बन गया दीदार वो ।

थी बुरी ठोकर मगर शैतान रुख़सत हो गया ॥२॥

शब्दार्थ :—अरमान—इच्छा, दीदार—धार्मिक ।

२६—इस से तो इस सदी में नहीं हमको कुछ ग़रज़ ।

सुकरात^१, बोले क्या अरस्तू^२ ने क्या कहा ॥१॥

१. आप यूनान के बड़े प्रसिद्ध तत्वज्ञानी थे । आपका जन्म ईसा से
४६९ वर्ष पूर्व एथन्स में हुआ था । अप आरकीलस (Archelaus)
के शिष्य थे । लोगों ने आप पर नास्तिकता तथा युवकों को बिगाड़ने
का अभियोग लगाया । न्यायाधीश ने आपको दोषी समझा और प्राण
दंड की सज़ा दी । ईसा से ३९९ वर्ष पूर्व यह महापुरुष ज़हर का
प्याला पीकर सदैव के लिए सो गया ।

२. अरस्तू भी यूनान के एक प्रसिद्ध तत्वज्ञानी थे । आपका जन्म

बहरे खुदा जनाव दें हमको इत्तला ।

साहब का क्या जवाब था बाबू ने क्या कहा ॥ २ ॥

शब्दार्थ : बहरे खुदा—ईश्वर के लिये ।

२७—हमको अपने एलबम^१ पर नाज़ का है क्या महल ।

बेहद अरज़ाँ हो गया है अब तो फ़ोटो^२ आपका ॥ १ ॥

आपके दर्शन मुसग्विर के भी हिस्से में नहीं ।

बस लिया जाता है फ़ोटो ही से फ़ोटो आपका ॥ २ ॥

शब्दार्थ : अरज़ाँ—सस्ता ।

२८—मौहताजे-दरे-वकीलों-मुख्तार हैं आप ।

सारे अमलों के नाज़बरदार हैं आप ॥ १ ॥

आवारा वो मुन्तशिर हैं मानिन्दे-गुबार ।

मालूम हुआ मुझे ज़मींदार हैं आप ॥ २ ॥

शब्दार्थ : दर—द्वार, मुन्तशिर—व्यग्र ।

२९—कहती है ज़राहे-किन्न मुझ से वो गर्ल^३ ।

क्या तुझ से मिलूँ कहीं का तू ड्यूक^४ न अर्ल^५ ॥ १ ॥

अकबर ने कहा दिखा के दागे-दिलो-अश्क ।

हैं मेरी गिरह में भी ये रूबी^६ ये पर्ल^७ ॥ २ ॥

ईसा से ३८४ वर्ष पूर्व स्टैगीरा नामक स्थान में हुआ था । किन्तु आप अधिकतर एथैन्स में ही रहा करते थे । आप महान् सिकन्दर (Alexander the Great) के गुरु भी थे । ईसा से ३३२ वर्ष पूर्व इस महापुरुष ने सदैव के लिए अपनी कीर्ति छोड़ कर इस संसार से मुँह मोड़ लिया ।

१. Album, २. Photo, ३. Girl, ४. Duke, ५. Earl, ६. Ruby, ७. Pearl.

शब्दार्थ : ज़राहे-किन्नर—घमण्ड से, गर्ल—लड़की, ड्यूक—अर्ल—
उपाधियों के नाम, अश्क—आँसू, रूबी—लाल, पर्ल—मोती ।

३०—उम्मीदे-चश्मे-मरव्वत कहाँ रही बाकी ।

ज़रिया बातों का जब सिर्फ़ टेलीफ़ोन^१ हुआ ॥ १ ॥

निगाहें गर्म क्रिस्मस^२ में भी रहीं हम पर ।

हमारे हक़ में दिसम्बर भी माहे-जून हुआ ॥ २ ॥

शब्दार्थ : चश्मे-मरव्वत—कृपा की दृष्टि ।

३१—वो मिस बोली मैं करती ज़िक्र अपने फ़ादर^३ से ।

मगर आप अल्लाह-अल्लाह करता है पागल का माफ़िक़ है ॥ १ ॥

न माना शेख़ जी ने चख़ गये दस पाँच ये कहकर ।

अगर काबिज़ हैं ये बिसकुट तो हों अल्लाह मालिक है ॥ २ ॥

३२—शायक़ तहकीक़ के ये मज़मूँ सुन लें ।

इन्सान की शक़ल जैसे मैमूँ न बना ॥ १ ॥

पाजामा भी यूँ ही इरतफ़ाक़ से बदला ।

सिमटा उभरा गर्ज कि पतलून बना ॥ २ ॥

शब्दार्थ : मैमूँ—वन्दर, इरतफ़ाक़—विकास ।

३३—फ़ैज़े-कालिज से ज़वानी रह गई बालाये-ताक़ ।

इम्तहाँ पेशे-नज़र और आशिक़ी बालाये-ताक़ ॥ १ ॥

वो चिराग़ों से हैं जलते ऐसे हैं रोशन ज़मीर ।

कहते हैं रखिये पुरानी रोशनी बालाये-ताक़ ॥ २ ॥

शब्दार्थ : रोशन ज़मीर—दिव्य दृष्टि रखने वाले, बालाये-ताक़—
ताक़ पर, अर्थात् अलग ।

३४—नुक़ता ये सुना है एक बंगाली से ।

करना हो बसर जो तुम को खुशहाली से ॥ १ ॥

खाली हो जगह तो अपने भाई को दिलावो ।

गुस्सा आय तो काम लो गाली से ॥ २ ॥

शब्दार्थ : मुक्तता—बारीक बात ।

३५—बाबू जी का वो बुत हुआ नौकर ।

गौर उसको प्याम देता है ॥ १ ॥

बाबू कहते हैं वो न जायगा ।

मेरे अन्डर^१ में काम देता है ॥ २ ॥

३६—लज्जते नाने-जर्वी तुमको मुबारिक अय शेख ।

मुझ गुनहगार को है सिर्फ़ मुतज्जन काफ़ी ॥ १ ॥

हज़रते-ख़िज़्र टिकट मुझको दिला दें आकर ।

रहनुमाई के लिये मेरी है अज़न काफ़ी ॥ २ ॥

३७—कुछ सैन नहीं खुश आते हैं न भाते हैं बनरजी ।

मैं ज़ील^२ का तालिब हूँ न ख़्वावाहाने-आनर^३ जी ॥ १ ॥

सुनता नहीं लैक्चर^४ मैं पड़ा रहता हूँ दिन रात ।

लगता फ़क़्त लेडियों में वक्ते-डिनर जी ॥ २ ॥

३८—सब समझते हैं कि ये हश्के-बुतां एक रोग है ।

लेकिन इसको क्या करें मिलता जो मोहनभोग है ॥ १ ॥

शाहिदाने-मग़रिबी करते नहीं मुझको क़बूल ।

टाल देते हैं ये कहकर आप काला लोग है ॥ २ ॥

शब्दार्थ : शाहिदाने-मग़रिबी—पश्चिम के माशूक ।

१. Under.

इस पद्य में अकबर ने अंग्रेज़ी पढ़े बाबू लोगों की उर्दू का नमूना दिखाया है ।

२. Zeal, ३. Honour, ४. Lecture, ५. Dinner.

३६—हुस्न देखिये बुताने-काशी का ।

चेहरा कि चांद पूर्णमाशी का ॥१॥

चश्मे-तर देखकर वो मिस बोली ।

महकमा है ये आवपाशी का ॥२॥

४०—परदे का किया है खुद अड़झा पैदा ।

खुद हमने किया इज़ार और अज़्जा पैदा ॥१॥

क्या खूब कहा है मौलवी मेहदी ने ।

नेचर ने किया है हमको नज़्जा पैदा ॥२॥

शब्दार्थ : नेचर—प्रकृति ।

४१—ज़र कौम से लेकर ऐसा सामान करो ।

जिससे कि तुम्हारी बज़्म बन जाये बहिश्त ॥१॥

हलवे-मांडे से काम रखो भाई ।

मुरदा दोज़ख में जाय या जाये बहिश्त ॥२॥

शब्दार्थ : ज़र—रुपया, बज़्म—सभा ।

४२—लैला ने साया पहना मजनूँ ने कोट पहना ।

टोका जो मैंने बोले बस बस ख़ामोश रहना ॥१॥

हुस्नो-जनूँ बदस्तूर अपनी जगह हैं लेकिन ।

है लुत्फ़े-बहरे-हस्ती फ़ैशन के साथ बहना ॥२॥

शब्दार्थ : लुत्फ़े-बहरे-हस्ती—जीवन का आनन्द ।

४३—छोड़ लिट्टेचर को अपनी हिस्ट्री को भूल जा ।

शेखो-मसजिद से तआल्लुक़ तर्क कर स्कूल जा ॥१॥

चार दिन की ज़िन्दगी है कोफ़्त से क्या फ़ायदा ।

खा डबल रोटी किलरकी कर खुशी से फूल जा ॥२॥

शब्दार्थ : लिट्टेचर—साहित्य, तआल्लुक़—सम्बन्ध, तर्क कर—
त्याग कर, कोफ़्त—रंज ।

४४—तिल खेत में मिल जाय तो गोदाम मे ले जायें ।

क्या फायदा आरिज पैं किसी बुत के जो तिल है ॥१॥

तनख्वाह के बिल से हमें होती है मुसरत ।

और शेख ये कहता है कि ये सांप का बिल है ॥२॥

शब्दार्थ : आरिज—कपोल, बुत—माशूक, मुसरत—खुशी ।

४५—फरमायें मेरा कत्तूर जो हजरत माफ़ ।

जो अमर है वाकई गुज़ारिश करूं साफ़ ॥१॥

इन्कार नहीं नमाज़-रोज़े से मुझे ।

लेकिन ये तरीक़ अब है फ़ैशन के खिलाफ़ ॥२॥

४६—दरबारे-सलतनत में है किब्रो ख़दपसन्दी ।

मज़हब में देखता हूँ जंग और गिरोहबन्दी ॥१॥

रिन्दी वो आशिकी का है शग़ल सबसे बेहतर ।

लैमनेड है और विहसकी बन्दा है और बन्दी ॥२॥

शब्दार्थ : किब्र—गर्व, जंग—लड़ाई, गिरोहबन्दी—अपने अपने
अखाड़े अलग-अलग कायम करना ।

४७—मैंने कुछ इख़्तलाफ़ किया आप से अगर ।

गुस्सा अबस है आपका नौकर नहीं हूँ मैं ॥

अय क़िबला मुझ पैं आप चढ़े आते हैं ये क्यों ।

मैम्बर इस अन्ज्मन का हूँ मिम्बर नहीं हूँ मैं ॥

शब्दार्थ : इख़्तलाफ़—मतभेद, अबस—व्यर्थ, क़िबला—मान्यवर,
मैम्बर—सभासद, अन्ज्मन—सभा, मिम्बर—उपदेश देने का स्थान ।

४८—बेदिल हमें बरोज़े-सलूनों न कीजिये ।

लिह्लाह बात मानिये नोनो^१ न कीजिये ॥

कल की सदा न खुबिये-फितरत न लुत्फे दीद ।

बेहतर यही है ख्वाहिशे-क्रोनो न कीजिये ॥

शब्दार्थ : लिल्लाह—ईश्वर के लिये, नो-नो—नहीं-नहीं, सदा—
आवाज़, फितरत—स्वभाव, लुत्फे दीद—देखने का मजा ।

४९—हर एक को खुश करूं मैं क्योंकर साहब ।

अपनी ही तरफ़ बुलाते हैं हर साहब ॥

आशायशे-उम्र के लिये काफ़ी हैं ।

बीबी राज़ी हो और कलकटर साहब ॥

शब्दार्थ : आशायशे उम्र—जीवन का सुख ।

५०—जौरे-फलक का माजरा आप से क्या वयां करूं ।

तफ़क्रा देखिये ज़रा हम पै ये हैं अजीब दिन ॥

अकल सुपुर्दे मासूर माल सुपुर्दे-आजनाब ।

जान सुपुर्दे-डाक्टर रूह सुपुर्दे डार्विन ॥

शब्दार्थ : जौरे-फलक—आसमान का जुल्म, माजरा—विवरण,
तफ़क्रा—अन्तर, आजनाब—सम्मानित पुरुष, रूह—आत्मा ।

५१—ख़्याल शाहर का है निराला ये कह गया एक कहने वाला ।

शबाब के साथ यूं है रिन्दी का जैसे फागन के साथ होली ॥

कहो ये रिन्दाने-एशिया से कि बज़्मे-इशरत के ठाठ बदलें ।

उड़नखटोला है अब मिसों का गई परीजान की वो डोली ॥

शब्दार्थ : शबाब—जवानी, रिन्दी—मस्ती, रिन्द—मस्त, बज़्मे-
इशरत—आनन्द मनाने की सभा ।

५२—मगरिबी ज़ौक है और वज़्र की पाबन्दी भी ।

ऊंट पर चढ़के धियेटर को चले हैं हज़रत ॥

शब्दार्थ : ज़ौक—शौक, वज़्र—मर्यादा, पाबन्दी—पालन ।

१३—शेख्र आनर के लिये आते हैं मैदान के बीच ।

चोट हाथों में हैं स्पीच क्लमदान के बीच ॥

१४—पादरी से वो मिले पहले तो क्या शेख्र को उज्र ।

देखिये पीर का नम्बर तो है इतवार के बाद ॥

१५—शेख्र के दामन को अकबर ने दिया बोसा जो कल ।

हमनं बरकत के लिये एक मिस का साया लू लिया ॥

१६—जो जिसके मुनासिब था गदू^१ ने किया पैदा ।

यारों के लिये औहदे चिढ़ियों के लिये फन्दे ॥

शब्दार्थ : गदू — आकाश ।

१७—मशरिब ने खुर्दबी^२ से कमर उन की देखली ।

मशरिक की शायरी का मज़ा किरकिरा हुआ ॥

शब्दार्थ : मशरिब—पच्छिम, मशरिक—पूर्व, खुर्दबी—सूक्ष्म-दर्शक-यन्त्र ।

१८—क्या अजब हो गये मुझ से मेरे दमसाज़ जुदा ।

दौरे-क्रोनो में गले से हुई आवाज़ जुदा ॥

शब्दार्थ : दमसाज़—सान्त्वना देने वाले, दौर—युग ।

१९—पाकर खिताब नाच का भी शौक हो गया ।

सर^१ हो गये तो बाल का भी शौक हो गया ॥

शब्दार्थ : सर—एक उपाधि, बाल—नृत्य, नाच ।

२०—क्या वस्ल का होसला करें पेशे-रक़ीब ।

जिनको इस वक्त तक कमर ही न मिली ॥

२१—बन्दूक का नहीं है जो लैसन्स^२ गम नहीं ।

मैंने तो इस ख़याल ही को गोली मार दी ॥

२२—आदत जो पड़ी हो हमेशा से वो दूर भला कब होती है ।

रक्खी है चिनौटी पाकेट^३ में पतलून के नीचे धोती है ॥

६३—मौलवी साहब न छोड़ेंगे खुदा गो बरूश दे।

घेर ही लेंगे पुलिसवाले सज़ा हो या न हो ॥

६४—क्यों सिविल सर्जन^१ का आना रोकता है हमनशीं।

इस में है एक बात आनर^२ की शफ़ा हो या न हो ॥

६५—बाबू हमें निगल गये इस अहद में तो ख़ैर।

रहना पड़ा है नबियों को मछली के पेट में ॥

१. Civil Surgeon, २. Honour.

✽ एशिया माइनर में यूनिस नामक मुसलमानों के एक नबी हुए हैं। लोगों ने आपके उपदेश की उपेक्षा की। कहा जाता है कि आपने खुदा से शिकायत की। खुदा ने उत्तर दिया कि जन-साधारण से कह दो कि उन्हें थोड़ा अवकाश और दिया जाता है। यदि इस अवधि में भी वे तुम्हारे उपदेश को न मानेंगे और अपनी पुरानी बातों ही पर डटे रहेंगे तो मैं अपना कोप प्रगट करूँगा। कोप प्रगट होने से पूर्व अमुक-अमुक चिह्न दृष्टिगोचर होंगे। अस्तु, लोगों ने यूनिस साहब की बात न सुनी। अवधि समाप्त होने को आई तो कोप के चिह्न दृष्टिगोचर होने लगे। यूनिस साहब ने यह सोचकर कि कहीं मैं भी अन्य मनुष्यों के साथ-साथ किसी संकट में न आ जाऊँ, अपना देश छोड़ने का विचार कर लिया और एक नाव में बैठकर चल दिये। मङ्गधार में पहुँचने पर नाव डगमगाने लगी। मरुलाह ने कहा, “हमारी नाव उस समय डगमगाती है जब कोई ऐसा मनुष्य नाव में बैठ जाता है जो अपने स्वामी की आज्ञा के बिना भाग आया हो। यदि कोई ऐसा मनुष्य है तो नाव से पानी में कूद पड़े नहीं तो वह अपने साथ सबको ले डूबेगा।” यूनिस साहब ने सोचा कि ऐसा तो मैं ही हूँ। बिना खुदा की आज्ञा के मैं अपना देश छोड़ रहा हूँ। यह सोचकर आप पानी में कूद पड़े। एक मछली, जो मुँह खोले हुए बैठी थी, आपको निगल गई।

६६—दाढ़ी खुदा का नूर है बेशक मगर जनाब ।
क़ैशन के इन्तज़ामे-सफ़ाई को क्या करूँ ॥

६७—न कटलट है यहाँ न कांटा छुरी है ।
मगर घी है तो खिचड़ी क्या बुरी है ॥

६८—खींचो न कमानों को न तलवार निकालो ।
जब तोप मुक़ाबिल है तो अख़बार निकालो ॥

६९—बिरगड के मौलवी को क्या पूछते हो क्या है ।
मगरिब की पालिसी का अरबी में तरजुमा है ॥

७०—मालगाड़ी पै जिन्हें भरोसा है अकबर ।
उनको क्या गुम है गुनाहों की गरां-बारी का ॥
शब्दार्थ : गरां-बारी—बोझ ।

७१—फ़रमा गये हैं ये ख़ूब भाई धूरन ।
दुनिया रीटी है और मज़हब चूरन ॥

७२—आदम छुटे बहिश्त से गेहूँ के वास्ते ।
मस्ज़िद से हम निकल गये बिस्कुट की चाट में ॥

७३—साहब सलामत अब भी मेरी शेख़ जी से है ।
लेकिन छूटे छमाहे वही राह हाट में ॥

७४—बोले चपरासी जो मैं पहुँचा ब-उम्मीदे-सलाम ।
फाकिये झाक आप भी साहब हवा खाने गये ॥

७५—उनको बिस्कुट के लिए ख़ूजी की थैली मिल गई ।
कैम्प में गुल मच गया मजनूँ को लैली मिल गई ॥

७६—इन से बोसा मांगता हूँ उन से बोट ।
बुत भी मुझ से तंग है और शेख़ भी ॥

७७—नेटवियत पर किया मैंने इज़हार-मलाल ।
सुन के साहब ने कहा 'सच है मगर हम क्या करें' ॥

७८—फ़ज़ले-खुदा से इज़्ज़त पाई आज हुवे हम सी० एस० आई^१ ।

शेख़ न समझे लफ़्ज़ अंग्रेज़ी बोले हुवे हैं ये ईसाई ॥

७९—ऐसा शौक़ न करना अकबर गोरे को न बनाना साला ।

भाई रंग यही है अच्छा हम भी काले यार भी काला ॥

८०—यही सबब है अब उनकी बातों पे कान धरते नहीं हैं लड़के ।

खिंचा न हो दस्ते-मौलवी से न था यहां कोई कान ऐसा ॥

८१—वो हँस के बोले जगह कहाँ है दिखाऊँ कारीगरी जो अपनी ।

कहा था मुन्किर से मैंने एक दिन बना तो ले आस्मान ऐसा ॥

शब्दार्थ : मुन्किर—नास्तिक ।

८२—पका लें पीस कर दो रोटियाँ थोड़े से जौ लाना ।

हमारी क्या अय भाई न मिस्टर हैं न मौलाना ॥

८३—इस्लाम को जो कहते हैं फैला बज़ोरे-तेग़ ।

ये भी कहेंगे फैली खुदाई बज़ोरे-मौत ॥

शब्दार्थ : तेग़—तलवार ।

८४—जब सुन चुके मेरी ग़ज़लें बोले ला चन्दा ।

जो हिनहिनाया है आज इतना तो लीद भी कर ॥

८५—कोठी में जमा है न डिपॉज़िट^२ है बैंक^३ में ।

कुलास कर दिया मुझे दो चार थैंक्स^४ ने ॥

८६—सुना के मिसरा ये शेख़ साहब बहुत ज्यादा हँसा चुके हैं ।

हमारी गर्दन वो क्यों न मारें जो नाक अपनी कटा चुके हैं ॥

८७—रक़ीबों ने रपट लिखवाई है जा जा के थानों में ।

कि अकबर नाम लेता है खुदा का इस ज़माने में ॥

८८—मज़हब ने पुकारा अय अकबर अलाह नहीं तो कुछ भी नहीं ।

यारों ने कहा ये क़ौल ग़लत तनख़्वाह नहीं तो कुछ भी नहीं ॥

८६—उन के दस्ते-नाज़नीं पाई टी^१ ।

अब कहीं बाक्री है हम में पायटी^२ ॥

शब्दार्थ : टी—चाय, पायटी—पवित्रता ।

९०—धमका के बोसा लूँगा रुख़े-माह का ।

चन्दा वसूल होता है साहब दबाव से ॥

९१—आशिकी हो बुरा इस ने बिगाड़े सारे काम ।

हम तो ए बी में रहे अग़यार बी० ए० हो गये ॥

९२—खाई मिज़गाँ वो नज़र की जो क्रसम बोला वो शोख़ ।

आप अब क्रस्में भी खाते हैं छुरी-काँटे से ॥

शब्दार्थ : मिज़गाँ—भवें ।

९३—इस अखाड़े में अड़ङ्गे देख कर क़ानून के ।

शोख़ ने तहमद से हिजरत की तरफ़ पतलून के ॥

शब्दार्थ : हिजरत—गमन ।

९४—वज़ए मगरिब सीख कर देखा तो ये काफ़ूर थी ।

अब मैं समझा वाक़ई दाढ़ी खुदा का नूर थी ॥

शब्दार्थ : नूर—ज्योति ।

९५—बे पास के तो सास की भी अब नहीं है आस ।

मौक़फ़ शादियाँ भी हैं अब इम्तहान पर ॥

९६—हम क्या कहें अहबाब क्या कारे-नुमायाँ कर गये ।

बी० ए० किया नौकर हुवे पेन्शन^३ मिली फिर मर गये ॥

शब्दार्थ : कारे नुमायाँ—उल्लेखनीय कार्य ।

९७—शाप^४ में सब जमा हैं मुझ से न पी पी कीजिये ।

आप इस बोटल को मेरे घर पै बी० पी० कीजिए ॥

१. Tea, २. Piety,

३. Pension, ४. Shop.

शब्दार्थ : शाप—दुकान ।

१८—शेख जी घर से न निकले और मुझ से कह दिया ।

आप बी० ए० पास हैं और बन्दा बी० बी० पास है ॥

१९—आबरू चाहो तो अँग्रेज से डरते रहो ।

नाक रखते हो तो तेग़े-तेज़ से डरते रहो ॥

१००—शेख जी के दोनों बेटे बा-हुनर पैदा हुए ।

एक है खुफ़िया पुलिस में एक फांसी पा गये ॥

१०१—मुसल्मानों को लुफ़ो-ऐश से जीने नहीं देते ।

खुदा देता है खाना शेख जी पीने नहीं देते ॥

१०२—सिधारे शेख काबे को हम इज़लिस्तान देखेंगे ।

वो देखें घर खुदा का हम खुदा की शान देखेंगे ॥

१०३—जब ग़म हुआ चढ़ा लीं दो बोटलें इकट्ठी ।

मुल्ला की दौड़ मसजिद 'अकबर' की दौड़ भट्टी ॥

१०४—इस की हरकत है कलीदे-मगरिबी पर मुनहसिर ।

दिल ये सीने में या पाकेट^१ के अन्दर वाच^२ है ॥

शब्दार्थ : कलीद—कुञ्जी, मुनहसिर—आश्रित, पाकेट—जेब,
वाच—घड़ी ।

१०५—नाक रगड़ी बरसों इस अरमान में ।

सुनलें मेरी बात एक दिन कान में ॥

१०६—तुम नाक चढ़ाते हो मेरी बात पै अय शेख ।

खैचूँगा किसी रोज़ मैं अब कान तुम्हारे ॥

१०७—शबों को कोर्स^३ दिन में फ़ारमूला^४ वर्क^५ करते हैं ।

अदीम उल्फुरसती से उन की उल्फ़त तर्क करते हैं ॥

शब्दार्थ : शब—रात्रि, कोर्स—अध्ययन की पुस्तकें, फ़ारमूला—सूत्र,

१. Pocket, २. Watch, ३. Course, ४. Formula,
५. Work.

वर्क—काम, अदीम उल्फुरसती—अवकाशाभाव, तर्क—छोड़ना ।

१०८—हरीफों पर खजाने हैं खुले यां हिज्रे-गेसू है ।
वहां पे-बिल^१ है और यां सांप का भी बिल नहीं मिलता ॥

शब्दार्थ : हरीफ—दुश्मन, हिज्रे-गेसू—जूल्फों का वियोग, पे-बिल—तनख्वाह का बिल, सांप का बिल—सांप का भट ।

१०९—एवज़ कुरआन के अब है डारविन का ज़िक्र यारों में ।
जहां थे हज़रते आदम वहां बन्दर उछलते हैं ॥

११०—फ़र्क क्या वाइज़ो आशिक में है बतायें तुम से ।
उसकी हुज्जत में कटी इसकी मौहब्बत में कटी ॥

१११—थी शबे-तारीक चोर आये जो कुछ था ले गये ।
कर ही क्या सकता था बन्दा खांस लेने के सिवा ॥

११२—हमारे बाग में पेड़ अब कहां माली लगाते हैं ।
उन्होंने भी तो देखा ये फ़क़्त डाली लगाते हैं ॥

११३—ये आपका फ़रमाना है बजा कुरआन भी है अल्लाह भी है ।
मुशकिल तो ये है लेकिन कि इधर आनर^२ भी है तनख्वाह भी है ॥

११४—काबिले-रश्क है ज़माने में ।
दिन वकीलों का रात आशिक की ॥

११५—लिपट भी जा, न रुक अकबर, ग़ज़ब की ब्यूटी^३ है ।
नहीं नहीं पै न जा, ये हया की ब्यूटी^४ है ॥

शब्दार्थ : ब्यूटी—सौन्दर्य, हया—लज्जा, ड्यूटी—धर्म ।

११६—शाईराना दाद अच्छी दी ये मुझ को चर्ख़ ने ।
तेज़े-अबरू का था आशिक ख़ान बहादुर कर दिया ॥

- ११७—बी० ए० के कमाल की कामयाबी है यही ।
सरविस^१ के लगाव से मौअज़िज बनना ॥
- ११८—हरमवालों से क्या निसबत हम अहले-होटल को ।
वहां कुरआन उतरा है यहां अंग्रेज़ उतरे हैं ॥
- ११९—तुम बीवियों को मेम बनाते हो आज कल ।
क्या ग़म जो हमने मेम को बीवी बना लिया ॥
- १२०—खुदा की राह में अब रेल चल गई अकबर ।
जो जान देना हो अंजन से कट मरो एक दिन ॥
- १२१—अजब क्या शेर बिरगड में जो मुश्ताक़े-गुलामी हैं ।
हमारे ऊँट साहब खुद ही कमसरिश्ट^२ के हामी हैं ॥
शब्दार्थ : मुश्ताक़ — इच्छुक, हामी—सहायक ।
- १२२—गुज़र उनका हुआ कब आलमे-अल्लाहो-अकबर में ।
पले कालिज^३ के चक्कर में मरे साहब के दफ़्तर में ॥
शब्दार्थ : अल्लाहो-अकबर—ईश्वर बड़ा है ।
- १२३—शौक़े-सिविल-सरविस^४ ने मुझ मजनून को ।
इतना दौड़ाया लंगोटी कर दिया पतलून को ॥
- १२४—बुरा हुआ कि रक़ीबों में बढ़ गये बाबू ।
ज़रा सी बात हुई और ये सुबे-थाने चले ॥
- १२५—हम-नशीं ज़ुल्फ़े बुतां पर चुप न रहना चाहिये ।
बात जब कुछ बन न आये शेर कहना चाहिये ॥
- १२६—हुए इस क़दर मोहज्जिब कभी घर का मुँह न देखा ।
कटी उम्र होटलों में मरे अस्पताल जाकर ॥

१. Service, २. Commissariat,
३. College, ४. Civil Service.

१२७—अफईए-जुल्फे-मिस का तो सौदा बुरा नहीं ।
पेचोदगी जो कुछ है क़त उसके बिल में है ॥

शब्दार्थ : अफई—साँप । सौदा—ख़्त ।

१२८—हिज़ की शब यों ही काटो भाइयो ।
उनका क़ोटो लेके चाटो भाइयो ॥

शब्दार्थ : हिज़—वियोग ।

१२९—क्या पूछते हो अकबरे-शोरीदा-सर का हाल ।
खुफ़िया पुलिस से पूछ रहा है कमर का हाल ॥

१३०—मुमकिन नहीं अय मिस तेरा नोटिस^१ न लिया जाय ।
गाल ऐसे परीज़ाद हों और किस^२ न लिया जाय ॥

१३१—हमें क्या बाल्शेविक^३ फिर गया या रूस आता है ।
यहाँ तो क्रिके-सरमाई है माहे-पूस आता है ॥

शब्दार्थ : सरमाई—रजाई ।

१३२—डिनर^४ से तुम को कम फुगसत यहाँ क्राके से कम ख़ाली ।
चलो बस हो चुका मिलना न तुम ख़ाली न हम ख़ाली ॥

१३३—बताऊँ आप से मरने के बाद क्या होगा ।
पुलाव खायेंगे अहबाव क़ातहा होगा ॥

१३४—पेश आ जाय जो मसजिद तो नमाज़ी भी सही ।
बुत-जो मौक़े से मिले, दस्तराज़ी भी सही ॥

शब्दार्थ : पेश—सामने, नमाज़ी—नमाज़ पढ़ने वाला अर्थात् धार्मिक, बुत—मायूक, दस्तराज़ी—बलात्कार ।

भावार्थ—हमारी धार्मिकता केवल बाह्य है ।

१३५—सरासर नूरे-तक्रवा साये पर कुर्बान कर आये ।

ये क्या अच्छा किया तुमने अगर जर खोंके 'मिस' लाये ॥

शब्दार्थ : सरासर—बिल्कुल, नूर—प्रकाश, कुरबान—न्योछावर, तक्रवा—परहेजगारी, साया—अंग्रेजी महिलाओं का वस्त्र, जर—रुपया, मिस—आंग्ल कुमारी, ताँबा ।

१३६—दिली ख्वाहिश तो है बेशक कि एक और एक दो कहिये ।

मगर कहने को हूँ मौजूद बस आप जो कहिये ॥

१३७—जो पूछा मैंने हूँ किस तरह हैपी^१ ।

कहा उस ने मेरे साथ मय पी ॥

१३८—पांव कांपा ही किये खौफ से उनके दर पर ।

चुस्त पतलून पहनने से भी पिंडली न तनी ॥*

१३९—हो खैर या रब अकबरे-आशुपता-हाल की ।

सरजन रक्कीब और दवा अस्पताल की ॥

शब्दार्थ : या रब—हे ईश्वर, अकबरे-आशुपता-हाल—रोगी अकबर ।

१४०—हमको साया पुरजुनू^२ वह धूप में मसरूफे-कार ।

मिस पै है अपनी नजर और सीम उनके हाथ में ॥

शब्दार्थ : साया—छाया, अंग्रेजी महिलाओं का वस्त्र, पुरजुनू—उन्मादपूर्ण, मसरूफे-कार—काम में लगे हुए । मिस—आंग्लकुमारी, सीम—चांदी ।

भावार्थ : हम साया (अंग्रेजी महिला का वस्त्र) देखकर ही उन्मत्त हो जाते हैं और अंग्रेज धूप में भी काम करते रहते हैं । परिणाम यह है कि हमारी दृष्टि तो मिस तक ही परिमित है और वे (अंग्रेज) धनवान् हैं ।

१. Happy.

* उन भारतरवासियों पर कटाक्ष है जो अंग्रेजी-ढंग के कपड़े पहन कर अक्रसरी से मिलने जाते हैं ।

१४१—उसकी बेटी ने उठा रक्खी है दुनिया सर पर ।

खैरियत गुज़री अंगूर के बेटा न हुआ ॥

१४२—शेख जी दैर में बैठे हुए गाते थे भजन ।

निगरां सुवे-बिरहमन थे बशौके-भोजन ॥

शब्दार्थ : दैर—मन्दिर, निगरां थे—देख रहे थे, सुवे-बिरहमन—
ब्राह्मण की ओर ।

१४३—सीने पै बुतों के दस्तरस मुशकिल है ।

पाइन्ट^१ ये सख्त है इसे टच न करो ॥

शब्दार्थ : दस्तरस—पहुँच, टच—छूना ।

१४४—शेख भी हैं दैर के साइल बस इतना फ़र्क है ।

मुझको बोसा चाहिये उनको समोसा चाहिये ॥

शब्दार्थ : दैर—मन्दिर, साइल—भिखारी ।

१४५—हकीम और वैद यकसां हैं अगर तशखीस अच्छी हो ।

हमें सेहत से मतलब है बनफ़शा हो कि तुलसी हो ॥

शब्दार्थ : तशखीस—पहचान, सेहत—फ़ायदा ।

१४६—मेरी कुरआन-ख़वानी से न हो यूँ बदगुमाँ हज़रत ।

मुझे तफ़सीर भी आती है अपना मुद्आ कहिये ॥*

शब्दार्थ : कुरआन ख़वानी—कुरआन का पाठ, तफ़सीर—व्याख्या,
मुद्आ—मतलब ।

१. Point.

* उन मनुष्यों पर कटाक्ष है जो अपना मतलब सिद्ध करने के
लिये धार्मिक-ग्रन्थों के अर्थ उलट-पलट देते हैं ।

४—सामयिक घटनायें

दिल्ली का दरबारसन्—१६०३ ई०

१—सर में शौक का सौदा देखा ।

देहली को हमने भी जा देखा ॥

जो कुछ देखा अच्छा देखा ।

क्या बतलायें क्या क्या देखा ॥१॥

जमना जी के फाट को देखा ।

अच्छे सुथरे घाट को देखा ॥

सब से ऊँचे लाट को देखा ।

हज़रत छूक कनाट को देखा ॥२॥

पलटन और रिसाले देखे ।

गोरे देखे काले देखे ॥

सङ्गीन और भाले देखे ।

बैण्ड बजाने वाले देखे ॥३॥

खेमों का एक जङ्गल देखा ।

उस जङ्गल में मङ्गल देखा ॥

ब्रह्मा और विरंगल देखा ।

हड़जतख्वाहों का दङ्गल देखा ॥४॥

अच्छे अच्छे को भटका देखा ।

भीड़ में खाते भटका देखा ॥

मुँह को अगरचे लटका देखा ।
 दिल दरबार से अटका देखा ॥१॥
 हाथी देखे भारी भरकम ।
 उनका चलना कम कम थम थम ॥
 ज़रीं भूलें नूर का आलम ।
 मीलों तक वो चम-चम चम-चम ॥६॥
 सुर्खी सड़क पै कुटती देखी ।
 सांस भीड़ में घुटती देखी ॥
 आतिशबाज़ी छुटती देखी ।
 लुफ़्त की दौलत लुटती देखी ॥७॥
 एक्ज़ीबीशन^१ की शान अनोखी ।
 हर शय उम्दा हर शय चोखी ॥
 उक़लैदस की नापी जोखी ।
 मन भर सोने की लागत सोखी ॥८॥
 की है ये वन्दिश ज़हन रसा न ।
 कोई माने ख्वाह न माने ॥
 सुनते हैं हम तो ये अफ़साने ।
 जिसने देखा हो वो जाने ॥९॥

शब्दार्थ : सौदा—ख़ब्त, ज़रीं—भूलें, सुनहले काम की भूल,
 नूर—प्रकाश, एक्ज़ीबीशन—नुमायश ।

सर सय्यद अहमद की कृतकार्यता का रहस्य

२—ताज्जुब से कहने लगे बाबू साहब ।
 गवर्नमेंट सय्यद पै क्यों मेहरबां है ॥१॥
 हमे क्यों हुई इस कदर कामयाबी ।
 कि हर बज़म में बस यही दास्तां है ॥२॥

कभी लाट साहब हैं महमान उसके ।
 कभी लाट साहब का वो महमां है ॥३॥
 नहीं है हमारे बराबर वो हरगिज़ ।
 दिया हमने हर सींगे का इम्तहां है ॥४॥
 वो अंग्रेज़ी से कुछ भी वाकिफ़ नहीं है ।
 यहाँ जितनी इंगलिश है सब बर ज़बां है ॥५॥
 कहा हँस के अकबर ने अय बाबू साहब ।
 सुनो मुझ से जो रम्ज़ इस मैं निहां है ॥६॥
 नहीं है तुम्हें कुछ भी सय्यद से निसबत ।
 तुम अंग्रेज़ी-दां हों वो अंग्रेज़-दां है ॥७॥

शब्दार्थ : सीगा—विभाग, रम्ज़—भेद, निहां—गुप्त, अंग्रेज़ी-दां—
 अंग्रेज़ी भाषा जानने वाला, अंग्रेज़ दां—अंग्रेज़ों का स्वभाव जानने
 वाला ।

अपने लड़के के नाम पत्र

३—इशरती घर की मोहब्बत का मज़ा भूल गये ।
 खा के लन्दन की हवा अहदे-वफ़ा भूल गये ॥१॥
 पहुँचे होटल में तो फिर ईद की परवाह न रही ।
 केक^१ को चख के सवहयों का मज़ा भूल गये ॥२॥
 भूले मां-बाप को अग़ायार के चरचों में वहाँ ।
 सायये-कुफ़ पड़ा नूरे खुदा भूल गये ॥३॥
 मोम की पुतलियों पर ऐसी तबीयत पिघली ।
 चमने-हिन्द की परियों की अदा भूल गये ॥४॥
 बख़ल है अपने वतन से जो वफ़ा में तुमको ।
 क्या बुज़ुर्गों की वो सब जुदो-अता भूल गये ॥५॥

नज़्जे-मगरिब की तरंग आई तुम्हारे दिल में ।
 और ये नुक़्ता कि मेरी अस्ल है क्या भूल गये ॥६॥
 क्या तश्वाज्जुब है जो लड़कों ने भुलाया घर को ।
 जब कि बूढ़े रविशे दीने-खुदा भूल गये ॥७॥

शब्दार्थ : अगयार—अजनबियों, कुफ़—नास्तिकता, नूर—प्रकाश,
 बख़ल—कंजूसी, जुदो अता—उदारता, रविश—मार्ग ।

अपने लड़के के नाम एक और पत्र

४—लन्दन को छोड़ लड़के अब हिन्द की ख़बर ले ।
 बनती रहेंगी बातें आबाद घर तो कर ले ॥१॥
 राह अपनी अब बदल दे बस 'पास' करके चल दे ।
 अदने वतन का रुख कर और रुखसते-सफ़र ले ॥२॥
 इङ्गलिश की करके कापी दुनिया की राह नापी ।
 दीनी तरीक़ में भी अपने कदम को धर ले ॥३॥
 वापिस नहीं जो आता क्या मुन्तज़िर है इसका ।
 मां ख़स्ता हाल हो ले बेचारा बाप मर ले ॥४॥
 मगरिब के मुरशिदों से तू पढ़ चुका बहुत कुछ ।
 पीराने-मशरिकी से अब फ़ैज़ की नज़र ले ॥५॥
 मैं भी हूँ एक सखुनवर आ सुन कलामे-अकबर ।
 इन मोतियों से आकर दामन को अपने भर ले ॥६॥

इन्फ़्लूएन्ज़ा का प्रकोप

५—इन्फ़्लूएन्ज़ा^१ चढ़ा चौगान बाज़ी अब कहां ।
 अस्पताली हो रहे हैं अस्प ताज़ी अब कहां ॥१॥
 चारे की किल्लत हुई तो बैल भी अब मरने लगे ।
 इन्फ़्लूएन्ज़ा हुआ करनैल भी मरने लगे ॥२॥

हम में टेढ़ापन जो आये तो सीधा वो करे ।
देवता बिगड़े तो फिर सरकार इसको क्या करे ॥३॥

हाशिम का स्वर्गवास

६—आगोश से सिधारा मुझसे ये कहने वाला ।
अबबा सुनाइये तो क्या आपने कहा है ॥१॥
अशआरे-हसरते-आगीं कहने को ताव किसको ।
अब हर नज़र है नौहा हर सांस मरसिया है ॥२॥

उर्दू पत्र-पत्रिकाओं की असामयिक मृत्यु

७—ले ले के कलम के लोग भाले निकले ।
हर सिम्त से बीसियों रिमाले निकले ॥१॥
अकसोस कि मुफ़लिसी ने छापा मारा ।
आख़िर अहबाब के दिवाले निकले ॥२॥

आधुनिक लेखक

८—उन्हों के मतलब की कह रहा हूँ ।
ज़बान मेरी है बात उनकी ॥
उन्हों की महफ़िल सँवारता हूँ ।
चिराग़ मेरा है रात उनकी ॥१॥
फ़क़त मेरा हाथ चल रहा है ।
उन्हों का मतलब निकल रहा है ॥
उन्हों का मज़मूँ उन्हों का क़ाग़ज़ ।
क़लम उन्हों का दवात उन्हों की ॥२॥

भारतवर्ष में अनावृष्टि

९—एक मुसीबत में है साधू है या कोई सेठ है ।
है तो ये सावन मगर हुक्मे-ख़ुदा से जेठ है ॥१॥

सच तो ये है गरदूँ को राहे-मेहरबानी क्यों मिले ।

आग जब यूरुप में बरसे हमको पानी क्यों मिले ॥२॥*

शब्दार्थ : गरदूँ—आसमान ।

चन्दा हज़म कर जाने वाले लीडर

१०—देखता एक उम्र से है बन्दा ।

होता है कुछ काम न धन्दा ॥१॥

बस यही बातें और यही फन्दा ।

लाओ चन्दा लाओ चन्दा ॥२॥

अंग्रेज़ी का भारतवर्ष को होमरूल देने का ध्येय

११—जब ये समझे थे परहेज़ जरूरी है इन्हें ।

वादा बच्चों से मिठाई का मुनासिब ही न था ॥१॥

आप ही ने तो किया केक का ज़िक्रे-शीरों ।

वरना इस चीज़ का इनमें कोई तालिब ही न था ॥२॥

उर्दू हिन्दी की बहस**

१२—कहाँ उर्दू वो हिन्दी में ज़रे-नक़्द ।

वही अच्छा है जो गिनता मनी है ॥१॥

मेरे नज़दीक तो बेसूद ये बहस ।

मियाँ हमदम वो चिन्तामनी है ॥२॥

शब्दार्थ : बेसूद—व्यर्थ, मनी—रुपया, हमदम—एक अखबार का नाम, चिन्तामणि—भूतपूर्व सम्पादक 'लीडर' ।

* गत महायुद्ध के समय एक वर्ष भारतवर्ष में बहुत ही कम वर्षा हुई थी, उस समय आपने उपरोक्त शेर लिखे थे ।

1. Cake.

** एक बार प्रयाग के 'लीडर' और लखनऊ के 'हमदम' नामक पत्र में उर्दू-हिन्दी की बहस छिड़ी थी । उस समय आपने उपरोक्त शेर लिखे थे ।

- १३—यह कहते थे इक लालाये बाविकार ।
 कि अरबी हरूफ़ अब तो हम पर हैं बार ॥१॥
 मिटी है इसी से हमारी नमूद ।
 यह खिसके तो क़ायम हो अपना वजूद ॥२॥
 कहाँ का हराम और कहाँ का हलाल ।
 मिटें हाय हत्ति रहें राम लाल ॥३॥

हिन्दी साहित्य सम्मेलन के निमन्त्रण के उत्तर में *

- १४—हो सकूँ किस तरह हाज़िर, है मेरी सेहत ख़राब ।
 ख़ानये-तन में मेरे बद इन्तज़ामी क्यों न हो ॥१॥
 मेरी जानिब से व लेकिन दिल को रखिये मुतमइन ।
 बुत का जो मदाह हो हिन्दी का हामी क्यों न हो ॥२॥

आधुनिक काव्य

- १५—दिल छोड़कर ज़बान के पहलू पै आ पड़े ।
 हम लोग शायरी से बहुत दूर जा पड़े ॥१॥
 मानी को छोड़ कर जो हों नाज़ुक बयानियाँ ।
 वह शेर क्या है रङ्ग है लफ़्ज़ों के खून का ॥२॥
 मैं अपने आप में, इन शायरों में फ़र्क करता हूँ ।
 सखुन इन से संवरता है, सखुन से मैं संवरता हूँ ॥३॥

* एक बार हिन्दी साहित्य सम्मेलन वालों ने हज़रत अकबर को वार्षिक उत्सव में सम्मिलित होने का निमन्त्रण भेजा था । उस के उत्तर में आपने उपरोक्त शेर लिख कर भेजे थे ।

लोकमान्य तिलक की लन्दन में अपोल

१६—तकल्लुफ़ उन्हीं के लिये कीजिये ।

फ़कीरों की क्या है ? जहाँ पड़ रहे ॥१॥

बुतों से भी लड़ती नहीं यों तो आँख ।

बिरहमन हैं लन्दन तक लड़ रहे ॥२॥

इंगलैंड के लाभ की दृष्टि से भारतवर्ष का शासन

१७—हज़रते-अकबर ने फ़रमाया ये ख़ूब ।

दाद के क़ाबिल है ये फ़ज़ांगी ॥१॥

उज़्र हमको कुछ गुलामी में नहीं ।

है फ़क़त तकलीफ़दह बेग़ान्गी ॥२॥

शब्दार्थ : तकलीफ़दह—कष्टप्रद, बेग़ान्गी—अजनबीपन, फ़ज़ांगी—उदारता ।

सर सय्यद अहमद

१८—हमारी बातें ही बातें हैं सय्यद काम करता था ।

न भूलो फ़र्क़ जो है कहनेवाले करनेवाले में ॥१॥

कहे जो चाहे कोई मैं तो ये कहता हूँ अय अकबर ।

ख़ुदा बख़्शे बहुत सी ख़ूबियाँ थीं मरनेवाले में ॥२॥

लार्ड मिन्टो के समय में अमीर काबुल का भारतवर्ष में आना

१९—जो सच्ची बात है कह दूँगा बे ख़ौफ़ो-ख़तर उसको ।

नहीं रुकने का मैं हरगिज़ परी रोके कि जिन रोके ॥१॥

अनार आले जो काबुल के तो पड़ते सबके हिस्से में ।

अमीर आये तो हमको क्या मज़े हैं लार्ड मिन्टो के ॥२॥

लार्ड करजन का पद-त्याग

२०—करजनो-किचनर की हालत पर जो कल ।

वो सनम तशरीह का तालिब हुआ ॥१॥

कह दिया मैंने कि है ये साफ़ बात ।

देख लो तुम जन पै नर ग़ालिब हुआ ॥२॥

शब्दार्थ : तशरीह—व्याख्यान, जन—स्त्री, नर—पुरुष, ग़ालिब—विजयी ।

हिन्दुस्तान यूरुप के माल का गोदाम है

२१—ये बात ग़लत दारे-इसलाम है हिन्द ।

ये झूठ कि मुक्के-लछमनो-राम है हिंद ॥१॥

हम सब हैं मुती वो ख़ैरख्वाहे-इङ्गलिश ।

यूरुप के लिए बस एक गोदाम है हिंद ॥२॥

भारतवर्ष में प्रत्येक मनुष्य का लीडर होने का दावा है

२२—लीडरों^१ की धूम है और फ़ालोवर^२ कोई नहीं ।

सब तो जनरल हैं यहाँ आखिर सिपाही कौन है ॥

खुदगर्ज लीडर

२३—कौम के ग़म में डिनर खाते हैं हुक्काम के साथ ।

लीडर को ग़म बहुत है पर आराम के साथ ॥

२४—कोई साहब न हों लिहलाह नाखुश सुनके ये मिसरा ।

ख़याले-हुब्बे-क़ौमी पीछे और फ़िक्रे-शिकम पहले ॥

शब्दार्थ : हुब्बे क़ौमी—जातीय हित, शिकम—पेट ।

चन्दा खाने वाले लीडर

२५—सरविस^३ में मैं दाखिल नहीं हूँ कौम का खादिम ।

चन्दा की फ़क़त आस है तनफ़्वाह कहाँ है ॥

बनावटी लीडर

२६—वो रोये बहुत स्पीचों में हिकमत इसको कहते हैं ।
मैं समझा खैरख्वाह उनको हिमाकृत इसको कहते हैं ॥

वाकशूर लीडर

२७—हो दिसम्बर में मुबारिक ये उखल कूद आपको ।
खून मुझ में भी है लेकिन मुझको फागन चाहिये ।

शिक्षा प्राप्त करने के लिये विलायत जाना

२८—लन्दन में बिगड़ जाओगे विश्वास यही है ।
तुम पास रहो मेरे बड़ा पास यही है ॥

अञ्जुमन तरक्किये-उर्दू

२९—हम से छिन कर हो गई बज्मे-तरक्की के सुपुर्द ।
सच कहा मिरजा ने अब उर्दू भी कोरट हो गई ॥

एक रुपए का नोट

३०—हर्ज क्या रुपया जो कागज़ का चला ।
ग़म न खा रोटी तो गेहूँ की रही ॥

प्लेग के दिनों में चूहे मरवाना

३१—ताऊन की बढ़ौलत इनको भी इरतफ़ा है ।
जो मारते थे मक्खी अब मारते हैं चूहे ॥

शब्दार्थ : इरतफ़ा—विकास ।

मिसेज़ बैसन्ट

३२—अब मिसेज़-बैसन्ट नज़मों में कहानी बन गईं ।
राज हम पायें न पायें वो तो रानी बन गईं ॥

लैण्ड-एक्वीजीशन एक्ट

३३—तज़ दुनिया से दिल इस दौरे-फलक में आ गया ।
जिस जगह मैंने बनाया घर सड़क में आ गया ॥

म्युनिसिपल बोर्ड और नया घर

३४—करो न तामोर घर की अकबर हटूँ-म्युनिसिपल के अन्दर ।
ये अहंकाराने-बददियानत बनेंगे फोड़ा बगल के अन्दर ॥

३५—लो निकलना पड़ा सड़क के साथ ।
आज तो मेरा घर भी नपता है ॥

कौंसिल आव् स्टेट

३६—दफ्तरे-तदबीर तो खोला गया है हिन्द में ।
फ़ैसला क्रिस्मत का अय अकबर मगर लंदन में है ॥



पश्चिमीय सभ्यता

१—कहाँ की पूजा नमाज़ कैसी कहाँ की गंगा कहाँ का ज़मज़म ।

डटा है होटल के दर पे हर एक हमें भी दो एक जाम साहब ॥१॥

हज़ार समझाते हैं वो सबको कि सब नहीं नामदार होते ।

करो ख़मोशी वो नेकबस्ती से जाके तुम घर का काम साहब ॥२॥

मगर नहीं मानता है कोई हर एक की ये इत्तजा है उनसे ।

मुझे भी छाप दो कहीं पर मेरा भी हो जाय नाम साहब ॥३॥

मेरी तुम्हारी नहीं निभेगी सिधारता हूँ मैं अब यहाँ से ।

सलाम साहब सलाम साहब सलाम साहब सलाम साहब ॥४॥

शब्दार्थ : ज़मज़म—मुसलमानों की पवित्र नदी, नामदार—प्रसिद्ध, इत्तजा—प्रार्थना ।

२—मुरीदे-दहर हुए बज़अ मगरिबी कर ली ।

नये जन्म की तमन्ना में खुदकशी कर ली ॥१॥

निगाहे-नाज़े-बुतां पर निसार दिल को किया ।

ज़माना देख के दुश्मन से दोस्ती कर ली ॥२॥

जो हुस्ने-बुतां की जगह हुक्मे-मिस हुआ कायम ।

तो इश्क़ छोड़ के हमने भी नौकरी कर ली ॥३॥

ज़वाले-कौम की तो इत्तदा वही कि जब ।

तिजारत आपने की तर्क नौकरी कर ली ॥४॥

शब्दार्थ : मुरीदे दहर हुए—दुनिया के पीछे और सब बातें भूल गए, ज़वाल—अधःपतन, इत्तदा—आरम्भ, तर्क—त्याग ।

- ३—एक पीर ने तहज़ीब से लड़के को उभारा ।
 एक पीर ने तालीम से लड़की को सँवारा ॥१॥
 पतलून में वो तन गया ये साये में फेली ।
 पाजामा गर्ज़ ये है कि दोनों ने उतारा ॥२॥
 बहरा वो बना कैम्प में ये बन गई आया ।
 बीबी न रही जब तो मियांपन भी सिधारा ॥३॥
 दोनों जो कभी मिलते हैं गाते हैं ये मिसरा ।
 आगाज़ से बदतर है अन्जाम हमारा ॥४॥

शब्दार्थ : आगाज़—आरम्भ, अन्जाम—अन्त, परिणाम ।

- ४—पास कालिज के जो हैं वोट तलब करते हैं ।
 पास मसजिद के जो हैं ताअते-रब करते हैं ॥१॥
 उनको है लैमनेड वो ब्हिसकी की ज़रूरत और ये ।
 रक्त पानी से फ़क़्त खुरिकये-लब करते हैं ॥२॥
 वक्त को देख के अब आप ही इन्साफ़ करें ।
 वो सितम करते हैं या आप ग़ज़ब करते हैं ॥३॥

शब्दार्थ : तलब—याचना, ताअते रब—ईश्वर की आज्ञा का पालन.

रफ़ू—दूर, लब—श्रेष्ठ ।

- ५—कर गई काम निगाहे-मिसे-पुरफ़न कैसा ।
 तज चले दैरो-हरम शेख़े-बिरहमन कैसा ॥१॥
 उसको चक्कर ही रहा और ये खुदा तक पहुँचा ।
 दिले-पुरसोज़ जो हाथ आये तो अब्ज न कैसा ॥२॥
 अस्ल से होके जुदा नरवो-नुमा की डम्मीद ।
 मुझको हैरत है कि बूढ़ों में ये बचपन कैसा ॥३॥

- ६—मेरे अमल से न शेख़ खुश हैं,
 न भाई खुश हैं न बाप खुश हैं ।
 मगर मैं समझा हूँ इसको अच्छा,
 दलील ये है कि आप खुश हैं ॥१॥

जो देखा साइन्स का ये चक्कर,
 घरम पुकारा कि अय बिरादर ।
 हमारे दौरे में पुन मगन थे,
 तुम्हारे दौरे में पाप खुश हैं ॥२॥

शब्दार्थ : बिरादर—भाई, दौर—समय ।

७—मज़हब के वास्ते न शराफ़त के वास्ते !
 हैं अब तो जंग हुक्मों-तिजारत के वास्ते ॥१॥
 ले ही गये घसीट के मुझको परेड पर ।
 तय्यार हो रहा था मैं जन्नत के वास्ते ॥२॥
 ८—जिस रोशनी में लूट ही की आपको सूके ।
 तहज़ीब की मैं उसको तजल्ली न कहूँगा ॥१॥
 लाखों को मिटा कर जो हज़ारों को उभारे ।
 उसको तो मैं दुनिया की तरक्की न कहूँगा ॥२॥

शब्दार्थ : तजल्ली—ज्योति ।

९—हरचन्द कि मिस का है लवण्डर भी बहुत खूब ।
 बेगम का मगर इतरे-हिना और ही कुछ है ॥१॥
 साये की भी सन सन हविस-अंगेज़ है लेकिन ।
 उस शोख के घुँघरुओं की सदा और ही कुछ है ॥२॥

१०—ये बात तो खरी है हरगिज़ नहीं है खोटी ।
 अरबी में नज़्मे-मिल्लत बी० ए० में सिर्फ़ रोटी ॥१॥
 लेकिन जनाबे लीडर सुन कर ये शेर बोले ।
 बँधवायेंगे ये हज़रत इस क़ौम को लंगोटी ॥२॥
 इस बात को खुदा ही बस खूब जानता है ।
 किसकी नज़र है ग़ायर किसकी नज़र है मोटी ॥३॥

शब्दार्थ : ग़ायर—बारीक ।

- ११—हुए नेकी से बेगाना तरक्की इसको कहते हैं ।
 फ़रिश्ते हो गये रुख़सत फ़कन शैतान बाक्की हैं ॥१॥
 तबीअत को अभी पतलून से मेरी नहीं अकबर ।
 यह सच है कट गये हैं पांव लेकिन रान बाक्की हैं ॥२॥
- १२—अफ़ई से कहा मैंने मुझे तूने डसा क्यों ।
 बोला कि बिना लाठी के तू बन में बसा क्यों ॥१॥
 पांव में तो मेंहदी है लगी शौंके-डिनर की ।
 दौरान हूँ अकबर ने कमर को ये कसा क्यों ॥२॥
- १३—मशरिकी को है ज़ौक-रूहानी ।
 मग़रिबी में है मेले-जिस्मानी ॥१॥
 कहा मन्सूर ने खुदा हूँ मैं ।
 डारविन बोले वूज़ना हूँ मैं ॥२॥
 शब्दार्थ : वूज़ना—बन्दर ।
- १४—नई तहज़ीब में दिक्कत ज़ियादा तो नहीं होती ।
 मज़ाहब रहते हैं क़ायम फ़क़त ईमान जाता है ॥१॥
 थियेटर रात को दिन को यारों की ये स्पीचें ।
 दुहाई लाट साहब की मेरा ईमान जाता है ॥२॥
- १५—मिस से बेग़म ने कहा कल तू कहाँ और हम कहाँ ।
 बूट की चरचर में क्या रक्खा है ये चमचम कहाँ ॥१॥
 मिस यह बोली पढ़ के निकलो तो ज़रा स्कूल से ।
 और ही चालें नज़र आयेंगी ये आलम कहाँ ॥२॥
- १६—पड़े गुन-गुनाते थे लाल निरंजन ।
 न आँखों में अंजन न दाँतो में मंजन ॥१॥
 छूटे हम से बिरकुल वो अगले तरीक़े ।
 कहाँ खींच ले जायगा हमको अंजन ॥२॥
- १७—तरक्की को नई राहें जो ज़ेरे आस्माँ निकलीं ।
 मियाँ मसजिद से निकले और हरम से बीवियाँ निकलीं ॥१॥

मुसीबत में भी अब यादे-खुदा आती नहीं उनको ।

दुआ निकली न मुंह से पाकटों से अज़ियाँ निकलीं ॥२॥

१८— मेरे मनसूबे तरक्की के हुए सब पायमाल ।

बीज मग़रिब ने जो बोया वो उगा और फल गया ॥१॥

बूट डासन ने बनाया मैंने एक मज़मूँ लिखा ।

मुल्क में मज़मूँ न फैला और जूता चल गया ॥२॥

शब्दार्थ : मनसूबे—विचार, पायमाल—पददलित ।

१९—अज़ा से अब सिवा बेदारक्रुन अंजन की सीटी है ।

इसी पर शेख बेचारे ने छाती अपनी पीटी है ॥१॥

कहाँ बाकी रहे हम में वो औरदे-सहरगाही ।

वज़ीक़ों की जगह या पायनियर या आई० डी० टी०^१ है ॥२॥

२०—पण्डित जी ने खूब बात कही जोशे-तबअ में ।

नाहक़ गुज़श्ता अहद पर यूँ तानेजन हैं आप ॥१॥

पथर के बदले अब तो धरम टूटने लगा ।

महमूद बुतशिकन था बिरहमन शिकन हैं आप ॥२॥

शब्दार्थ : जोशे तबअ—तबीयत का जोश, गुज़श्ता—भूत काल,

अहद—काल समय, शिकन—तोड़ने वाला ।

२१—क्या कहूँ इसकी मैं बदबख़्तिये नेशन^२ के सिवा ।

उसकी आता नहीं अब कुछ इमीटेशन^३ के सिवा ॥

शब्दार्थ : बदबख़्ती—दुर्भाग्य, नेशन—राष्ट्र, इमीटेशन—नकल
उतारना ।

२२—हमें घेरे हुए हैं हर तरफ़ इसलाह की मौजें ।

मगर ये हिस नहीं है डूबते हैं या उभरते हैं ॥

शब्दार्थ : इसलाह—सुधार, मौज—लहर । हिस—ज्ञान ।

१. Indian Daily Telegraph,

२. Nation, ३. Imitation.

२३—खुशी है सबको कि ऑपरेशन^१ में खूब नशतर ये चल रहा है ।
मगर किसी को खबर नहीं है मरीज़ का दम निकल रहा है ॥

शब्दार्थ : ऑपरेशन—चीर फाड़ ।

२४—इधर ख्याल नहीं मसलहाने नेशन का ।
कि फ़र्ते-ज़ोफ़ नहीं वक्त आपरेशन का ॥

शब्दार्थ : मसलहाने नेशन—जाति के शुभचिन्तक, फ़र्ते-जोफ़—
अत्यधिक कमजोरी, आपरेशन—चीर फाड़ ।

२५—पुरानी रोशनी में और नई में फर्क इतना है ।
उसे किशती नहीं मिलती इसे साहिल नहीं मिलता ॥

शब्दार्थ : साहिल—किनारा ।

२६—सूझता लैक्चर तरक्की का तो हर बात पर ।
ख़त्म हो के लेकिन रह जाता मेरी जात पर ॥

२७—न कोई तरीमे-बाहमी है,
न प्यार बाकी है अब दिलों में ।

ये सिर्फ़ तहरीर में डियर सर,
है या 'जनाबे-मुकर्रमी' है ॥

२८—दिल में अब नूरे-खुदा के दिन गये ।
हड्डियों में फास्फ़ोरस देखिये ॥

शब्दार्थ : तकरीम—शिष्टाचार, जनाबे-मुकर्रमी—मान्यवर
महाशय ।

२९—तरज़े-मगरिब में नहीं है शर्ते-दिल बहरे-अमल ।
चल खड़े होते हैं स्टीमर हवा हो या न हो ॥

३०—लगी लिप्टी न लगा रखती थी तलवार की ज़ङ्ग ।
तोप क्या चाहती है सिर्फ़ दगा चाहती है ॥

३१—कुछ देखता नहीं मैं दिले-ज़ार के लिये ।

जो कुछ यह हो रहा है सब अखबार के लिये ॥

३२—इल्मी तरक्कियों से जबाँ तो चमक गई ।

लेकिन अमल फरेबो-दगा ही के साथ है ॥

३३—मेरी नसीहतों को सुनकर वो शेख बोला ।

नेटिव की क्या सनद है साहब कहें तो मानूँ ॥

शब्दार्थ : सनद—प्रमाण ।

३४—शेख साहब का तास्सुब है जो फरमाते हैं ।

ऊँट मौजूद है फिर रेल पै क्यों चढ़ते हो ॥

३५—मिटाने हैं जो वो हमको तो अपना काम करते हैं ।

मुझे हैरत तो उन पर है जो इस मिटने पै मरते हैं ॥

३६—बकौले-अहले-मगरिब ज़माना है तरक्की का ।

मुझे भी शक नहीं इसमें कि ग़लत की जवानी है ॥

३७—वज़ू-मगरिब से मुझे कुछ भी तसल्ली न हुई ।

नाज़ तो बढ़ गये दौलत की तरक्की न हुई ॥

६—समाज-सुधार तथा आधुनिक शिक्षा



परदा

- १—बिठाई जायेंगी परदे में बीवियाँ कब तक ।
बने रहोगे तुम इस मुल्क में मियाँ कब तक ॥
अवाम बांध लें दोहर को थडों-इन्टर में ।
सैकिन्डों-फ़र्स्ट की हों बंद खिड़कियाँ कब तक ॥
मुँह दिखाई की रस्मों पर है मुसिर इबलीस ।
छिपेंगी हज़रते-हुवा की बेटियाँ कब तक ॥

शब्दार्थ : अवाम—सर्वसाधारण, मुसिर—तुला हुआ, इबलीस—
शैतान ।

- २—बे परदा नज़र आई जो कल चन्द बीवियाँ ।
‘अकबर’ ज़मी में ग़ैरते-क़ौमी से गढ़ गया ॥१॥
पूछा जब उनसे आपका परदा वो क्या हुआ ।
कहने लगीं कि अक्ल पै मरदों की पढ़ गया ॥२॥

- ३—परदा उठ जाने से अख़लाक़ी तरक्की क़ौम की ।
जो समझते हैं यक़ीनन अक्ल से फ़ारिग़ हैं वो ॥१॥
सुन चुका हूँ कि कुछ बूढ़े भी हैं इसमें शरीक ।
ये अगर सच है तो बेशक पीरे-नाबालिग़ हैं वो ॥२॥

- ४—परदे में ज़रूर हैं तवालत बेहद ।
इन्साफ़ पसन्द को नहीं चाहिये हट ॥१॥
तशबीह बुरी नहीं अगर मैं ये कहूँ ।
बेगम है पेचवान लेडी सिगरट ॥२॥

५—ये परदा-दर को सुवे-क्रौम किसने भेजा है ।

कि जिसकी बहस से मजरूर हर कलेजा है ॥

यही है उक़दे-कशाइये-कौम तो एक दिन ।

इज़ारबन्द को कह देंगे हब्से-बेजा है ॥

६—उठ गया परदा तो अकबर का बड़ा कौनसा हक़ ।

बे पुकारे मेरे घर में चला आता है ॥१॥

बेहिजाबी मेरी हमसाये की खातिर से नहीं ।

सिर्फ़ हुक्काम से मिलने में मज़ा आता है ॥२॥

७—ग़रीब अकबर ने बहस परदे की,

की बहुत कुछ मगर हुआ क्या ।

नक़ाब उलट ही दी उसने कहकर,

कि कर ही लेगा मेरा मुवा क्या ॥

८—नूरे-इस्लाम ने समझा था मुनासिब परदा ।

शमए-ख़ामोश को फ़ानूस की हाजत क्या है ॥

९—मजलिसे-निसवां में देखो इज्जते-तालीम को ।

परदा उठा चाहता है इल्म की तालीम को ॥

शब्दार्थ : निसवां—स्त्रियां, तालीम—मान ।

१०—नज़र में तीरगी है और रंगों में नातवानी है ।

ज़रूरत क्या है परदे की जहां बम्बे का पानी है ॥

शब्दार्थ : तीरगी—अन्धकार, नातवानी—कमज़ोरी ।

११—शमशेरज़न को अब नये सांचे में ढालिये ।

शमशेर को छुपाइये ज़न को निकालिये ॥

शब्दार्थ : शमशेरज़न—तलवार चलाने वाला, शमशेर—तलवार ।

भावार्थ—आधुनिक युग में हमारी शूरता का स्थान निर्लज्जता ने ले लिया है । अतः तलवार को, जिसे खुला रखना चाहिये था, परदे में रखना तथा स्त्री को, जिसे परदे में रखना चाहिये था, खुला रखना ही ठीक समझा गया है ।

१२—फ़र्ज़ औरत पर नहीं है चारदीवारी की क़ैद ।
हो अगर ज़ब्त-नज़र की और खुददारी की क़ैद ॥

शब्दार्थ : चारदीवारी—परदा, ज़ब्त-नज़र—दृष्टि को काबू में रखना, खुददारी—स्वाभिमान ।

आधुनिक शिक्षा

१३—मिस्टरे-नकली को उक़बां में सज़ा कैसी मिली ।
शहर उसकी ना मुनासिब है मिली जैसी मिली ॥
उसने भी लेकिन अदब से कर दिया ये इत्तमास ।
चारा क्या था अय खुदा तालीम ही ऐसी मिली ॥

१४—तालीम हमें जो दी जाती है ।
वो क्या है फ़क़्त बाज़ारी है ॥
जो अक़ल सिखाई जाती है ।
वो क्या है फ़क़्त सरकारी है ॥

१५—जब पेशवा ने अपना काबा जुदा बनाया ।
अपने मज़े को सबने अपना खुदा बनाया ॥
अपनी ही ये ख़ुता है हमने तो ख़ूब जांचा ।
लङ्क के ढले हैं वैसे जैसा बना था सांचा ॥

१६—फ़िलसफ़े में क्या धरा है घर का हो या लन्दनी ।
सई का मौक़ा मिले तो आर्ट या साइन्स सोख ॥१॥
दुश्मने-दाना से बच पहचान ले नादान दोस्त ।
सिर्फ़ लफ़्फ़ाज़ी से इन रोज़ों नहीं मिलने की कोख ॥२॥

१७—तिफ़ल में बू आये क्या मां बाप के अतवार की ।
दूध तो डिब्बे का है तालीम है सरकार की ॥

१८—मेरे सय्याद की तालीम की है धूम गुलशन में ।

यहाँ जो आज फँसता है वो कल सय्याद होता है ॥

१९—हमारे खेत से ले जाते हैं बन्दर चने क्यों कर ।

ये बहस अच्छी है इससे हज़रते-आमद बने क्यों कर ॥

२०—नई तालीम को क्या वासत! है आदमियत से ।

जनाबे-डारविन को हज़रते-आदम से क्या मतलब ॥

२१—नई तहज़ीब में भी मज़हबी तालीम शामिल है ।

मगर यों ही कि गोया आबे-ज़मज़म मय में दाख़िल है ॥

शब्दार्थ : आबे ज़मज़म—ज़मज़म का पानी, मय—शराब ।

२२—तहम्मुल बरकते-तालीम से ऐसा हुआ पैदा ।

कि हिस तक़ीर का होता है और गुस्सा नहीं आता ॥

शब्दार्थ : तहम्मुल—सहन-शक्ति, बरकते तालीम—शिक्षा की कृपा ।

हिस—ज्ञान ।

भावार्थ—यह है आधुनिक शिक्षा के कारण हमको अपने अपमान तक पर क्रोध नहीं आता ।

२३—इल्मी तरक्कियों से ज़बानें तो चमक गई ।

लेकिन अमल फ़रेबा-दगा ही के साथ है ॥

शब्दार्थ : अमल—काम ।

२४—इस अहद में मायल सुए-इलहाद जो दिल है ।

इसकी तो गवर्नमैन्ट ही रिसपानसिबिल^१ है ॥

शब्दार्थ : अहद—समय, मायल—प्रवृत्त, सुए—और, इलहाद—

नास्तिकता, रिसपानसिबिल—उत्तरदायी ।

२५—झुदा-परस्त बनायगा क्या वो लिट्रेचर^२ ।

करे जो तबअ को बे-क़ैद और गुनाह पसंद ॥

शब्दार्थ : खुदावरस्त—ईश्वर पूजक, लिट्रेचर—साहित्य, तबअ—चित्त ।

२६—शेखे-मरहूम का कौल अब मुझे याद आता है ।

दिल बदल जायेंगे तालीम बदल जाने से ॥

२७—जाख रोये कि रहे जाते हैं अरलाहो-रसूल ।

दैर का कोर्स बिरहमन ने मगर कम न किया ॥

स्त्री-शिक्षा

२८—तालीम लड़कियों की जरूरी तो है मगर ।

खातूने-खाना हों वे सभा की परी न हों ॥१॥

जी इल्मो-मुत्तकी हों उनके मुन्तज़िम ।

उस्ताद अच्छे हों मगर उस्ताद जी न हों ॥२॥

शब्दार्थ : खातूने-खाना—घर की देवियाँ, जी इल्म—विद्वान्, मुत्तकी—परहेजगार ।

२९—कौन कहता है कि तालीमे-जना खूब नहीं ।

एक ही बात फ़क़त कहना है यां हिक़मत को ॥१॥

दो उसे शौहरो-अतफ़ाल की खातिर तालीम ।

क़ौम के वास्ते तालीम न दो औरत को ॥२॥

शब्दार्थ : तालीमे-जना—स्त्रियों की शिक्षा, शौहर—पति, अतफ़ाल—बच्चे ।

३०—एज़ाज़ बढ़ गया है आराम घट गया है ।

ख़िदमत में है लेज़ी और नाचने को रेडी ॥

तालीम की ख़राबी से हो गई बिलाख़िर ।

शौहर-परस्त बीवी पब्लिक-पसन्द लेडी ॥

शब्दार्थ : एज़ाज़—सम्मान, लेज़ी—सुस्त, रेडी—तैयार, बिला-ख़िर—अन्त में, शौहर-परस्त—पति-भक्त ।

३१—कुल स्टेशन को उसने मेरे घर से कर दिया वाकिफ़ ।

ये देखो बरकते-तालीम बीवी इसको कहते हैं ॥

अब रही तालीम, कौन इस अम्र का मफ्त्तू नहीं ।

बीवियों पर मगरिबी सांचा मगर मौजू नहीं ॥

शब्दार्थ : मफ्त्तू—प्रेमी, मगरिबी—पश्चिमी, मौजू—ठीक ।

३२—तालीमे-दुखतरां से ये उम्मीद है ज़रूर ।

नाचे दुखहन खुशी से खुद अपनी बारात में ॥

३३—उन से बीवी ने फ़क़्त स्कूल ही की बात की ।

ये न बतलाया कहौं रखी है रोटी रात की ॥

३४—बीवी में तरज़े-मगरिबी हो तो कहो ।

अहसान है ये जो मुझको शौहर समझो ॥

३५—खुदा के फ़जल से बीवी मियाँ दोनों मुहज्जब हैं ।

हिजाब उनको नहीं आता इन्हें गुस्सा नहीं आता ॥

शब्दार्थ : फ़जल—कृपा, मुहज्जब—सभ्य, हिजाब—लज्जा ।

भावार्थ—ईश्वर की कृपा से स्त्री-पुरुष दोनों पश्चिमी सभ्यता के रंग में रंगे हुए हैं, स्त्री को बिना परदे के बाहर निकलने में लज्जा नहीं आती और पुरुष को स्त्री की निर्लज्जता पर क्रोध नहीं आता ।

३६—घर से जब पढ़ लिख के निकलेंगी कुंवारी लड़कियाँ ।

दिल कशो आज्ञादी खुशरो साख़ता परदाख़ता ॥

यह तो क्या मालूम क्या मौके अमल के होंगे पेश ।

हौं निगाहें होंगी मायल उस तरफ़ वे साख़ता ॥

मगरबी तहज़ीब आगे चल के जो हालत दिखाये ।

एक मुद्दत तक रहेंगे नौजवां दिल बाख़ता ॥

ओज क़ौमी से शराफ़त का हुमा गिर जायगा ।

माकियां से पस्ततर दिखलायी देगी फाख़ता ॥

ढाल देगा सीनये ग़ैरत सपर मैदान में ।

तेरा अबरु ही नज़र आयेगी हरसू साख़ता ॥

७—राजनीति

तथा

हिन्दू-मुस्लिम एकता

—:०:—

राजनीति

१—कहा महदी ने भाई तुमको क्यों इस दरजे हैरत है ।
तुम्हारे वास्ते क्या ये महल्ले-रश्को-गैरत है ॥
ताज्जुब क्या है हम उस बुत के पहलू में जो लेटे हैं ।
हरम के मौहतरिम क्या देर के ख़ादिम से हेटे हैं ॥
बिरहमन ने कहा बस आपकी बातें ही बातें हैं ।
अजी ये वस्ल की रातें नहीं हैं उनकी घातें हैं ॥
कहा महदी ने हमको तो मज़े से अपने मतलब है ।
मौहब्बत हो न हो उनको उमीद उसकी यहाँ कब है ॥
बिरहमन ने कहा ऐसा मज़ा अयज़ा का मुज़ाइफ़ है ।
कहा महदी ने हौं इस बात से बन्दा भी वाफ़िर है ॥^१

शब्दार्थ : हैरत—आश्चर्य, महल—अवसर, रश्क—ईर्ष्या, गैरत—
लज्जा, हरम—काबा, मौहतरिम—माननीय, देर—मन्दिर, ख़ादिम—
सेवक, अयज़ा का मुज़ाइफ़ है—अङ्गों को कमजोर करने वाला है ।

२—बहुत ही उम्मदा है ऐ हमनशीन बिरटिश राज ।

कि हर तरह के ज़वाबित भी हैं ठसूल भी हैं ॥

१. इस पद्य में अकबर ने सरकार के चापलूस हिन्दू-मुसलमानों पर कटाक्ष किया है ।

जो चाहे खोल दे दरवाज़ये-अदालत को ।
 कि तेल पेच में है ढीली इसकी चूल भी है ॥
 तरह-तरह के बना लो लिबास रंगारंग ।
 अलावा रुई के रेशम भी और ऊल भी है ॥
 जब इतनी नेमतें मौजूद हैं यहाँ अकबर ।
 तो हर्ज क्या है जो साथ उसके डैम-फूल भी है ॥

शब्दार्थ : हमनशीन—मित्र, जवाबित—नियम, उसूल—सिद्धान्त,
 कल—ऊन ।

३—मुल्क पर तासीरे-चश्मे-वोट तारी हो गई ।
 मुफ्त शेखो-बिरहमन में फ़ौजदारी हो गई ॥ १ ॥
 हिन्दुओं को क्यों न अब भाई बनायें सुलह-दोस्त ।
 आर्य मज़हब में भी तौहीद जारी हो गई ॥ २ ॥
 मैम्बरी पर ज़क्र हो इसमें गऊ का क्या कसूर ।
 मुल्क में बदनाम नाहक़ ये बिचारी हो गई ॥ ३ ॥

शब्दार्थ : तौहीद—एक ईश्वर को मानना ।

४—अज़ राहे-ताल्लुक जोड़ा करे कोई रिश्ता ।
 अंग्रेज़ तो 'नेटिव' के चचा हो नहीं सकते ॥ १ ॥
 'नेटिव' नहीं हो सकते गोरे तो हैं क्या राम ।
 गोरे भी तो बन्दे से खुदा हो नहीं सकते ॥ २ ॥
 हम हों जो कलकटर तो वो हो जायें कमिशनर ।
 हम उन से कभी ओहदेबरा हो नहीं सकते ॥ ३ ॥

शब्दार्थ : ओहदेबरा होना—ओहदे में बढ़ना ।

५—अज़न आया निकल गया सन से ।
 सुन लिया नाम आग पानी का ॥ १ ॥

बात इतनी और उस पै ये तूमार ।
गुल है यूरुप पै जांफिसानी का ॥२॥
इत्तम पूरा हमें सिखायें अगार ।
तब करें शुक्र मेहरबानी का ॥३॥

शब्दार्थ : जांफिसानी—परिश्रम ।

६—क्यों अपने सर पर ज़हमते-वेसूद लीजिये ।
कौंसिल के बदले घर में उछल कूद लीजिये ॥१॥
खा पी के घर में बैठिये और गाइये भजन ।
काशी से चल प्रयागसे अमरूद लीजिये ॥२॥
हो वज़्र अपने देश की माल अपने देश का ।
बेहतर है राहे-मंज़िले-बहबूद ! लीजिये ॥३॥

शब्दार्थ : ज़हमत—कष्ट, वेसूद—व्यर्थ, बहबूद—आराम ।

७—नौकर को सिखाते हैं मियां अपनी ज़बां ।
मतलब ये है कि समझे उनके फ़र्मान ॥
मक्रसूद नहीं मियां की सी अक़लो-तमीज़ ।
इस नुक़ते को क्या समझे वे जो हैं नादान ॥

शब्दार्थ : फ़र्मान—आज्ञा, मक्रसूद—इष्ट, नुक़ता—रहस्य ।

८—सितम से वो दिल मेरा दुखायें ।
और अपने इशवों की दाद चाहें ॥
अजब तमाशा है दिल का रोना ।
ज़बान का वाह वाह करना ॥

शब्दार्थ : सितम—जुल्म, इशवा—अदा, दाद—प्रशंसा ।

९—क्रौम पर मैम्बरी का फ़ैर हुआ ।
कल जो अपना था वो ग़ैर हुआ ॥१॥
शेख़ जी मर गये कमैटी में ।
गुल मचा ख़ातमा बख़्शैर हुआ ॥२॥

१०—हमदर्द हों सब ये लुक्के-आबादी है ।

हमसाया भी हो शरीक तब शादी है ॥१॥

तसकीन है जब कि खुदा पर हो तकिया ।

क्रानून बना सकें तब आज़ादी है ॥२॥

शब्दार्थ : तसकीन—शान्ति, तकिया—सहारा ।

११—मुल्क में मुझे ज़लीलो-ख़वार रहने दीजिये ।

आप अपनी इज़त-दरबार रहने दीजिये ॥१॥

ज़ालिमाना मशवरों में मैं नहीं हूँगा शरीक ।

ग़ैर ही को मरहमे-इसरार रहने दीजिये ॥२॥

शब्दार्थ : मरहमे इसरार—भेद की बात को जानने वाला ।

१२—रिजोल्यूशन की शोरिश है मगर उसका असर शायब ।

प्लेटों की सदा सुनता हूँ और खाना नहीं आता ॥

शब्दार्थ : रिजोल्यूशन—प्रस्ताव, शोरिश—धूम, प्लेट—रकाबी ।

१३—रिआया को मुनासिब है कि बाहम दोस्ती रखें ।

हिमाक़त हाकिमों से है तवक्क़ै गर्म जोशी की ॥

शब्दार्थ : हिमाक़त—मूर्खता, तवक्क़ै—आशा ।

१४—बाबू साहब का ये शिकवये-अफ़लास बजा ।

सच तो कहते हैं कि मछली न सही मास तो हो ॥

जो ख़िर्दमन्द हैं वे ख़ूब समझते हैं ये बात ।

ख़ैरख़वाही वो नहीं है जो हो डर से पैदा ॥

शब्दार्थ : ख़िर्दमन्द—बुद्धिमान ।

१५—फ़िरंगी से कहा पेन्शन भी लेकर बस यहीं रहिये ।

कहा जीने को आये हैं यहाँ मरने नहीं आये ॥

१६—मैंने कहा कि अपना समझिये मुझे गुलाम ।

बोला वो बुत ये हँस के फ़िरंगी नहीं हूँ मैं ॥

१७—अगर मज्रहब खललअन्दाज़ है मुल्की मक़ासिद में ।

तो शेख़ो-बिरहमने पिन्हां-रहें दौर-मसाजिद में ॥

शब्दार्थ : मक़ासिद—उद्देश्य, पिन्हां—छिपे हुए, दौर—मन्दिर, मसाजिद—मसजिद का बहुवचन ।

१८—उनका मेरा ताअल्लुक इस से है साफ़ ज़ाहिर ।

उनका इशारा देखो मेरा सलाम देखो ॥

१९—जिधर साहब उधर दौलत जिधर दौलत उधर चन्दा ।

जिधर चन्दा उधर आनर जिधर आनर उधर बन्दा ॥

शब्दार्थ : आनर—इज्जत ।

२०—कौमी तरक्की की राधा प्यारी, बैठी है पहने जोड़ा भारी ।

नौ मन तेल की फिक्र है तारी, चन्दे की तहसील है जारी ॥

शब्दार्थ : तारी—लगी हुई ।

भावार्थ : जातीय उन्नति के लिए हम जो काम करते हैं उन्हें अधिकतर दिखावा ही होता है, तथा बहुत सा धन इस निरर्थक दिखावे की भेंट हो जाता है ।

२१—गोलियों के ज़ोर से करते हैं वो दुनिया को हज़म ।

इससे बेहतर इस गिज़ा के वास्ते चूरन नहीं ॥

२२—अपनी मिनकारों से हल्का कस रहे हैं जाल का ।

तायरों पर शहर है सय्याद के इकबाल का ॥

शब्दार्थ : मिनकार—चोंच, हल्का—फन्दा, तायर—पक्षी, शहर—जादू, सय्याद—चिड़ीमार, इकबाल—प्रताप ।

२३—उन्हीं की भैंस है भाई कि जिन की लाठी है ।

उन्हीं का गाँव है अकबर जो बन सकें ठाकुर ॥

२४—ज़ोरे-बाजू न हो तो क्या स्पीच ।

हाथ भी दे खुदा ज़बां के साथ ॥

२५—हमें तो चाहते हैं खींचना खुद हम से खिंचते हैं ।
ये उनकी पालिसी के बाग़ किस पानी से सिंचते हैं ॥

हिन्दु-मुस्लिम एकता

२६—अमूरे मुल्की की बहस में तुम,
जो हिन्दुओं के बनोगे साथी ।
न लाट साहब ख़िताब देंगे,
न राजाजी से मिलेगा हाथी ॥१॥
न अपना मक्खन वो तुम को देंगे,
न अपनी पूरी ये बाँट देंगे ।
पड़ेगा मौका जो कोई आकर,
तो दोनों ही तुमको छांट देंगे ॥२॥
मगर वो रहते हैं दूर हम से,
ये लोग साथी हैं और पड़ौसी ।
मिले जुले हैं सोसाइटी में,
अहीर इनमें तो हम में घोसी ॥३॥
न होगी हुक्काम को भी दिक्कत,
जो होगी एकजा हर एक की ख्वाहिश ।
ज़रूरत उनको भी ये न होगी,
करें हर एक से ये अजबहदा पुरसिश ॥४॥

२७—हम उर्दू को अरबी क्यों न करें,
उर्दू को वो भाषा क्यों न करें ।
अगड़े के लिये अखबारों में,
मज़मून तराशा क्यों न करें ॥१॥
आपस में अदावत कुछ भी नहीं,
लेकिन एक अखाड़ा कायम है ॥२॥

जब इससे फलक का दिल बदले,

हम लोग तमाशा क्यों न करें ॥३॥

२८—चुगलियाँ एक दूसरे की वक्त पै जड़ते भी हैं ।

नागहां गुस्सा जो आ जाता है लड़ पड़ते भी हैं ॥१॥

हिन्दू वो मुसलिम हैं फिर एक ओर कहते हैं सच ।

है नज़र आपस की हम मिलते भी हैं लड़ते भी हैं ॥२॥

२९—हिन्दू मुसलिम एक हैं दोनों ।

यानी दोनों एशियाई हैं ॥१॥

हमवतन-हमजुबानी-हमक्रिस्मत ।

क्यों न कह दूँ कि भाई-भाई हैं ॥२॥

३०—लड़ें क्यों हिन्दुओं से हम यहीं के अन्न से पनपे हैं ।

हमारी भो दुआ ये है कि गंगा जी की बढ़ती हो ॥

मगर हाँ, शेख़जी की पालिसी से हम नहीं वाकिफ़ ।

इसी पर ख़त्म करते हैं कि जो साहब की मरजी हो ॥

शब्दार्थ : दुआ—प्रार्थना ।

३१—उंट ने गायों की ज़िद पर शेर को साझी किया ।

फिर तो मैदक से भी बदतर सबने पाया उंट को ॥१॥

जिस पै रक्खा चाहते हो बाकी अपनी दस्तरस ।

मुँह में हाथी के कभी भाई वो गन्ना न दो ॥२॥

शब्दार्थ : दस्तरस—पट्टेच ।

३२—बाज़ मुसलिम तो ऐसे हैं मौजूद ।

मुँह से लहमे-बक्रर से मोड़ते हैं ॥१॥

क्रौज़ी गोरे मगर रुके क्योंकर ।

जान बुल कब गऊ को छोड़ते हैं ॥२॥

शब्दार्थ : लहमे-बक्रर—गाय का गोश्त ।

३३—बेहतर यही है फेर लें आँखों को गाय से ।

क्या फ़ायदा है रोज़ की इस हाय हाय से ॥१॥

कमज़ोरियों को रोक दें जोरों को क्या करें ।

मुसलिम हटे तो फ़ौज के गोरों को क्या करें ॥२॥

३४—भगड़ा कभी गाय का ज़बां की कभी बहस ।

है सख्त मुजिर ये नुसक़ये-गावज़बां ॥

शब्दार्थ : गावज़बां—गाय और भाषा । एक यूनानी देवा का नाम भी गावज़बां है ।

३५—मेरी नज़रों में यक़सां है शुतर हो या गऊ माता ।

मुझे करते जो वो मदऊ कथा में मैं भी झूम आता ॥

३६—ख़ुदा ही की इबादत जिनको मक़सूद अय अक़बर ।

वो क्यों बाहम लड़ें गो फ़र्क़ हो तरज़े-इबादत में ॥

३७—आता है वज्द मुझको हर दीन की अदा पर ।

मसज़िद में नाचता हूँ नाक़ूस की सदा पर ॥

शब्दार्थ : वज्द आना—प्रेम में तन्मय हो जाना, दीन—धर्म, नाक़ूस—शख ।



८—विभिन्न

१—चला जाता था एक नन्हा सा कीड़ा रात काग़ज़ पर ।
 बिला क़स्दे-ज़रर उसको हटाया मैंने उंगली से ॥१॥
 मगर ऐसा वो नाजुक था कि क़ौरन पिस गया बिल्कुल ।
 निहायत ही ख़क़ीफ़ एक दाग़ काग़ज़ पर रहा उसका ॥२॥
 अभी वो रोशनी में शमश्रु की काग़ज़ पै फिरता था ।
 अभी यूँ मिट गया जंबिशे-अंगुशते-इन्सां से ॥३॥
 लिया मेरे सिवा नोटिस ही किसने उसका दुनिया में ।
 थी फ़ितरत की क्या कारीगरी उसके बनाने में ॥४॥
 नसबनामा भी उसका आलमे-ज़र्रात में होगा ।
 यही थी उसकी हस्ती और उसमें उसकी मस्ती थी ॥५॥
 न मातम करने वाला है न लाइफ़ लिखने वाला है ।
 वो धब्बा-दर्से-इबरत दे रहा है मुझको अय अकबर ॥६॥
 मश्राज़ अल्लाह क्या समझा है तूने अपनी वक्रश्रुत को ।
 मुझे भी सफ़हे-रुवे-ज़र्मी से एक दिन आख़िर ॥७॥
 मिटा देगी कोई तहरीक फ़ितरते-हुक्मे-बारी से ।
 अजब हैरत से मैं हूँ देखता इस दाग़े-काग़ज़ को ॥८॥
 मेरी नज़रों में नज़शा ये है, दुनियाये पानी का ।
 सरीहून जिस्म था एक जान थी अहसास था उसमें ॥९॥
 और अब धब्बा सा है क्या जाने कोई कैसा धब्बा है ।
 अजब क्या है जो समझे कोई पेन्सिल की लकीर इसको ॥१०॥

मअज़ अल्लाह मअज़ अल्लाह सन्नाटे का आलम है ।

बहुत जी चाहता है रोऊँ इस हस्ती के धब्बे पर ॥११॥

ये हैं बरसात के दिन तीसरी भादों गुज़रती है ।

मैं अपना ग़म ग़लत करता हूँ कुछ अशआर लिखने से ॥१२॥

शब्दार्थ : कस्दे-ज़रर—नुक़सान पहुँचाने का इरादा, ख़फीफ़—छोटा, जंबिशे-अंगुष्ठे-इन्सां—आदमी की उंगली की हरकत, फ़ितरत—प्रकृति, नसबनामा—वंशावलि, ज़रात, कण, हस्ती—अस्तित्व, लाइफ़—जीवन-चरित्र, दर्स—शिक्षा, मअज़ अल्लाह—ईश्वर की शरण, सरी-हन—साफ़ तौर से, अहसास—अनुभव करने की शक्ति ।

२—मेरी चश्म क्यों न हो खूफ़शां न रही वो बज़म न वो समा ।

न वो तर्ज़े-गर्दिशे-चर्ख है न वो रंगे-लैलो निहार है ॥१॥

जहाँ क़ल था गुलगुलये-तर्ब वहाँ आज है ये ग़ज़ब ।

कहीं एक मकां है गिरा हुआ कहीं एक शक्तिता मज़ार है ॥२॥

ग़मो-यासो-हसरतो-बेकसी की हवा कुछ ऐसी है चल रही ।

न दिलों में अब वो उमंग है न तबियत में उभार है ॥३॥

हुये मुझ पै जो सितमे-फ़लक कहूँ किससे उसको कहूँ तलक ।

न मुसीबतों की है कोई हद न मेरे ग़मों का शुमार है ॥४॥

मेरा सीना दाग़ों से है भरा मेरे दिल को देखिये तो ज़रा ।

ये शहीदे-इश्क़ की है लहद पड़ा जिस पै फूलों का हार है ॥५॥

मैं समझ गया वो है बेवफ़ा मगर उनकी राह में हूँ फ़िदा ।

मुझे ज़ाक़ में वो मिला चुके मगर अब भी दिल में गुबार है ॥६॥

शब्दार्थ : खूफ़शां—लोहू से भरी हुई, बज़म—सभा, चर्ख—आकाश, लैलो निहार—रात दिन, गुलगुलयेतर्ब—खुशी का शोर, शक्तिता—जीर्ण, मज़ार—क़ब्र, यास—निराशा, शहीदे इश्क़—प्रेम के मार्ग में जान खोने वाला, लहद—क़ब्र ।

३—बन पड़े तो किबला ही बनना मुनासिब है तुझे ।

दिक्क़तों में वो फँसा जो स्क्वायर हो गया ॥१॥

दीदनी है ये तमाशाये-मशीने-इन्क़लाब ।
 बाप तो क़िबला थे बेटा स्ववायर हो गया ॥२॥
 तख़लिये में आज मैंने उनका बोसा ले लिया ।
 देखिये डिगरी जो हो दावा तो दायर हो गया ॥३॥
 अब तो मुझको भी मुनासिब कि पटवारी बनूँ ।
 यार को शौक़े-सिहाबे-मालो-सायर हो गया ॥४॥
 क्रिके-दुनिया ने भुलाया सब कुरानो-हदीस ।
 मौलवी भी महवे-क़ानूनो नज़ायर हो गया ॥५॥

शब्दार्थ : क़िबला—प्राचीन सभ्यता के अनुसार प्रतिष्ठित, स्ववायर—
 —अंग्रेज़ी सभ्यता के अनुसार प्रतिष्ठित, दीदनी—दर्शनीय, इन्क़लाब—
 परिवर्तन, तख़लिया—एकान्त, हदीस—मुसलमानों की धार्मिक पुस्तक,
 नज़ायर—मुक़दमों के दृष्टान्त ।

४—अकबर न थमा बुतख़ाने में,
 ज़हमत भी हुई और ज़र भी गया ।
 कुछ नामे खुदा से उन्स भी था,
 कुछ जुल्मे-बुतां से डर भी गया ॥ १ ॥
 परवाने का हाल इस महफ़िल में,
 है काबिले-रशक अय अहले-नज़र ।
 एक शब ही में पैदा भी हुआ,
 आशिक़ भी हुआ और मर भी गया ॥ २ ॥
 काबे से जो बुत निकले तो क्या,
 काबा ही गया जब दिल से निकल ।
 अफ़सोस कि बुत भी हम से छुटे,
 क़ब्ज़े से खुदा का घर भी गया ॥ ३ ॥
 क्या गुज़री जो एक परदे के अदू,
 रो रो के पुलिस से कहते थे ।

इज्जत भी गई दौलत भी गई,
 बीबी भी गई ज़ेवर भी गया ॥ ४ ॥
 अकबर के मर जाने की खबर,
 साक़ी ने सुनी तो खूब कहा ।
 मरना तो ज़रूरी था ही उसे,
 रिन्दों के लिये कुछ कर भी गया ॥ ५ ॥

शब्दार्थ : जहमत—कष्ट, उन्स—प्रेम, अदू—दुश्मन ।

४—सखुनशनास से मैं चाहता हूँ दादे-सखुन ।
 खुशी के वास्ते काफी हैं मुझको वाह फ़क़्त ॥ १ ॥
 सोसायटी नहीं मिलती कि जिससे दिल बहले ।
 जो कोई मूनिसो-हमदम है अब तो आइ फ़क़्त ॥ २ ॥

शब्दार्थ : सखुनशनास—काव्य मर्मज्ञ, दादे-सखुन—काव्य की प्रशंसा,
 मूनिस—आराम देने वाला ।

६—शर्फ़ है जुबबये-बैरिस्टरी से जिनको यहाँ ।
 मुक़दमों ही की वो देखते हैं राह फ़क़्त ॥ १ ॥
 बयाजे-शेर से मतलब नहीं किलरकों को ।
 रजिस्ट्रों ही को करते हैं वो स्याह फ़क़्त ॥ २ ॥

शब्दार्थ : शर्फ़—मान, जुबबये बैरिस्ट्री—बैरिस्ट्री की पोशाक, बयाजे-
 शेर—शेर लिखने की कापी ।

७—गुज़र की जब न हो सूरत गुज़र जाना ही बहतर है ।
 हुई जब ज़िन्दगी दुश्वार मर जाना ही बहतर है ॥ १ ॥
 रहे इस्लाह में गो तेज़गामी खूब है लेकिन ।
 कदम को लज़ज़िशें जब हों ठहर जाना ही बहतर है ॥ २ ॥
 मवाके देख कर इज़हारे मरदी चाहिये अब दिल ।
 डरायें खेल में बच्चे तो डर जाना ही बहतर है ॥ ३ ॥

बिठाया है तुतों ने बड़म में जब अपना ही सिक्का ।
जो हैं अल्लाहवाले उनको उठ जाना ही बहतर है ॥ ४ ॥
बुलाता है मुझे बुतखाने से शेखे-हरम अकबर ।
न जाना गोकि जा है मगर जाना ही बहतर है ॥ ५ ॥

शब्दार्थ : इस्लाह—सुधार, तेजगामी—तेज चाल, लगजिशें—ओकरें,
मवाके—अवसर, जायज—ठीक ।

८—ज़बाने-संस्कृत इस वक्त पण्डित जी से कहती है ।

कि अच्छा है मेरी उलफ़त तुम्हारे दिल में रहती है ॥ १ ॥
मैं खुशी हूँगी बिलाशक तुम अगर मुझको जिलाओगे ।
मगर हिसकी पिलावोगे कि गङ्गा-जल पिलाओगे ॥ २ ॥
जिऊंगी मैं कि फिर तुसको मिलाऊं देवताओं से ।
भिड़ाओगे मुझी को या कि दुनिया की बलाओं से ॥ ३ ॥
अगर शौके-इबादत है तो मैं मौजूद हूँ अब भी ।
अगर दुनिया का सौदा है तो कब मैं इस से राज़ी थी ॥ ४ ॥

शब्दार्थ : इबादत—पूजना ।

९—ज़न ज़मीं ज़र तो है फ़साद का घर ।

लेकिन इतना कहूँगा अय अकबर ॥ १ ॥
ज़न मनकूहा वो शरीफ़ो-ग़रीब ।
क्या अजब है जो करे अमन नसीब ॥ २ ॥
हो जो बस आमदे-ज़रे-तनख़्वाह ।
तो नहीं हाजिते-वकीलो-गवाह ॥ ३ ॥
हो जो थोड़ी सी बाग़ ही की ज़मीं ।
तो कलक्टर का डर ज़ियादह नहीं ॥ ४ ॥

शब्दार्थ : ज़न—स्त्री, ज़मीं—भूमि, ज़र-द्रव्य, फ़साद—भगड़ा, मन-
कूहा—विवाहित ।

१०— निगरानिबे-मराहिल कभी ऐसी तो न थी,
 तुन्द मौज लबे-साहिल कभी ऐसी तो न थी ।
 बदगुमानी तेरी कातिल कभी ऐसी तो न थी,
 बात करनी मुझे मुश्किल कभी ऐसी तो न थी ॥
 जैसी अब है तेरी महफिल कभी ऐसी तो न थी ॥ १ ॥
 करती है खल्क को लैलाये-लिबर्टी^१ मफतू,
 हिन्द के दिल को लुभा लेता है मिल^२ का ये फसू ।
 लाजपत भी हुए शायद कि असीरो-महजू,
 पाय-कोवां कोई जिन्दां में नया है मजनू ॥
 आती आवाज़े सलासिल कभी ऐसी तो न थी ॥ २ ॥
 पेशतर इस से तबायअ के न थे ये पहलू,
 कहीं स्नान की लहर कहीं मौजे वजू ।
 अय मिसे-कममिन माहे-जर्बी वो गुलरू,
 तेरी आँखों ने खुदा जाने क्या किया जादू ॥
 कि तबियत मेरी मायल कभी ऐसी तो न थी ॥ ३ ॥

शब्दार्थ : निगरानी—देख-रेख, महफिल—मरहला (मञ्जिल) का बहुवचन, लबे-साहिल—किनारे पर, खल्क—संसार, लिबर्टी—स्वाधीनता, मफतू—मोहित, मिल—लिबर्टी आदि पुस्तकों के रचयिता इंग्लैंड के प्रसिद्ध दार्शनिक स्टुअर्ट मिल, फसू—जादू, पाय कोवां—पांव काटने वाला, सलासिल—जञ्जार ।

११— गये बिरहमन के पास लेकर,
 अपने ऋगढ़े की शीआ सुन्नी ।
 बिगड़ के बोला कि जाओ भागो,
 मलेच तुम भी मलेच वो भी ॥ १ ॥

बढ़ी जो तकरार तो वे लेकर,
 उन्हें फिरङ्गी के पास पहुँचा ।
 वो बोला बस दूर हो यहाँ से,
 कि तुम भी नेटिव हो वो भी नेटिव ॥२॥
 फलक ने आखिर हरेक की सुन कर,
 कहा कि तुम सब हो मस्ते-ग़ललत ।
 समझलो इस को कि तुम भी फ़ानी हो,
 वो भी फ़ानी है ये भी फ़ानी ॥३॥

१२—कालिज में हो चुका जब इम्तहां हमारा ।
 सीखा ज़बां ने कहना हिन्दोस्तां हमारा ॥ १ ॥
 रक़्बे को कम समझ कर अकबर ये बोल उट्टे ।
 हिन्दोस्तान कैसा सारा जहां हमारा ॥ २ ॥
 लेकिन ये सब ग़ललत है कहना यही है लाज़िम ।
 जो कुछ है सब खुदा का वहमो-गुमां हमारा ॥ ३ ॥

१३—गुल फैंके हैं यूरुप की तरफ़ बल्कि समर भी ।
 अथ नेचरो-साइन्स^१ भला कुछ तो इधर भी ॥ १ ॥
 अग़यार तो दुनिया है उठाये हुए सर पर ।
 हम बैठे हैं इस तरह कि उठता नहीं सर भी ॥ २ ॥
 अग़यार तो रग रग से हमारी हुए वाक्किफ़ ।
 हम वो हैं कि पाते नहीं उस बुत की कमर भी ॥ ३ ॥

१४—सोचो कि आगे चल कर किस्मत में क्या लिखा है ।
 देखो घरों में क्या था और आज क्या रहा है ॥ १ ॥
 हुशियार रहके पढ़ना इस जाल में न पढ़ना ।
 यूरुप ने ये किया है यूरोप ने वो किया है ॥ २ ॥

१५—आनरो^१-दौलत में खुद वाइज़ है गर्क ।

दूसरों पर नुकतेचीनी की तो क्या ॥ ३ ॥

बज़में-साक्री की कहां वो मस्तियां ।

छुप के अकबर ने अगर पी भी तो क्या ॥ ४ ॥

शब्दार्थ : आनर—मान, वाइज़—धर्मोपदेशक, गर्क—डूबा हुआ, नुकतेचीनी—दोषान्वेषण ।

१६—ग़लत फ़हमी बहुत है आलमे-अलफ़ाज़ में अकबर ।

बड़ी मायूसियों के साथ अक्सर काम चलता है ॥ १ ॥

ये रोशन है कि परवाना है उसका आशिक़े-सादिक़ ।

मगर कहती है ख़लक़त शमअ से परवाना जलता है ॥ २ ॥

१७—जो हमको बुरा कहते हैं माज़ूर हैं अकबर ।

हक़ ये है हम भी उन्हें अच्छा नहीं कहते ॥ १ ॥

हम हज़रते-ईसा का अदब करते हैं बेहद ।

लेकिन उन्हें अल्लाह का बेटा नहीं कहते ॥ २ ॥

शब्दार्थ : माज़ूर—मजबूर, हक़—वास्तविकता ।

१८—या हमीटेशन^२ के सदक़े चाय दूध और खांड ले ।

या एजीटेशन^३ के बदले तू चला जा मांडले ॥ १ ॥

या क़नाअत और ताअत में बसर कर ज़िन्दगी ।

रिजक की किशती को खे पतवार ले और डांड ले ॥ २ ॥

१९—बुते-सितमगर की कुछ न पूछो,

हसीन भी है ज़हीन भी है ।

नहीं है दिल ही पै सिर्फ़ आक्रत,

यहाँ तो ख़तरे में दोन भी है ॥ १ ॥

हमारे भगदों की कुछ न पूछो,
तमाम दुनिया है और हम हैं ।
कि जेब में ज़र है घर में ज़न है,
खिराज पर कुछ ज़प्रीन भी है ॥ २ ॥

शब्दार्थ : ज़र—रुपया, ज़न—स्त्री ।

२०—ज़िन्दगी को ज़रूर है एक शगल ।
ख़ैर बिलक़ेल लीडरी ही सही ॥ १ ॥
अब तो अकबर बसा है गंगा तीर ।
न हो स्नान दिखली ही सही ॥ २ ॥

२१—मेरे तरज़े-फुग़ां की बुलहविस तकलीद करते हैं ।
ख़िजल होंगे असर की भी अगर उम्मीद करते हैं ॥ १ ॥
जहाँ के इनक़लाबों के भी क्या क्या रंग होते हैं ।
बशर की क्या हक़ीक़त है फ़रिश्ते दंग होते हैं ॥ २ ॥

शब्दार्थ : तरज़े फुग़ां—रोने-चिल्लाने का ढंग, तकलीद—अनुमान,
ख़िजल—लज्जित, इनक़लाब—परिवर्तन, बशर—मनुष्य ।

२२—तआल्ली की नहीं लेते हम ऐसे हैं हम ऐसे हैं ।
मगर हम जितने हैं बेज़ार दुनिया से कम ऐसे हैं ॥ १ ॥
मेरी हर वक्त की अफ़सुदर्गी है बार यारों पर ।
मगर मैं क्या करूँ इसको खुदा शाहिद ग़म ऐसे हैं ॥ २ ॥

शब्दार्थ : तआल्ली की लेना—बढ़ा कर बात कहना, बेज़ार—
नाराज़, अफ़सुदर्गी—आकुलता, बार—बोझ, शाहिद—गवाह ।

२३—यूरुप वाले जो चाहें दिल में भर दें ।
जिसके सिर पर चाहें तोहमत धर दें ॥ १ ॥
बचते रहो इनकी तेजियों से अकबर ।
तुम क्या हो खुदा के तीन टुकड़े कर दें ॥ २ ॥

२४—अगरचे आशिक्र बुतों का हूं मैं,
 नज़र खुदा से फिरी नहीं है ।
 जो आँख रखते हैं जानते हैं,
 कि आशिक्री काफ़िरी नहीं है ॥१॥
 जमाले दिलकश का मह्व होना,
 नहीं है हरगिज़ ख़िलाफ़े-ताअ़त ।
 खुदा की कुदरत की क़द्र करना,
 सवाब है काफ़िरी नहीं है ॥२॥

शब्दार्थ : जमाले दिलकश—चित्ताकर्षक सौन्दर्य, मह्व—लवलीन,
 ताअ़त—आज्ञा, सवाब—पुण्य ।

२५—लुफ़्त चाहो एक बुते-नौख़ेज़ को राज़ी करो ।
 नौकरी चाहो किसी अंग्रेज़ को राज़ी करो ॥१॥
 लीडरी चाहो लफ़्ज़े-क्रौम है महमानवाज़ ।
 गपनवीसों को और अहले-मेज़ को राज़ी करो ॥२॥

२६—असबाते-खुदा को मन्तिकी उठ न सका ।
 ख़ाके-हैरत से ज़हन ही उठ न सका ॥१॥
 अल्लाह रे नज़ाकते-वजूदे-बारी ।
 साबित होने का बार भी उठ न सका ॥२॥

शब्दार्थ : असबाते खुदा—ईश्वर का अस्तित्व, मन्तिकी—ताकिक,
 हैरत—आश्चर्य, वजूदे बारी—ईश्वर का अस्तित्व, बार—बोझ ।

२७—अपनी हस्ती जो हिजाबे-रुखे-जानां न रहे ।
 बां रहें हम कि जहाँ फिर कोई अरमां न रहे ॥१॥
 सूरते-यार जो सौ परदों में पिन्हां न रहे ।
 बहस फिर तुझ में ये अय गबरो-मुसलमां न रहे ॥२॥

२८—ज़माने-हाल में अगले फ़साने अमरे-माज़ी हैं ।
 जो तलवारें चलाते थे वो अब ठोकर पै राजी हैं ॥१॥

शराब उड़ती है पब्लिक में रवा है खून तक्रवे का ।

मज़ा है अब तो रिन्दों का न मुफ्ती है न क्राज़ी हैं ॥२॥

२६—हर गाम पै चन्द निगरां,

हर मोड़ पै एक लैसन्स तलक ।

उस पार्क में आखिर अय अकबर,

मैंने तो टहलना छोड़ दिया ॥१॥

उस दूरे-लक़ा को घर लाये हो,

तुम को मुबारिक अय अकबर ।

लेकिन ये क्रयामत की तुमने,

घर से जो निकलना छोड़ दिया ॥२॥

३०—अल्लाह रे इनक़लाबे-तरजो-मज़ाके-मशरिक ।

हाफिज के शेर कैसे सब पढ़ रहे हैं रीडर^१ ॥१॥

लैली का नमज रुख़सत स्कूल मिस्टरस^२ है ।

सौदाये-क़ैस ग़ायब अब वो बने है लीडर^३ ॥२॥

शब्दार्थ : इनक़लाब—परिवर्तन, सौदाये-क़ैस—मजदूर का पागलपन ।

३१—वो शरारत से सरे शाम आते हैं ।

ये दिखाना है कि शैरों पयाम आते हैं ॥१॥

बाज कालिज में जो कह आते हैं अक्सर अकबर ।

क्या ये गिरती हुई दीवार को थाम आते हैं ॥२॥

३२—क़दम अंग्रेज कलकत्ते से दिल्ली में जो धरते हैं ।

तिजारत खूब की अब देखें शाही कैसी करते हैं ॥

३३—ताकीदे-इबादत पै अब ये कहते हैं लड़के ।

पीरी में भी अकबर की जराक़त नहीं जाती ॥

शब्दार्थ : पीरी—बुढ़ापा, जराफत—हास्य ।

३४—हरीक्रीं ने रपट लिखवाई है जा जा के थाने में ।

कि अकबर जिक्र करता है खुदा का इस जमाने में ॥

शब्दार्थ : हरीफ़—दुस्मन ।

३५—दिल की बाक़ी नहीं अय दोस्त मजामी कैसे ।

आप मोती के तलबगार हैं दरया भी तो हो ॥

३६—आशिक़ की तबअ लाखों ही मौजों में है रवां ।

अलफ़ाज कर न सकेंगे उसका मुहासरा ॥

शब्दार्थ : रवां—बहती हुई, मुहासरा—घेरा ।

३७—इन बुतों के बाब में इतनी ही मेरी अर्ज है ।

कुफ़्र है इनकी परस्तिश प्यार करना फ़र्ज है ॥

३८—कब मैं कहता हूँ अलग हो सारा किस्सा छोड़ कर ।

कर तलब दुनिया मगर साहब का हिस्सा छोड़ कर ॥

शब्दार्थ : तलब—याचना ।

३९—फुरक़ते-यार में जीने का सहारा क्या था ।

ख़ूब थी मौत सिवा मौत के चारा क्या था ॥

४०—जहाँ सूई घड़ी की होती थी वक्त् उसको कहते थे ।

गई चोरी तो हम समझे जमाना इसको कहते हैं ॥

४१—गोशये-मसजिद में कारे-शेख़ अब बनता नहीं ।

पेट गो तिस्कीन पाजाय मगर तनता नहीं ॥

शब्दार्थ : गोश—कोना, कार—काम, तिस्कीन—तसल्ली ।

४२—सनद कैसी जमाल उनमें अगर है होगा खुद जाहिर ।

कोई सर्टिफिकेट से ख़ूबसूरत हो नहीं सकता ॥

शब्दार्थ : जमाल—सौन्दर्य ।

४३—बुतों के नाज़ पर इस अहद में लाजिम है ख़ामोशी ।

बुरा कहते हैं हम उनको दस अच्छा भी कहते हैं ॥

- ४४—खुला दीवां मेरा तो शोरे-तहसीं बज्म में उट्टा ।
मगर सब हो गये ख़ामोश जब मतबे का बिल आया ॥
शब्दार्थ : शोरे तहसीं—प्रशंसा का शोर, मतबा—प्रेस ।
- ४५—हम ऐसी कुल किताबें काबिले-ज़बती समझते हैं ।
कि जिनको पढ़के लड़के बाप को ख़बती समझते हैं ॥
शब्दार्थ : मौतरिज़—आक्षेप करने वाला ।
- ४६—दाद दे रफ्तार की सुस्ती पै क्या है मौतरिज़ ।
आबला है पाँव में और आबले में जख्म है ॥
शब्दार्थ : मौतरिज़—आक्षेप करने वाला ।
- ४७—तुम से उस्तादों में मेरी शाइरी बेकार है ।
साथ सारंगी का बुलबुल के लिये दुशवार है ॥
- ४८—ये परचा जिसमें चन्द अशआर हैं इरसाले-ख़िदमत है ।
हमारे लख्ते-दिल हैं आप क माल तज्जारत है ॥
शब्दार्थ : इरसाले-खिदमत है—सेवा में भेजता हूँ, लख्तेदिल—
दिल के टुकड़े ।
- ४९—बने बन्दर से हम इन्सां तरक्की इसको कहते हैं ।
तरक्की पर भी नेटिव बदनसीबी इसको कहते हैं ॥
- ५०—दावत भी बहुत खूब है अहबाब की ख़ातिर ।
लेकिन जो 'एडीटर' हो तो मज़मून है अच्छा ॥
शब्दार्थ : अहबाब—मित्रगण ।
- ५१—मवरिख और सूफी में यही है फ़र्क अय अकबर ।
कि वो मसरूफे माज़ी हैं और इसको हाल आता है ॥
शब्दार्थ : मवरिख—इतिहास-लेखक, माज़ी—भूत, हाल—ईश्वर
प्रेम में तन्मय हो जाना, इस शब्द का अर्थ वर्तमान भी है ।
- ५२—गुनाहों से न बाज आयेगी और बस्ती से भागेगी ।
जहन्नुम के सिवा ताऊन से ये कौम डरती है ॥

- ५३—वो कभी मुझको जवाबे-नामा लिखता ही नहीं ।
जब गिला करता हूँ कह देता है पहुँचा ही नहीं ॥
शब्दार्थ : जवाबेनामा—पत्र का उत्तर, गिला—शिकायत ।
- ५४—उनके हुस्न अपनी ज़रूरत पै नज़र करते हैं ।
गो खुशामद है ख़री चीज़ मगर करते हैं ॥
- ५५—जलवये-रफतार-जानां है नमूना हश्र का ।
हक बजानिब है जो है जाहिद को धड़का हश्र का ॥
- ५६—किस्मत का नाम लेकर अब भी गिला है जायज़ ।
लेकिन उसी को बी० ए० एम० ए० जो हो चुका हो ॥
- ५७—ये न पूछो मुझसे ये क्यों है और ऐसा क्यों नहीं ।
शेख़ ये सोचो तुम्हारे पास पैसा क्यों नहीं ॥
- ५८—वो मनाने में भी बनाते हैं ।
कहते हैं मान जावो मनसा राम ॥
- ५९—मैं बहुत अच्छा हूँ जी हाँ कद्रदानी आपकी ।
गैर पर फिर क्यों है इतनी मेहरबानी आपकी ॥
- ६०—हम क्या कहें अहबाब क्या कारे-नुमायां कर गये ।
बी०ए० हुये नौकर हुये पेन्शन मिली फिर मर गये ॥
शब्दार्थ : कारे-नुमायां—उल्लेखनीय कार्य ।
- ६१—काफी अगरचे लेटने को एक पलंग है ।
अंगड़ाइयों को अरज़े-दुनिया भी तंग है ॥
- ६२—क्योंकर न शेर-अकबर आये पसन्द सब को ।
ये रंग ही नया है कूचा ही दूसरा है ॥

गांधीनामा

—:०:—

दौरे^१-गदू^२ में नया हर रोज एक हन्गामा^३ है ।
शाहनामा हो चुका अब दौरे-गान्धी नामा है ॥

बहुत से मनुष्य असहयोग के सिद्धान्त पर चलने में अपनी असमर्थता दिखाते हुए कहते हैं—

जाहो^४ ज़र^५ के रहे इङ्गलिश से हमेशा तालिब^६ ।
अहदे^७ पीरी^८ में बदल सकते हैं क्योंकिर क़ालिब^९ ॥
मुश्तहिर^{१०} कर दें ये 'हमदम'^{११} में जनाबे-'जालिब'^{१२} ।
उम्र भर दिल पै रहा इश्क़ मिसों का ग़ालिब ॥
आग़िरी वक्त में क्या खाक मुसल्मां होंगे ।
कूचये^{१३}-सरविसे^{१४}-इङ्गलिश में रहे हम साकिन ॥
जाहो-ज़र ही की तमन्ना में कटे ज़िस्त के दिन ।
वाज़े^{१५}-गान्धी से बदल सकते हैं क्योंकिर बातिन ॥

१. चक्कर, २. आकाश, ३. भगड़ा, ४. फ़ारसी की प्रसिद्ध पुस्तक जिसमें फ़ारस के बादशाहों का वृत्तान्त है, ५. ऐश्वर्य, ६. धन, ७. इच्छुक, ८. समय, ९. बुढ़ापा, १०. शरीर, ११. प्रकाशित, १२. उर्दू का साप्ताहिक पत्र, १३. 'हमदम' सम्पादक, १४. मौहल्ला, १५. नौकरी, १६. रहने वाले ।

उम्र सारी तो कटी इश्क़े-बुतां में 'मौमिन' ।

आख़िरी वक्त में क्या खाक मुसल्मां होंगे ॥

एक महाशय कहते हैं—

ये दाल लबे गङ्ग कभी गल नहीं सकती ।

कल्लू के पटाखे से बला टल नहीं सकती ॥

कतिपय सज्जन महात्मा गांधी के इस उपदेश पर हँसते हैं—

न साहब को मारो न साहब से भागो ।

मचाते रहो गुल पिटो और मांगो ॥

कोई कवि कहता है—

तहमद और धोती बहुत तङ्ग आई थी पतलून से ।

लेकिन अब पतलून ढीली है इसी मज़मून से ॥

किन्तु सम्भव यह है—

अंग्रेज़ क़वी^१ भी हैं सरफ़ग़ज़^२ भी हैं ।

तदबीरो-इल्मोफ़न में मुमताज़^३ भी हैं ॥

बाबू को नचा दिया जो चाबी देकर ।

इससे ये खुला कि दिल्लीगीबाज़ भी हैं ॥

कुछ लोग असहयोग के सिद्धान्त को व्यर्थ समझते हैं—

चरमे^४-शार्डर में बहुत दिलकश^५ है गो वो भी मगर ।

आपकी आँखों के आगे ज़िक्रे-नरगिस^६ क्या करे ॥

ज़ोरे-बाजू जब नहीं है जब नहीं तेगो^७-तुफ़्फ़ंग^८ ।

सरनगू^९ ख़ामे^{१०} से फिर काग़ज़ पै घिस-घिस क्या करें ॥

१. बलवान, २. सुविख्यात, ३. ऊँचे दर्जे पर, ४. आँख,
५. चित्ताकर्षक, ६. एक फूल का नाम, ७. तलवार, ८. बन्दूक,
९. नीचे किये हुए, १०. लेखनी ।

परिशिष्ट

- १—सितम की कामयाबी पर मुबारकवाद देता हूँ ।
यह उनकी बदगुमानी है, कि क्रूरियादी समझते हैं ॥
- २—दैरो हरम भी कूचये जानों में आये थे ।
पर शुक्र है, कि बढ़ गये दामन बचाके हम ॥
- ३—दिल लिया है हमसे जिसने दिल्लगी के वास्ते ।
क्या तश्वाज्जुब है जो तक्ररीन हमारी जान ले ॥
- ४—यही बातें हैं जिनकी याद तड़पा देती है दिल को ।
मेरा अँगड़ाइयों लेना और उस ज़ालिम का डर जाना ॥
- ५—कहा जो मैंने कि “दिल चाहता है प्यार करूँ” ।
तो मुस्कराके वह कहने लगे कि “प्यार के बाद” ॥
- ६—जो कहा मैंने कि “प्यार आता है मुझको तुम पर” ।
हँस के कहने लगे “और आपको आता क्या है” ॥
- ७—मुझी को सब यह कहते हैं, कि रख नीची नज़र अपनी ।
कोई उनको नहीं कहता, न निकलो यूँ अर्यों होकर ॥
- ८—मैंने कहा जो उससे ठुकरा के चल न ज़ालिम ।
हैरत में आकर बोला “क्या आप जी रहे हैं” ॥
- ९—मुस्लिम का मियौपन सोखत करो, हिन्दु की भी ठकराई न रहे ।
बन जाओ हर इक के बाप यहाँ, दावे को कोई भाई न रहे ॥
हम आपके क्रन के गाहक हों, ख़दाम हमारे हों ग़ायब ।
सब काम मशीनों ही से चले, धोबी न रहे नाई न रहे ॥

१०—साइंस तुमने जाना और उसको भी पढ़ाया,
 दौलत उड़ाई तुमने और इनसे गप उड़ाई ।
 तुमने तो माल मारा और खोल दी तिजारत,
 ये तरजुमों में उलझा बस दास्तों सुनाई ।
 तुम मुत्तहिद हुए और दिखलाई अपनी कूवत,
 इसने सल्फ को रौंदा आपस में की लड़ाई ।
 तुमने निगाह रक्खा कुल अपने ज़ाबतों को,
 इस बेअदब ने सीखी बेदीनी और ठिठाई ।
 ये बरकतें तुम्हारी तालीम की बलायें,
 मारा तरकिक्यों ने अल्लाह की दुहाई ॥

शब्दार्थ : मुत्तहिद—संगठित ।

११—क्रक था अपनी चमक पर आप को ।
 दो ही सदयों में मुलम्मा खुल गया ॥
 बिलबिला उठी रिआया हर तरफ ।
 अर्श वो कुर्सी तक फुगा का गुल गया ॥
 भाग निकले लोग होकर बेक्रार ।
 कोई अमरीका कोई काबुल गया ॥
 इस क्रदर तेज़ी से दौड़ी इनकी लहर ।
 था जो मसनुई मसाला धुल गया ॥

शब्दार्थ : फुगा—आवाज़ ।

१२—माना कि जो हुआ वो होना ही चाहिए था ।
 लेकिन जो रो दिया मैं रोना ही चाहिए था ॥
 योरुप के जागने पर सादियों नज़र नहीं की ।
 किस्मत को एशिया की सोना ही चाहिए था ॥

उमरे-हरीसे-ज़र क्यों शफलत में कट न जाती ।
 सोने के बदले बेशक सोना ही चाहिए था ॥
 हो या न हो असर कुछ अशके रवां का अक्रबर ।
 शफलत का दाग़ दिल से धोना ही चाहिए था ॥

शब्दार्थ : उमरे-हरीसे-ज़र—धन लोलुप जीवन, अशके रवां—
 आँसू बहाना ।

१३—ये सच है कि इस्लाह मुल्की है फ़र्ज़ ।
 मगर सब से है आज़ीज़ाना ये अर्ज़ ॥
 कि तज़लील वो तौहीने मिल्लत न हो ।
 जुदाई जो हो भी अदावत न हो ॥

शब्दार्थ : तज़लील—अपमान व निरादर, मिल्लत—कीम, जाति ।

१४—मय फ़रोशी को तो रोक्कूँगा, मैं बागी ही सही ।
 सुर्ख़ पानी से है बहतर, मुझे काला पानी ॥
 १५—न दुनियाँ की मुझे परवाह, न इससे मुझको नफ़रत है ।
 क़नाअत की तो है ताकीद, लेकिन हुबमे ख़िदमत है ॥

१६—ऐब पोशी में रहो, मसरूफ़ कार,
 तानाह वो तश्नी ज़बानी छोड़ दो ।
 पिन्द ही काफी है बाद इसके सकूत,
 गुस्सा और लाठी चलानी छोड़ दो ॥

शब्दार्थ : ऐब पोशी—दोषों को छिपाना, मसरूफ़ कार—लगे रहो,
 ताना वो तश्नी—बुराई करना, पिन्द—नसीहत, सकूत—चुप रहना ।

१७—गरदूँ के सितम देखे, उजड़ा हुआ घर देखा ।
 देखा तो न जाता था नाचार मगर देखा ॥
 अब आँख उठाना ही ईमान की बरबादी ।
 उस बुत की नज़र देखी और उसका असर देखा ॥

तक्रदीर मुखालिफ़ थी तदबीर हुई क़ासिर ।
 मुमकिन था जो कुछ हमसे सब हमने वो कर देखा ॥
 दरिया में रहा डूबा मोती में तब आब आई ।
 बीना हुई आँख उसको जब अशक़ से तर देखा ॥
 इस अहद में ऐ अकबर हम उसको वली समझे ।
 थोड़ा सा भी कि जिसमें अल्लाह का डर देखा ॥
 सद शुक्र मेरी नज़रे बहकी नहीं ऐ अकबर ।
 दुनिया भी बहुत चमकी बुत ने भी सबूर देखा ॥

शब्दार्थ : गरदूँ—आकाश, क़ासिर—विवश, बीना—समाका,
 अशक़—आँसू, अहद—समय ।

१८—छकड़े पै जो चढ़ते थे हैं मोटर पर सवार आज ।
 क्यों इसको समझते नहीं तुम लोग सौराज ॥

शब्दार्थ : सौराज—स्वराज्य ।

१९—ख़ुदा की राह में बेशर्त करते थे सर्रर पहले ।
 मगर अब पूछते हैं, रेलवे इसमें कहाँ तक है ?

२०—मय भी होटल में पियो, चन्दा भी दो मसजिद में ।
 शेख़ भी ख़ुश रहे, शैतान भी बेज़ार न हो ॥

शब्दार्थ : बेज़ार—तंग ।

२१—ऐशका भी ज़ौक़, दींदारी की शोहरत का भी शौक़ ।
 आप म्यूज़िक-हॉल में कुरआन ग़मया कीजिये ॥

२२—हज़ूर अर्ज़ करूँ मैं, जो नागवार न हो ।
 वो ये कि मौत ही, बहतर है जब विकार न हो ॥
 बदल गई हों हवाएँ, तो रोक दिल की तरंग ।
 न पी शराब, अगर मौसमें बहार न हो ॥

लतीक बन जो उठे, सोझे गुम से दरदे ज़िगर ।
न फेर मुँह को कलक से, ज़मी पै बार न हो ॥

शब्दार्थ : विकार—सम्मान ।

२३—धर्म की रख ले ऐ भगवान् तू लाज ।
हमारा हिन्द हो दुनिया का सरताज ॥
हवाएँ फिर वही हों और वही अमन ।
वही गाएँ वही वंशी वही राज ॥

२४—मुझे भी दीजिये अखबार का वर्क कोई ।
मगर वो जिस में दवाओं का इश्तहार न हों ॥
जो हैं शुमार में, कौड़ी के तीन हैं इस वक्त ।
यही है खूब, किसी में मेरा शुमार न हो ॥
गिला ये ज़ब्र का क्यों, कर रहे हो अकबर ।
सकूत ही है, मुनासिब जब इख्तियार न हो ॥

शब्दार्थ : ज़ब्र—अत्याचार, सकूत—खामोशी ।

२५—नहीं हूँ मैं किसी गिनती में पेशे अहले जहाँ ।
खुदा करे कि क़यामत में भी शुमार न हो ॥

२६—कमज़ोर है मेरी सेहत भी, कमज़ोर मेरी बिमारी भी ।
अच्छा जो रहा कुछ कर न सका, बीमार पड़ा तो मर न सका ॥

२७—पहले थे सबजज, हुए अब जज हज़ूर ।
पहले थे सब से मिले, अब हुए सब से दूर ॥
यही गान्धी से कह कर हम तो भागे ।
कदम जमते नहीं साहब के आगे ॥

२८—वो भागे हज़रत गान्धी से कह के ।
मगर से बैर क्यों दरिया में रह के ॥

२९—गान्धी है गऊ आदमी वो बुल तो नहीं है ।

गुजरात ही की बात है काबुल तो नहीं है ॥

कुछ उससे भड़कने की जरूरत तो नहीं है ।

माने हों खतरनाक वो सूरत तो नहीं है ॥

३०—मुकामी खिन्न हैं गान्धी रविस से टल नहीं सकते ।

तुम्हीं वो हो कि सांचे में पूरे ढल नहीं सकते ॥

अनाद अफ़रोज़ हैं नारे क़वत अल्लाह अकबर के ।

हरीक्राने हविस अंग्रेज़ जी से चल नहीं सकते ॥

शब्दार्थ : रविस—मार्ग, अनाद, अफ़रोज़—भगड़ा बढ़ाने वाले ।

३१—लश्करे गान्धी को हथियारों की हाजत कुछ नहीं ।

हाँ मगर वे इन्तहाँ सबो कनाअत चाहिए ॥

शब्दार्थ : लश्कर—फ़ौज, हाजत—जरूरत, कनाअत—सन्तोष ।

३२—नाम में गान्धी के है दिलचस्प ये सिनअत निहाँ ।

अन भी इसमें गाय भी इसमें दही भी घी भी है ॥

शब्दार्थ : सिनअत—कारीगरी, निहाँ—छिपा हुआ ।

३३—मकसूद अगर ये हो अकबर महफूज़ रहो आराम करो ।

मौके के मुताबिक बात कहो ताकत के मुताबिक काम करो ॥

जब क़वत थी सब दावे थे क़वत हुई गुम अब कुछ भी नहीं ।

ताक़त ही के सारे गमज़े थे कमज़ोर का मज़हब कुछ भी नहीं ॥

३४—इतना ही गुज़ारिश करना है, हरएक को एक दिन मरना है ।

ईश्वर की खुशी तो पुन में है, शैतान ही होगा पाप से खुश ॥

बाबू तो प्रेस के अन्दर हैं, और पण्डित महवे मन्दिर हैं ।

भगवान ने जैसा जिसको किया वो पाप से खुश यह जाप से खुश ॥

पुरहोल ये भक-भक मोटर की, है सामअ पर इक बोर गरां ।

वल्लाह हमारे कान तो थे अस्पाने अरब की टाप से खुश ॥

शब्दार्थ : अस्पाने अरब—अरब के घोड़े ।

- ३५—दिल वो है महव हो हरदम तलबे बारी में ।
जिन्दगी वो जो कटे मौत की तैयारी में ॥
हुस्ने इखलाक है दिलदारिये दुनिया करना ।
खतरा जो कुछ है वो दुनियाँ की तलबगारी में ॥
- ३६—अपनी जगह हर इक का अरमाँ निकल रहा है ।
तोपे भी चल रही हैं, जूता भी चल रहा है ॥
लेकिन रहा मैं चुपका दिल में ये बात सोची ।
किस तकवियत पै उठूँ इंजिनियर^१ न मोची ॥
- ३७—सकूँ होता नहीं दिल को, मुरादें बर नहीं आती ।
ये आहे अर्श तक जाती तो हैं, कुछ कर नही आती ॥
शबे ग़म को बसर कर सुबह राहत की उम्मीदों में ।
बलाओं से न डर खामोश रह किस पर नहीं आती ॥
- ३८—शेरे अक़बर लीजिये गान्धी का चरखा लीजिये ।
कीजिये ब्रगेड से हिज़रत मुक्त से चरखा लीजिये ॥
पार्क की खातिर तुम्हें सरू वो सनोवर चाहिये ।
हम को चौके के लिए थोड़ा सा गोबर चाहिये ॥
- ३९—डॉक्टर कह गये हरगिज़ नही फटने का ये पेट ।
सारी दुनियाँ को वो कहते हैं निगल जायेंगे ॥
हम वो लुक़मा हैं के हरगिज़ न पचेंगे उनको ।
मुँह जो इस ज़ैम में मारा है तो पक़तायेंगे ॥
- ४०—सुन लो ये भेद मुश्क़ जो गांधी के साथ है ।
तुम क्या हो सिर्फ पेट हो, वो क्या है हाथ है ॥
- ४१—अब ज़र्रा ज़र्रा अपने सरकज़ से हट रहा है ।
दुनियाँ समट रही है ईमान छट रहा है ॥

है अमन को तनज्जुल तालीम में तरक्की ।
खन्दक भी खुद रही है कालिज भी पट रहा है ॥

४२—जो खून था ज़रूरी हिस्सा दिल वो जिगर का ।
अब और ही रगों में जा जा के बट रहा है ॥
हो या न हो मोसर इस दौरे आसमों पर ।
नामे खुदा तो 'अकबर' मुद्दत से रट रहा है ॥

शब्दार्थ : तनज्जुल—अवनति ।

४३—न टम-टम है न मोटर है न घोड़ा है न हाथी है ।
नमूद उनको मुबारिक बन्दा तो छकड़े का साथी है ॥
शब्दार्थ : नमूद—प्रसिद्ध ।

४४—आगे तुम्हारे रंग किसी का नहीं जमा ।
जय हो तुम्हारी अथ मेरे गांधी महात्मा ॥
लेने के तुम नहीं हो गवर्नमेन्ट की मदद ।
चूरन को क्या जरूर पिपरमेन्ट की मदद ॥

४५—ज़ाजिम ने जुस्मों ज़ोर से मुझ को किया तबाह ।
बाद इस के रहम से मेरी हालत पै की निगाह ॥
पूछा सबब तो उसने बसद नाज़ ये कहा ।
मौका निकालना था मुझे लुफ़् वो रहम का ॥

४६—दे इबाह न दे या दापस ले दाता से लगी है दिल की लगन ।
जो कुछ भी मिला है शुक्र उसका छिन जाये अगर जब भी हैं मगन ॥
जिये रोज़ है ज़ोना जीते हैं अन खाते हैं जल पीते हैं ।
सामने हिफ़ाजत कुछ भी नहीं है पास न अपने सार्ड^१ न गन^२ ॥

शब्दार्थ : सोर्ड—तलवार, गन—तलवार ।

—गांधी तो हमारा भोला है, और शेख ने बदला चोला है ।
देखो तो खुदा क्या करता है, साहब ने भी दफ़्तर खोला है ॥
आनर की पहली बूझी है, हर एक को तसल्ली सूझी है ।
जो चोकर था वो सूजी है, जो मासा था वो तोला है ॥
यारों में रकम अब कटती है, इस वक्त हकूमत बटती है ।
कम्पो से तो ज़लमत हटती है, बे नूर महल्ला टोला है ॥

४८—वो जीस्त क्या कि तमन्नायें तेरी हों बेशर्म ।

हयात यह है तमन्ना के सर पै शर्म भी हो ॥

४९—ज़मीं तो खुद खुदा कर हो गई है कैम्प में शामिल ।

मगर हों आसमों की कुछ पुरानी शान बाकी है ॥

बहुत आरास्ता हमको किया तालीम मगरिब ने ।

बस इतनी ही कसर समझो कि कुछ ईमान बाकी है ॥

सिवाय इसके जो कुछ था, हो गया सरकार में दाखिल ।

खुदा का नाम बाकी है हमारी जान बाकी है ॥

५०—मगरबी तालीम से दिल एशिया का है मलूल ।

कर दिया खलकत को इसने बेतमीज़ वो बे असूल ॥

जो करे अस्लाह उसकी मदद का है मुस्तहक ।

और बातों को बज़ाहिर में समझता हूँ फ़िज़ूल ॥

शब्दार्थ : मगरबी तालीम—पश्चिमी शिक्षा, मलूल—दुखी ।

५१—मकसूद अगर ये हो 'अकबर' महफूज़ रहो आराम करो ।

मौकै के मुताबिक बात कही, ताकत के मुताबिक काम करो ॥

५२—तकलीदे गरब तर्क हबादत पै है ख़मोश ।

बस छेड़ते हैं सूफीये ख़ाना खराब को ॥

मरऊब हो गये हैं वज़ीयत से शेख जी ।

अब सिर्फ़ मने करते हैं देशी शराब को ॥

शब्दार्थ : तकलीदे गरब तर्क—पच्छिम का अनुकरण करना,
मरऊब—प्रभावित ।

५३—इस पर यक्रीन करना दुशवार है कि इन्साँ ।
दुनियाँ को जान भी ले और इसको मुँह लगाये ॥

५४—छोड़ अमेरिका की सैर न जा हाँग काँग तू ।
जो माँगना है तुझ को, खुदा ही से माँग तू ॥

५५—है तरक्की सर्जनों से शहर जब आगिन्दा हो ।
आपरेशन हो चुका हो उस पै जो बाशिन्दा हो ॥

५६—फिदा हो केक पर तुम आप खुद बिस्कुट पै गिरते हो ।
तो फिर क्या बेकरी को मुन्हदिम करने को फिरते हो ॥

शब्दार्थ : मुन्हदिम—ढाना ।

५७—जिम बात को मुफीद समझते हो खुद करो ।
औरों पै इस का बार न इससार से धरो ॥
हालात मुख्तलिफ़ हैं जरा ग़ोच लो यह बात ।
दुश्मन तो चाहते हैं कि आपस में लड़ मरो ॥

शब्दार्थ : बार—भार, इसारार—आग्रह, मुख्तलिफ़—विभिन्न,
विपरीत ।

५८—फलक दबेगा नहीं और ज़मीं हटेगी नहीं ।
बगैर रंजों अलम जिंदगी कटेगी नहीं ॥
उम्मीद ने तो खूब खड़ी की हैं दीवारें ।
ज़माना कहता है ये छत कभी पटेगी नहीं ॥

शब्दार्थ : फलक—आकाश, रंजोअलम—दुख, शोक ।

५९—बागे दुनियाँ में नज़र ग़मनाक होकर रह गई ।
रंग बदले ख़ाक़ ने फिर ख़ाक़ होकर रह गई ॥
दाख़िले स्कूल हो दुख्तर तो कुछ हासिल करे ।
क्या नतीजा सिर्फ़ अगर बेबाक़ होकर रह गई ॥

वो तरकी है कि जो करदे शगुप्रता मिस्से गुल ।

वो कली क्या जो गरेवाँ चाक होकर रह गई ॥

शब्दार्थ : दुस्तर—लट्की, बेबाव—निहर, शगुप्रता मिस्से गुल—
फूल की तरह खिलना ।

६०—है मज़ाक हज़रते वाइज़ सही ।

इनकी झिदमत में बस हतनी अर्ज़ है ॥

ऊँट पर चढ़ना तो सुन्नत है ज़रूर ।

रेल पर चढ़ना मगर अब फ़र्ज है ॥

शब्दार्थ : वाइज़—उपदेशक ।

एक दफा की बात

महार्कव अकबर अपनी प्रसिद्ध से बहुत बचते थे और उन्हें अपनी शोहरत पैदा करने का बिलकुल शौक नहीं था । अनेक बार ऐसा हुआ कि लोगों ने उन्हें बड़े-बड़े जत्तों और सभाओं का प्रधान बनाना चाहा लेकिन उन्होंने स्वीकार नहीं किया ।

एक बार मुस्लिम कालिज के तत्कालीन सैमेटरी नवाब 'बिकारुल-मुल्क' ने उन्हें इस्लामी कांग्रेस का प्रेसिडेंट बनने के लिए निमन्त्रण दिया था किन्तु वे रज़ामन्द नहीं हुए और जवाब में यह शेर लिख भेजा ।

वज़न नामहदूद मीज़ाने नज़र में खूब है ।

नाम की खातिर तरश कर तोला माशे क्यों बने ॥

दीन हक है, आँख जीनत है तमाशा है जहाँ ।

तुम तमाशाई रहो, अकबर तमाशा क्यों बने ॥

